कामरत्न तन्त्रम्

सम्पादक एवं हिन्दी व्याख्याकार

राम कुमार राय

तन्त्र ग्रन्थमाला नं० ४

योगेश्वर श्रीयुत गौरीपुत्र नित्यनाथ विरचितम्

कामरत्न तन्त्रम्

सम्पादक-अनुवादक

राम कुमार राय

प्राच्य प्रकाशन, वाराणसी-२

New Edition : 1989
PRACHYA PRAKASHAN
Post Box No. 2037
Varanasi-221 002
Phone : 44152

All Rights Reserved

No part of this book may be translated or reproduced in any form, by print, photoprint, microfilm or any other means without written permission from the publishers.

Price
Hard Cover Rs. 30.00
Cloth Bound Rs. 35.00

Printed by P. K. Rai At the Anoop Printing Works,
Varanasi–221002

भूमिका

भारतीय विद्याओं के अन्तर्गत तन्त्रशास्त्र एक अनुपम निधि है। इस शास्त्र के आदि प्रणेता भूतभावन देवादि देव महादेव हैं जिन्होंने कलियुग में प्राणियों के अल्प सामार्थ्य को देखकर थोड़े परिश्रम से ही भक्तों की कार्य-सिद्धि के लिये तन्त्रशास्त्र का उपदेश किया था।

तन्त्र में मन्त्र, यन्त्र और औषधि तीनों का प्रयोग होने से अत्यन्त शीघ्र कार्यसिद्धि होती है और इसी कारण तन्त्रशास्त्र की महिमा का सर्वत्र उल्लेख मिलता है। जब कालक्रम से शास्त्र लुप्त हो गये तब बड़े-बड़े सिद्ध योगी और महात्माओं ने तपस्या द्वारा मन्त्रों और यन्त्रों का दर्शन कर उनमें दैवी शक्ति की स्थापना करके चराचर के उपकारार्थ उल्लेख किया। तन्त्रों के आदि आचार्य होने से सब तन्त्र महादेव और महेश्वरी के सम्वाद के रूप में ही मिलते हैं। सिद्ध योगियों ने अपनी तपस्या के प्रभाव से महादेव और महेश्वरी के इस सम्वाद को जानकर अपने ग्रन्थों में उसे यथावत लिखा है।

ऐसे ही सिद्ध योगियों में एक येगेश्वर गौरीपुत्र नित्यनाथजी भी हुये हैं जिन्होंने परम अद्भुत इस 'कामरत्न' नामक तन्त्र का निर्माण किया था। लोकोपकार की दृष्टि से यह ग्रन्थ अद्वितीय है। संसार में मारण, मोहन, उच्चाटन, विद्वेषण, वशीकरण और स्तम्भनादि जो षटकर्म हैं उनकी विधि तो इस तन्त्र में विस्तार से लिखी ही गई है, साथ ही इसमें सर्वव्याधि चिकित्सा और यन्त्रमन्त्रादि का प्रयोग भी विस्तार से वर्णित है। इसकी सर्वाधिक विशिष्टता यह है कि जहाँ षटकर्मों के प्रयोग का उल्लेख है वहीं प्रत्येक कर्म के निवारण का उपाय भी वर्णित है। अतः एक ओर जहाँ किसी के विरुद्ध इन कर्मों का प्रयोग किया जा सकता है वहीं साध्य द्वारा इन कर्मों का निराकरण भी सम्भव है। इस दृष्टि से यह तन्त्र अत्यन्त उपयोगी है। इनके अतिरिक्त इसमें अनेक ऐसे प्रयोग मिलते हैं जिनका दैनिक जीवन में पर्याप्त महत्त्व है जैसे : शस्यवृद्धि, गोदुग्धवृद्धि, पुंसवन, सुखप्रसव, सर्पादि विषनिवारण इत्यादि। अपनी इन विशिष्टताओं के कारण कामरत्न तन्त्र अद्वितीय और सर्वसाधारण के लिये अत्यन्त उपयोगी है।

देश, काल, पात्र, राशि, मुहूर्त, योग इन सब का विचार करके तन्त्र, मन्त्र, यन्त्र पूर्वक कर्म करने से शीघ्र सिद्धि मिलती है। इस कारण इस तन्त्र

में यन्त्रों को भी विस्तार से दिया गया है। प्रस्तुत संस्करण के सम्पादन में हमने इसके पूर्व प्रकाशित संस्करणों के साथ-साथ वाराणसी निवासी ज्योतिषाचार्य और तान्त्रिक पं० दीनानाथजी द्विवेदी के पास उपलब्ध एक प्राचीन पाण्डुलिपि से भी विशेष सहायता ली है।

अनुवाद और अर्थ की संगति को देखते हुये कुछ श्लोकों को एक साथ रखकर ही उनका अनुवाद किया गया है जिससे एक ही विषय के विवरण में सातत्य आ जाय। भाषा की प्राञ्जलता पर विशेष ध्यान दिया गया है और अन्यान्य जटिल विषयों को स्पष्ट करते हुये अनेक पाद टिप्पणियाँ भी दी गई हैं। इन सब परिष्कारों के साथ ग्रन्थ कितना उपयोगी हो सका है इसका निर्णय अब सुधी पाठकों पर ही निर्भर है।

इस ग्रन्थ में कितने विषय हैं इसका विस्तृत विवरण विषयसूची में दिया गया है किन्तु यहाँ यह कथन अत्युक्ति नहीं है कि इस समय तक जितने तन्त्र हिन्दी अनुवाद सहित प्रकाशित हुये हैं उन सबसे यह उत्कृष्ट और विषयवस्तु की दृष्टि से व्यापक है।

औषधि और मन्त्र के प्रयोगों के साथ ग्रन्थकार ने जो यन्त्र लिखे हैं उन्हें ग्रन्थ के अन्त में क्रमसंख्या के साथ दिया गया है। जिस स्थल पर किसी यन्त्र के उपयोग का उल्लेख है वहाँ सम्बद्ध यन्त्र की क्रमसंख्या का उल्लेख कर दिया गया है जिससे यन्त्रों के प्रयोग में सुविधा हो।

अन्त में पाठकों से निवेदन है कि इस ग्रन्थ को आद्योपान्त देखकर केवल शुभकर्मों के लिये ही इसका उपयोग करें।

पिछले समय की अपेक्षा कागज और छपाई आदि का मूल्य दूना हो जाने पर भी पाठकों को सुलभ बनाने की दृष्टि से प्रकाशकों द्वारा इस संस्करण के मूल्य में अत्यन्त नाम मात्र की ही वृद्धि की गई हैं।

मुद्रण की अशुद्धि न हो इसका पूरा ध्यान रक्खा गया है, फिर भी यदि कोई अशुद्धि रह गई हो तो उसके लिये सम्पादक क्षमाप्रार्थी है।

रामकुमार राय

विषय सूची

विषयाः	पृष्ठांकाः
प्रथम उपदेशः	
मङ्गलाचरणम्	१
पार्वतीप्रश्नः	१
औषधिग्रहणे ऋतुनिर्णयः	१
औषधि तिथिनिर्णयः	३
औषधिवारमाहेन्द्रादिनिर्णयः	४
औषधिग्रहणे अंगुलीनिर्णयः	५
मूलिकाग्रहणविधिः	५
वन्दाग्रहणमन्त्रः	७
वशीकरणम्	७
राजवशीकरणम्	१५
स्त्रीवशीकरणम्	१६
वशीकरणयन्त्रम्	१७
पतिवशीकरणम्	२०
द्वितीय उपदेशः	
आकर्षणम्	२२
तृतीय उपदेशः	
जयः (प्रकरणम्)	२४
सौभाग्यम्	२७
ईश्वरादीनां क्रोधोपशमनम्	२७
गजनिवारणम्	२८
व्याघ्रनिवारणम्	२८
चतुर्थ उपदेशः	
शत्रूणां मुखस्तम्भनम्	२९
निद्रास्तम्भनम्	२९
शस्त्रस्तम्भनम्	२९
अग्निस्तम्भनम्	३२
जलस्तम्भनम्	३३
दिव्यस्तम्भनम्	३३
लोहस्तम्भनम्	३४
गोमहिषीआदिस्तम्भनम्	३५
मनुष्यस्तम्भनम्	,,
मनस्तम्भनम्	,,
आसनस्तम्भनम्	३६
शत्रुबुद्धिस्तम्भनम्	,,
चौरगतिस्तम्भनम्	,,
गर्भस्तम्भनम्	३७
शुक्रस्तम्भनम्	,,
पंचमोपदेशः	
मोहनम्	४३
ईश्वरमोहनम्	,,
दुष्टशत्रुमोहनम्	४४
रञ्जनम्	४६
मुखरञ्जनम्	४७
केशरञ्जनम्	५१
सौगन्धिकरणम्	५६
लाक्षादिनिवारणम्	,,
इन्द्रलुप्तनिवारणम्	५७
केशशुक्लीकरणम्	५९
षष्ठ उपदेशः	
वाजीकरणम्	६०
नृसिंहचूर्णकम्	६२
मदनमोदकः	६३
कामकलारसः	६४
अनङ्गसुन्दरीवटिका	६५
महाकामेश्वररसः	६६
मदनोदयरसः	६७
कामाँगनायकः	६८

विषयाः	पृष्ठांकाः
धात्रीलोहः	६८
कामेश्वररसः	६९
सप्तमोपदेशः	
गाढीकरणम्	७३
तत्रादौ भक्ष्यनिषेधः	,,
स्त्रीद्रावणम्	७४
ध्वजस्थूलदृढ़ीकरणम्	७८
स्तनवर्द्धनं उत्थापनं च	८१
योनिसंस्कारः	८३
लोमनष्टकरणम्	८४
अष्टमोपदेशः	
षंढीकरणं तन्निवारणञ्च	८६
दुष्टस्त्रीकृतध्वजपातोत्थापनम्	८७
योनिबन्धनं मोक्षणं च	,,
गृहकोदारकनिवारणम्	९०
आर्तवकरणम्	,,
अभिनवगर्भस्रावणम्	९१
गर्भपातनम्	,,
रक्तनिवारणम्	९२
वंध्यागर्भधारणम्	९५
जन्मवन्ध्याचिकित्सा	९६
मृतवत्साचिकित्सा	१००
गर्भस्रावरक्षा	१०३
गर्भस्यदशमासपर्यन्तरक्षा	,,
शुष्कगर्भशान्तिः	१०७
सुखप्रसवविधिः	,,
बालानांसूतिकायाश्च भूतग्रहादि निवारणम्	१०९
नृसिंहमन्त्रः	१११
बलिदानमन्त्रः	११२
अहितुण्डिकानिवारणम्	,,

विषयाः	पृष्ठांकाः
स्त्रीणांपुष्परक्षा	११३
दुर्भगाकरणम्	,,
कलहकरणम्	११४
नवमोपदेशः	
अरिष्टनाशार्थं रक्षाविधिः	११५
निद्राकरणम्	११७
महानिद्राकरणमन्त्रः	११८
निद्राभंगकरणम्	११९
बन्धमोचनम्	,,
निगडादिभंजनम्	१२०
द्वारउद्घाटनम्	१२२
गृहक्लेशकरणं वैरकरणं च	,,
गृहक्लेशनिवारणम्	,,
मूषकनिवारणम्	१२३
मक्षिकानिवारणम्	,,
मत्कुट (खटमल) निवारणम्	,,
सर्पादिनिवारणम्	१२४
क्षेत्रस्य (खेती के) उपद्रव निवारणम्	१२५
गोमहिष्यादि दुग्धवर्द्धनम्	१२६
दशमोपदेशः	
उच्चाटनम्	१२७
विद्वेषणम्	१३०
व्याधिकरणम्	१३१
नेत्ररोगकरणम्	१३२
शत्रुद्रावणंभ्रामणं च	१३३
उन्मत्तीकरणम्	१३४
शत्रुमारणम्	१३५
अश्वनाशनम्	१३८
शस्यनाशनम्	,,
रजकवस्त्रनाशनम्	१३९
धीवरमत्स्यनाशनम्	,,

विषयाः	पृष्ठांकाः
कुम्भकारस्यभाण्डभंजनम्	१४०
तैलिकस्यतैलनाशनम्	,,
गोपानांक्षीरनाशनम्	१४१
वारिजस्यपर्णनाशनम्	,,
शाकनाशनम्	,,
सूत्रनाशनम्	,,
शौण्डिकमद्यनाशनम्	,,
कर्मकारस्यलोहभंजनम्	१४२
एकादशोपदेशः	
नानाकौतुककरणम्	१४३
पादुकाचालनम्	१४४
दशाननादिदर्शनम्	,,
स्त्रीपश्वाद्याकारदर्शनम्	१४५
खड्गस्तम्भनम्	१४७
द्वादशोपदेशः	
काम्यसिद्धिः	१४८
वाक्सिद्धिः	१४९
गुप्तधनप्रकाशनम्	,,
धनुर्विद्या	१५०
धनधान्यस्यअक्षयकरणम्	१५१
श्रुतिधरविद्याकरणम्	१५२
तीव्रबुद्धिकरणविधिः	१५३
किन्नरीकरणम्	१५५
दृष्टिकरणम्	१५७
कर्णबधिरत्वदूरीकरणम्	१५९
कर्णपालीकरणम्	१६०
दन्तानांदृढ़ीकरणम्	१६१
अधिकाहारकरणम्	१६३

विषयाः	पृष्ठांकाः
अनाहारकरणम्	१६४
पादुकासाधनम	१६५
अनावृष्टिकरणम्	१६६
त्रयोदशोपदेशः	
निधिदर्शकमंजनम्	१६६
अदृश्यकरणम्	१७१
मृतसंजीवनी	१७५
चतुर्दशोपदेशः	
स्थावरविषनिवारणम्	१७७
विषवर्णनम्	१७९
सर्पविषनिवारणम्	१८१
तत्रसर्पजातिवर्णनम्	,,
वृश्चिकविषनिवारणम्	१९४
मूषकविषनिवारणम्	१९६
(कानखजूरेका)विषनिवारण	१९६
श्वानविषनिवारणम्	१९७
मत्स्यभेकविषनिवारणम्	१९८
गोधाविषानिवारणम्	,,
व्याघ्रविषनिवारणम्	,,
कीटविषनिवारणम्	१९९
सर्वजन्तूनांविषनिवारणम्	२००
कृत्रिमविषनिवारणम्	२०१
योगजविषनिवारणम्	२०२
भल्लातकविषनिवारणम्	२०३
पञ्चदशोपदेशः	
यक्षिणीसाधनम्	२०४
रतिप्रियासाधनम्	,,
वटयक्षिणीसाधनम्	२०६

विषयाः	पृष्ठांकाः	विषयाः	पृष्ठांकाः
विशालासाधनम्	२०७	अभ्रकशुद्धिः	२२०
अमियासाधनम्	,,	अमृतीकरणम्	२२१
चन्द्रिकासाधनम्	२०८	अभ्रकसत्त्वपातनम्	२२२
रक्तकम्बलासाधनम्	,,	मनःशिलाशुद्धिः	,,
विद्युज्जिह्वासाधनम्	,,	हरतालशुद्धिः	,,
कर्णपिशाचीसाधनम्	२०९	तुत्थशुद्धिः	२२३
स्वप्नावतीसाधनम्	,,	कासीशशुद्धिः	,,
विचित्रासाधनम्	२१०	सुवर्णादिशोधनम्	,,
हंसीसाधनम्	२११	तुत्थटंकणकाचलोहशोधनम्	२२४
मदनासाधनम्	,,	सुवर्णमारणम्	,,
कालकर्णीसाधनम्	,,	ताम्रदोषहरणम्	२२५
लक्ष्मीसाधनम्	२१२	मृतलोहस्यलक्षणम्	२२६
शोभनासाधनम्	,,	लोहशोधनम्	,,
नटीसाधनम्	,,	लोहस्यामृतीकरणम्	२२७
पद्मिनीसाधनम्	२१३	भूनागसत्त्वम्	,,
षोडश उपदेशः		पञ्चलवणानिः	,,
स्तम्भनवाजीकरणार्थं रसादि		क्षाराः	,,
शोधनम्	२१३	वृक्षक्षारः	२२८
पातालयन्त्रम्	२१४	विडः	,,
रसमारणम्	२१५	अम्लवर्गः	,,
गर्भयन्त्रप्रकारः	२१८	वज्रमूषानिर्माणम्	२२९
हिंगुलशुद्धिः	२१९	दीर्घायुष्यकरणम्	,,
गन्धकशुद्धिः	,,	परिशिष्टं	२३०
		यन्त्रचित्राणि	२३३

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ कामरत्नम्

भाषाटीकासहितम्

यस्येश्वरस्य विमलं चरणारविन्दं
संसेव्यते विबुधसिद्धमधुव्रतेन ।
निर्वाणसूचक गुणाष्टकवर्गपूर्ण
तं शंकरं सकलदुःखहरं नमामि ॥ १ ॥

जिन ईश्वर के निर्मल चरणारविंद की देवता तथा सिद्ध भ्रमर के समान उपासना करते रहते हैं, जिनके गुणानुवाद स्मरण से मुक्ति हो जाती है उन अष्टमूर्ति, वेदपूर्ण सम्पूर्ण दुःखों को हरने वाले शंकर को मैं नमस्कार करता हूं। (कहीं "निर्माणशातकगुणाष्टकवर्गपूर्णं" पाठ है, अर्थात् जो सम्पूर्ण सृष्टि के संहार गुण, ध्यान, धारणादि अष्टांग योग और धर्मादि चार वर्ग में विराजित हैं उन सम्पूर्ण दुःखनाशक शिव को प्रणाम है)।

देव्युवाच

ज्ञातं तव प्रसादेन यथाकालस्य बंधनम् ।
मंत्रस्य सारसम्भूतमिदानीमौषधं वद ।
औषधान्यप्येनेकानि मनुजानां हितायवै ।
पूर्वं तु यत्त्वयाप्रोक्तं प्रत्यक्षं कथयस्व मे ॥

देवी बोली : हे भगवान् ! आपकी कृपा से मैंने यथायोग्य काल का बन्धन जाना; अब इस समय आप मन्त्र के सार से प्रगट होने वाली औषधियों को कहिये। मनुष्यों का हित करने वाली आपने पहले अनेक औषधियाँ कही हैं अब उन्हें प्रत्यक्ष कहिये।

ईश्वर उवाच

तिथिनक्षत्रवारेण ऋतुभेदैःपरिग्रहः ।
खननोत्पाटनं मन्त्रैःकारयेद्वै चिकित्सकः ॥
औषधं कालयोगेन गृह्णाति परमं बलम् ॥
शरद्धेमन्तिके देवित्वचोमूलपरिग्रहः ॥

शिशिरे च फलं सम्यङ्मूलं सारसमन्वितम् ।
वसन्ते पुष्पपत्रं च ग्रीष्मे च फलबीजके ॥
स्वकाले बलवन्तोऽपि वर्षासुतरवः सदा ।
मूलेशुष्केबलं चार्द्धमलादौ भिषजे तथा ॥
ग्रीष्मवार्षिकयोरेतच्छरत्संपूर्णता भवेत् ।
वृक्षादीनां फलं बीजं स्वकीये चार्तवे तथा ।
फल पुष्प लता ह्येते स्वकाले बलिनस्तथा ।
निशायां वनजा वीर्या जलजा बलिनोदिवा ॥

शिवजी बोले : हे देवि ! तिथि, नक्षत्र, वार और ऋतुओं के भेद से औषधियों का ग्रहण, खनन, उखाड़ना वैद्य को मन्त्रपूर्वक करना चाहिये क्योंकि समय योग में ग्रहण की हुई औषधि परम बल करती हैं। शरद् और हेमन्त में त्वचा (छाल) और मूल ग्रहण करना, शिशिर में फल, मूल और सार ग्रहण करना, वसन्त में पुष्प और पत्र तथा ग्रीष्म में फल और बीज ग्रहण करना चाहिये। अपने काल और वर्षा में वृक्ष सदा बलवान् होते हैं। मूल शुष्क होने से आधा बल होता है, तथा मलादि स्थान का मूल निर्बल होता है। ग्रीष्म, वर्षा और शरद् में सम्पूर्णता होती है। वृक्षादि के फल और बीज अपनी ऋतु में ग्रहण करने चाहिये क्योंकि ये फल, पुष्प तथा लता अपने समय में बलवान् होते हैं। वन में होने वाली रात में और जल में होने वाली औषधियाँ आदि दिन में बली होती हैं।

शान्ति वश्य स्तंभनानि द्वेषणोच्चाटनं तथा ।
मारणान्ता निशंसन्ति षट्कर्माणि मनीषिणः ॥

शान्ति, वशीकरण, स्तम्भन, विद्वेषण, उच्चाटन और मारण यह छः कर्म विद्वानों ने कहे हैं।

कामरत्नमिदं चित्रं नानातन्त्रार्णवान्मया ।
वश्यादि यक्षिणीमंत्रसाधनान्तं समुद्धृतम् ।
वश्याकर्षण कर्माणि वसन्ते योजयेत्प्रिये ॥ २ ॥

यह विचित्र "कामरत्न" नामक ग्रन्थ अनेक सागररूप ग्रन्थों से संग्रह करके वशीकरण से प्रारम्भ कर यक्षिणी मन्त्र के साधन पर्यन्त उद्धृत किया गया है। हे पार्वति ! वशीकरण और आकर्षण कर्म वसन्त ऋतु में करने चाहिये।

ग्रीष्मे विद्वेषणं कुर्यात्प्रावृषिस्तंभनं तथा ।
शिशिरे मारणञ्चैव शांतिकं शरदि स्मृतम् ॥ ३ ॥
हेमन्ते पौष्टिकं कुर्यादुक्तं कर्म विशारदैः ।

ग्रीष्म ऋतु में विद्वेषण, वर्षा ऋतु में स्तंभन, शिशिर में मारण, शरद् में शान्तिकर्म, हेमन्त में पुष्टिकर्म, इन कर्मों के जानने वालों को करने चाहिये।

वसन्ते चैव पूवाह्णे ग्रीष्मे मध्याह्न उच्यते ॥ ४ ॥
वर्षा ज्ञेयाऽपराह्णे तु प्रदोषे शिशिरस्तथा।
अर्द्धरात्रे शरत्काले उषा हेमन्त उच्यते ॥ ५ ॥

दोपहर से पहले वसन्त, मध्याह्न में ग्रीष्म, तीसरे प्रहर को वर्षा, प्रदोष में शिशिर, आधीरात में शरद्, उषःकाल में हेमन्त ऋतु जानना उचित है। क्रम से यह ऋतुओं का वर्णन किया गया है।

ऋतवः कथिता ह्येतेसर्वेह्येव क्रमेण तु।
तद्विहीना न सिद्धयन्ति प्रयत्नेनापि कुर्वतः ॥ ६ ॥
अनन्य करणात्तेहि ध्रुवं सिद्धयन्त नान्यथा ॥ ७ ॥
इतिवश्यादिकर्मणामृतुनिर्णयः।

काल के विना यत्न करने पर भी मन्त्र सिद्धि को प्राप्त नहीं होते और अपने काल में करने से वे सिद्ध होते हैं, इसमें सन्देह नहीं है।

इति ऋतु निर्णयः।

वशीकरणकर्माणि सप्तम्यां साधयेद्बुधः।
तृतीयायां त्रयोदश्यां तथाकर्षणकर्म वै ॥ ८ ॥

चतुर पुरुष को उचित है कि सप्तमी में वशीकरण कर्म का साधन करे। तृतीया और त्रयोदशी के दिन आकर्षण कर्म करना चाहिये ॥ ८ ॥

उच्चाटनं द्वितीयायां षष्ठ्याश्चैव प्रकारयेत्।
स्तम्भनञ्च चतुर्दश्याश्चतुर्थ्याम्प्रतिपद्यपि ॥ ९ ॥

द्वितीया और षष्ठी को उच्चाटन कर्म, चतुर्थी और चतुर्दशी को तथा प्रतिपदा को भी स्तम्भन करना चाहिये ॥ ९ ॥

मोहनन्तु नवम्याश्च तथाऽष्टम्यां प्रयोजयेत्।
द्वादश्यां मारणञ्चैवमेकादश्यान्तथैव च ॥ १० ॥

नवमी और अष्टमी को मोहनकर्म तथा एकादशी और द्वादशी को मारणकर्म करना चाहिये ॥ १० ॥

पञ्चम्यां पौर्णमास्याञ्च योजयेच्छांतिकादिकम्।
सर्वविद्याप्रसिद्धयर्थं तिथयः कथिताः क्रमात् ॥ ११ ॥

पञ्चमी और पौर्णमासी को मारण कर्म करना चाहिये। ये तिथियाँ सर्व विद्याओं की प्रसिद्धि के निमित्त क्रम से कही गई हैं ॥ ११ ॥

इति तिथिनिर्णयः।

अथ वाराः

शुक्रेलक्ष्मीः शनौवश्यं रवौ मारण कर्मच ।
उच्चाटनं बुधे भौमे विद्वेषादि शुभं भवेत् ॥ १२ ॥

शुक्रवार में लक्ष्मी, शनि को वशीकरण, रविवार को मारण, बुध को उच्चाटन तथा मङ्गल को विद्वेषणकर्म शुभ होता है ॥ १२ ॥

स्तंभनं मोहनश्चैव वशीकरणमुत्तमम् ।
माहेन्द्रेवारुणे चैव कर्त्तव्यमिह सिद्धिदम् ॥

स्तम्भन, मोहन और उत्तम वशीकरण माहेन्द्र तथा वारुण मंडल में करने से सिद्धिदायक होते हैं ॥ १३ ॥

विद्वेषोच्चाटनं वह्निवायुयोगेन कारयेत् ।
ज्येष्ठा चैवोत्तराषाढा ह्यनुराधा च रोहिणी ॥ १४ ॥
माहेन्द्रमण्डलस्थाश्च प्रोक्ताः कर्मप्रसिद्धिदाः ।

विद्वेषण और उच्चाटन अग्नि और वायु के योग में, अर्थात् इन तत्त्वों के उदय में करना चाहिये । ज्येष्ठा, उत्तराषाढा, अनुराधा, रोहिणी ये माहेन्द्र मण्डल में स्थित हुए कर्म में सिद्धिप्रद हैं ।

स्यादुत्तराभाद्रपदा मूला शतभिषा तथा ॥ १५ ॥
पूर्वाभाद्रपदाश्लेषा ज्ञेया वारुणमध्यगाः ।
पूर्वाषाढा च तत्कर्मसिद्धिदा शम्भुना स्मृताः ॥ १६ ॥

उत्तराभाद्रपदा, मूल, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, आश्लेषा यह वारुणमण्डल के मध्यचारी कहलाते हैं और इसी प्रकार शिवजी ने पूर्वाषाढा को कर्मसिद्धि का देनेवाला कहा है ।

स्वाती हस्तो मृगशिरश्चित्रा चोत्तरफाल्गुनी ।
पुष्यः पुनर्वसुर्वह्निमण्डलस्थाः प्रकीर्तिताः ॥ १७ ॥

स्वाती, हस्त, मृगशिरा, चित्रा, उत्तराफाल्गुनी, पुष्य, पुनर्वसु यह वह्निमण्डल में स्थित हैं ॥ १७ ॥

अश्विनी भरणी चार्द्रा धनिष्ठा श्रवणं मघा ।
विशाखा कृत्तिका पूर्वाफाल्गुनी रेवती तथा ॥ १८ ॥
वायुमण्डलमध्यस्थास्तत्तत्कर्म प्रसिद्धिदाः ।
शांतिकं पौष्टिकञ्चैव ह्यभिचारिक कर्म च ॥ १९ ॥

अश्विनी, भरणी, आर्द्रा, धनिष्ठा, श्रवण, मघा, विशाखा, कृत्तिका,

पूर्वाफाल्गुनी तथा रेवती ये वायुमण्डल में स्थित हुए उन-उन कर्मों की सिद्धि देनेवाले हैं। शान्ति, पुष्टि और अभिचार के कर्म आगे लिखी अँगुली द्वारा करने से सिद्ध होते हैं।

इति माहेन्द्रादिनिर्णयः।

तर्जन्यादि समारूढं कुर्याद्यत्नात्क्रमं सुधीः।
तथांगुष्ठा समारूढा सर्वकर्म शुभे तथा॥ २०॥

पूर्वोक्त कर्म तर्जनी (अँगूठे के निकट की अँगुली) आदि द्वारा यथाक्रम से और अंगुष्ठ से सब शुभकर्म प्रयोग करने चाहिये। अर्थात् अंगुष्ठ और तर्जनी द्वारा शान्तिकार्य, मध्यमा और अंगुष्ठ से पौष्टिक, अनामिका और अंगुष्ठ से अभिचारकर्म करना चाहिये।

इति अँगुलीनिर्णयः।

अथ मूलिकाग्रहणविधिः

विधिमंत्र समायुक्तमौषधं सफलं भवेत्।
विधिमन्त्रविहीनं तु काष्ठवद्भेषजं भवेत्॥ २१॥

विधिपूर्वक मन्त्र द्वारा लाई हुई औषधि सफल होती है और विधि तथा मन्त्र के बिना लाई हुई औषधि काठ के समान होती है।

एकान्ते तु शुभारण्ये तिष्ठत्येवदौषधम्।
कार्यसिद्धिर्भवेत्तेन वीर्यमस्ति च तत्रवै॥ २२॥

जो औषधि एकान्त में अच्छे वन में स्थित होती है उससे कार्यसिद्धि होती हैं क्योंकि उसमें बल रहता है।

वल्मीककूपरथ्या तरुतल देवालय श्मशानेषु।
जाता विधिना विहिता औषधयः सिद्धिदानस्युः॥ २३॥

बाँबी, कूप, मार्गवृक्ष के नीचे देवालय की तथा श्मशान में उत्पन्न हुई औषधि विधिपूर्वक लाने पर भी सिद्धि देने वाली नहीं होती।

जलजीर्णमग्निकवलितमकालजातं कृमि क्षतशरीरञ्च।
न्यूनं तथाधिकं वाद्रव्यमद्रव्यज्ञगुर्भिषजः॥ २४॥

जल से गली हुई, अग्नि से जली हुई, अकाल में उत्पन्न हुई, कृमि से खाई हुई, बहुत थोड़ी तथा अधिक औषधि (द्रव्य) होने पर भी नहीं होने के समान है, ऐसा विद्वानों का कथन है।

भूतादियुक्तमभ्यर्च्य गिरीशं प्रातरुत्थितैः।
श्राद्धैरुपासितैर्वापि संग्राह्यं सर्वमौषधम्॥ २५॥

प्रातःकाल उठकर भूतादि सहित शिव का पूजन कर शुद्धव्रतादि से युक्त हो सम्पूर्ण औषधियों को ग्रहण करना चाहिये।

इत्येवं सर्वमूलानां विधिमन्त्रश्च कथ्यते।
आदौ वृक्षस्यमूलञ्चगत्वा तमभिमंत्रयेत् ॥ २६ ॥

अब सब मूलों की विधि और मन्त्र को कहते हैं: पहले वृक्षमूल में जाकर उसको अभिमन्त्रित करे।

ॐ वेतालाश्च पिशाचाश्च राक्षसाश्च सरीसृपाः।
अपसर्पन्तु ते सर्वे वृक्षादस्माच्छिवाज्ञया ॥ २७ ॥

मन्त्र यह है: 'ॐ वेतालाश्च पिशाचाश्च राक्षसाश्च सरीसृपाः। अपसर्पन्तु ते सर्वेवृक्षादस्माच्छिवाज्ञया', अर्थात् वेताल, पिशाच, राक्षस और सरीसृप ये सब शिव की आज्ञा से इस वृक्ष से दूर हों।

ततोनमस्कारः।
ॐ नमस्तेऽमृतसम्भूते बलवीर्य्यविवर्द्धिनि।
बलमायुश्च मे देहि पापान्मेत्राहि दूरतः ॥ २८ ॥

फिर नमस्कार करके यह मन्त्र पढे: 'ॐ नमस्तेऽमृतसम्भूते बलवीर्य विवर्द्धिनि। बलमायुश्च मे देहि पापान्मेत्राहि दूरतः॥' अर्थात् अमृत से उत्पन्न, बल, वीर्य को बढ़ाने वाली, बल और आयु मुझे दो और दूर से ही पापों से मेरी रक्षा करो।

ततःखननम्।
येनत्वां खनते ब्रह्मायेनत्वां खनते भृगुः।
येनहीन्द्रोथ वरुणोयेन त्वामपचक्रमे ॥ २९ ॥
तेनाहं खनयिष्यामि मन्त्रपूतेन पाणिना।
मा पातेमानि पतिते मा ते तेजोन्यथा भवेत् ॥ ३० ॥

यह कह कर खोदना चाहिये: जिस कारण तुमको ब्रह्मा और भृगुजी ने खोदा है, जिस कारण तुमको इन्द्र और वरुण ने खोदा है उसी कारण मन्त्र से पवित्र हाथों से मैं भी तुमको खोदता हूं। खोदने और उखाड़ने में तुम्हारा तेज अन्यथा न हो।

अत्रैव तिष्ठ कल्याणि ममकार्यंकरी भव।
मम कार्ये कृते सिद्धे ततस्स्वर्गं गमिष्यसि ॥ ३१ ॥

हे कल्याणि! यहीं स्थित होकर तुम हमारा कार्य करो। मेरे कार्य की सिद्धि होने से फिर तुम्हारा स्वर्ग में गमन होगा।

ॐ ह्रीं चण्डे हूँ फट् स्वाहा ।

अनेन मंत्रेणादित्यवारे पुष्यनक्षत्रे वापुष्यार्कयोगे वा सर्वा औषधीरुत्पाटयेत् ।

'ॐ ह्रीं चण्डे हूं फट् स्वाहा' इस मन्त्र से रविवार के दिन, पुष्य नक्षत्र या पुष्य-अर्क योग में सम्पूर्ण औषधियों को उखाड़े ।

ॐ ह्रीं क्षौं फट् स्वाहा ।

अनेन मूलिकां छेदयेत् । इति मूलिकाग्रहण विधिः ॥

'ॐ ह्रीं क्षौं फट् स्वाहा' इस मन्त्र से मूलिका छेदन करे (इति मूलिका ग्रहण की विधि) ।

ॐ वनदण्डे महादण्डाय स्वाहा ।

ॐ शूं (सूत्री) द्री कपालमालिनी स्वाहा ।

प्रत्येकं सप्तधा जप्त्वा वन्दाग्राह्या । ततःकार्यसिद्धिः ॥

'ॐ वनदण्डे महादण्डाय स्वाहा', 'ॐ शूद्री (सूत्री) कपालमालिनी स्वाहा' इन प्रत्येक को सातबार जप कर वन्दाग्रहण करने से कार्य की सिद्धि होती है । (इतिवंदाग्रहणमन्त्रः) ।

इति वन्दाग्रहण विधिः ।

इत्येवं सर्वविद्यानां सिद्धये ऋतुनिर्णयः ।

कथितं चात्र यत्नेन मूलिकाग्रहणादिकम् ॥ ३२ ॥

इस प्रकार सब विद्याओं की सिद्धि में ऋतु का निर्णय है । इस प्रकार यत्नपूर्वक मूलग्रहणादि की विधि कही गई है ।

अथ वशीकरणम् । तत्र सर्वजन वशीकरणम् ॥

वर्णानामुत्तमं वर्ण मंत्रस्थानं तथैव च ।

ॐकार शिरसं चापि ॐकारशिरसंततः ॥ ३३ ॥

अधोभागे च रेफश्च दत्त्वा मत्रं समुद्धरेत् ।

निरामिषान्न भोक्ता च जप्तव्यो मन्त्र एव च ॥ ३४ ॥

वशीकरण : सम्पूर्णजनों को वश में करने की विधि : जो वर्णों में उत्तम वर्ण है वही मन्त्र का स्थान है । ॐकार शिर के स्थान में और फिर क, प, व लिखकर अधोभाग में रेफ देकर मन्त्र का उद्धार करना तथा मांसरहित अन्न खाकर मन्त्र को जपना चाहिये ।

क्रौं प्रों व्रों अनेन मंत्रेण ।

असाध्यमपि राजानं पुत्रमित्राश्च बांधवाः ।

ये मे गोत्रसमुत्पन्नाः पशवो ये च सर्वतः ॥ ३५ ॥
ते सर्वे वशतां यांतिसहस्रार्द्धस्य जापनात् ।
पृष्ट्वादृष्ट्वा च ये साध्या गृहीत्वानाम तत्र वै ॥ ३६ ॥

'क्रों प्रों व्रों' इस मन्त्र का ५०० बार जप करने से असाध्य राजा, पुत्र, मित्र, बांधव, जो अपने गोत्र में हैं, और जो पशु[1] प्राय हैं (कहीं पर व्रौं ड्रौं मन्त्र है) वे सब वशीभूत हो जाते हैं। उन साध्यों से पूछकर तथा देखकर उनके नाम लेकर मन्त्र को सिद्ध करे।

इत्यादिकाः सर्वमन्त्रा ग्राह्या भक्त्या गुरोस्तदा ।
सिद्धयन्ति सर्वकार्याणि नान्यथा सिद्धिभाग्भवेत् ॥ ३७ ॥

सम्पूर्ण मन्त्र भक्तिपूर्वक गुरु से ग्रहण करने चाहिये। इससे सब कार्य सिद्ध हो जाते हैं अन्यथा कार्यसिद्धि नहीं होती।

ॐ नमः कट विकट घोररूपिणी स्वाहा ।
अनेन मंत्रेणसप्ताभिमन्त्रितं भक्तपिण्डं
यस्य नाम्ना सप्ताहं खाद्यते स ध्रुवमेव वश्योभवति ।

'ॐ नमः कट विकट घोर रूपिणी स्वाहा' इस मन्त्र से सात बार अभिमन्त्रित कर भोजनपिण्ड को जिसका नाम लेकर बराबर सात दिन तक खाया जाय, वह अवश्य वश में हो जाता है।

ॐ वश्यमुखी राजमुखी स्वाहा ।
अनेन सप्तधा मुखप्रक्षालनात्सर्वेवश्याभवन्ति ।

---

१ 'ॐ ह्रीं क्लीं कलिकुण्डस्वामिनी अमृतवक्त्रे अमुकं जृम्भय मोहय स्वाहा' यह मन्त्र इक्कीस बार जपने से सिद्धि होती है ॥ १ ॥ उद्भ्रान्तपत्र, मजीठ, कुंकुम, तगर यह समान भाग लेकर खान-पान और स्पर्श में देने से वशीकरण होता है। पुष्यनक्षत्र में सिंही का मूल लाने और कमर में बाँधने से जगत्प्रिय होता है। कृष्णचतुर्दशी में श्मशान से महानील लाकर उसका नरतेल से अंजन करने से लोक वशीभूत होता है। अथवा इसी के मूल का अपने वीर्य से अंजन करने से लोक वश में होता है ॥ २ ॥ अथवा इसी का मूल हाथ में बाँधने से व्यक्ति सर्वप्रिय होता है ॥३॥ चन्द्रवार को पुष्यनक्षत्र में ब्रह्मदण्डी का मूल लाकर अंजन करने से सब जीव वश में होते हैं ॥ ४ ॥ उल्लू के नेत्र, घीकुरवार तथा वंशलोचन इनके अंजन से लोक वशीभूत होते हैं ॥६॥ 'ॐनमो महायक्षिणी अमुकं वशमानय स्वाहा' इस मन्त्र का दशसहस्र जप करने से सिद्धि होती।

'ॐ वश्यमुखी राजमुखी स्वाहा' इस मन्त्र को पढ़कर सातबार मुख धोने से सब वश में हो जाते हैं।

ॐ राजमुखि वश्यमुखि स्वाहा।
वामहस्ते तैलं संस्थाप्य अनामिकया त्रिधा आमंत्र्य पुनर्मूल-मन्त्रं त्रिधापठित्वा मुख केशादौ विलेपयेत्। प्रातःकालेन शय्यायां स्थित्वा तदा सर्वजना वश्या भवन्ति व्याघ्रोपि नखादति॥

'ॐ राजमुखि वश्यमुखि स्वाहा' इससे बायें हाथ में तेल लेकर अनामिका अगुली से तीन बार अभिमन्त्रित कर फिर मूलमन्त्र को तीन बार पढ़कर मुख और केशादि में प्रातःकाल शय्या में स्थित होकर लगाने से सब मनुष्य वश में होते हैं। व्याघ्र भी ऐसे साधक को नहीं खाता।

ॐ चामुण्डे जय जय स्तम्भय-स्तम्भय जंभय-जंभय
मोहय-मोहय सर्वसत्वान्नम स्वाहा, अनेन पुष्पाण्यभि-
मंत्र्य यस्मै दीयते सवश्यो भवति।
एकचित्तस्थितो मंत्री मन्त्रं जप्त्वाऽयुतत्रयम्।
ततः क्षोभयते लोकान्दर्शनादेव साधकः॥ ३८॥

'ॐचामुण्डे जय जय स्तम्भय स्तम्भय जंभय जंभय मोहय मोहय सर्व सत्त्वान्नमः स्वाहा' इस मन्त्र से अभिमन्त्रित करके पुष्प जिसको दिया जाय वह वशीभूत हो जाता है। मन्त्र जपने वाला स्थिरचित्त होकर तीस सहस्र मन्त्र जप करके अपने दर्शन से ही लोकों को क्षुभित कर सकता है।

भूताख्य वटमूलञ्च जनेन सह घर्षयेत्।
विभूत्या संयुतं मन्त्रं तिलकं लोकवश्यकृत्॥ ३९॥

शाखोट वृक्ष की जड़ यत्नपूर्वक घिसकर विभूति के साथ तिलक लगाने से लोक वशीभूत हो जाते हैं (कहीं रुद्राक्ष पाठ है)।

पुष्ये पुनर्नवामूलं करेसप्ताभिमन्त्रितम्।
बध्वा सर्वत्र पूज्यः स्यान्मन्त्रस्त्वत्रैव कथ्यते॥ ४०॥
ऐं रौं डं क्षोभय भगवतित्वं स्वाहा।
मन्त्रमिममुक्तयोगस्य पूर्वमयुतद्वय जपेत्ततः सिद्धिः।

पुष्य नक्षत्र में पुनर्नवा की जड़ को हाथ में सात बार अभिमन्त्रित कर बाँधने से व्यक्ति सर्वत्र पूजित होता है। मन्त्र यह है 'ऐं रौं डं क्षोभय भगवति त्वं स्वाहा'। यह मन्त्र २०,००० जपने से सिद्ध होता है।

अपामार्गस्यमूलन्तु पेषयेद्रोचनेन च ।
ललाटे तिलकं कुर्याद्वशीकुर्याज्जगत्त्रयम् ॥ ४१ ॥

अपामार्ग (चिरचिटे) की जड़ को गोरोचन के साथ पीसकर इसका तिलक मस्तक में करने से साधक त्रिलोकी को अपने वश में कर सकता है ।

ॐ नमः कन्दर्पशर (कोदण्डशर इति वा पाठः)
विजालिनिमालिनी सर्वलोकवशंकरी स्वाहा ।

'ॐ नमः कन्दर्पशर विजालिनि मालिनी सर्वलोकवशंकरी स्वाहा' यह मन्त्र कथित योग में १०८ बार जपने से सिद्धि होती है ।

कृष्णपक्षे चतुर्दश्यामष्टम्यां वाह्युपोषितः ।
बलिदत्त्वा समुद्धृत्य सहदेवीं सचूर्णयेत् ॥ ४२ ॥
ताम्बूलेन तु तच्चूर्णं दत्तं वश्यकरं ध्रुवम् ।
स्नानेलेपे च तच्चूर्णं योज्यं वश्यकरं भवेत् ॥ ४३ ॥

कृष्णपक्ष की चतुर्दशी और अष्टमी को व्रत रखकर बलि देकर सहदेई की जड़ को उखाड़कर चूर्ण करके पान में रखकर जिसको दी जाय वह अवश्य वशीभूत हो जाता है । इसी का चूर्ण स्नानीय जल में मिलाकर नहाने से अथवा शरीर में लेपन करने से भी वश्यता होती है ।

रोचनासहदेवीभ्यां तिलकं लोकवश्यकृत् ।
शिरसाधारयेत्तच्चूर्णं सर्वत्र वश्यकृत् ॥ ४४ ॥
मुखेक्षिप्त्वा च तन्मूलं कट्यां बद्ध्वा च कामयेत् ।
यां नारीं सा भवेद्वश्या मन्त्रयोगेन कथ्यते ॥ ४५ ॥

गोरोचन और सहदेई मिलाकर तिलक करने से लोक वशीभूत होते हैं । इसका चूर्ण शिर पर धारण करने से भी लोक वशीभूत होते हैं । इसको अन्य स्त्रियों के मुख में डाल देने या कमर में मन्त्रयोग से बाँध देने से वह स्त्री वश में हो जाती है ।

ॐ नमो भगवति मातंगेश्वरि सर्वमुखरंजिनि
सर्वेषां महामाये मातंगी कुमारिके लहलहजिह्वे[1]
सर्वलोकवशंकरी स्वाहा ॥
सहस्रं जप्त्वा उक्तयोगानां सिद्धिः ॥

मन्त्र यह है 'ॐ नमो भगवति मातंगेश्वरि सर्वमुखरंजिनि सर्वेषां महामाये मातंगी कुमारिके 'लहलहजिह्वे सर्वलोकवशंकरी स्वाहा' । इस मन्त्र का सहस्र जप करने से ऊपर कहे योग की सिद्धि होती है ।

---

१ अथवा हल हल ।

श्वेतापराजिता मूलं चंद्रग्रस्ते (मृगऋक्षे) समुद्धृतम् ।
रंजिताक्षो नरस्तेन वशीकुर्याज्जगत्त्रयम् ॥ ४६ ॥
तन्मूलं रोचनायुक्तं तिलकेन जगद्वशम् ।

श्वेतविष्णुक्रान्ता की जड़ चन्द्रग्रहण में उखाड़कर उसको पीसकर आँखों में आँजने से त्रिलोकी वश में होती है। इसी की जड़ का गोरोचन के साथ तिलक लगाने से जगत् वश में होता है।

ग्राह्यं कृष्ण (शुक्ल) त्रयोदश्यां श्वेतगुंजीयमूलकम् ॥ ४७ ॥
ताम्बूलेन प्रदातव्यं सर्वलोकवशंकरम् ।

कृष्णपक्ष की त्रयोदशी के दिन सफेद चौंटली की जड़ को लाकर उसको ताम्बूल के साथ देने से सर्वलोक वशीभूत होते हैं।

शिला रोचन ताम्बूलं वारिणा तिलकेकृते ॥ ४८ ॥
संभाषणेन सर्वेषां वशीकरणमुत्तमम् ।
स्वर्णेन वेष्टितं कृत्वा तेनैवतिलकेकृते ॥ ४९ ॥
दृष्टमात्रे वशंयाति नारी वा पुरुषोऽपि वा[1] ।

मैनशिल और गोरोचन को ताम्बूल और जल के साथ घिसकर तिलक लगाने से जिसके साथ संभाषण करे वह वश में हो सकता है; तथा स्वर्ण से वेष्ठितकर इसका तिलक करने से नारी या पुरुष कोई हो वह देखते ही वशीभूत हो जाता है।

ॐ वज्रकिरणे शिवे रक्षभवेममाद्य अमृतं कुरु कुरु स्वाहा[2] ।
इमं मन्त्रमुक्तयोगेन सहस्रं जपेत्ततः सिद्धिः ॥ ५० ॥

उक्त योग का मन्त्र यह है 'ॐ वज्रकिरणे शिवे रक्षभवेममाद्य अमृतं कुरुकुरु स्वाहा'। इस मन्त्र का एक सहस्र जप करने से सिद्धि होती है।

हृत्पादचक्षुर्नासानां मलं पूगेप्रदापयेत् ॥ ५१ ॥
तत्पूगं खाद्यते येन यावज्जीवं वशीभवेत् ॥ ५२ ॥

हृदय, चरण, नेत्र और नासिका का मैल पूग (सुपारी) में किंचित् भी देने से खाने वाला जीवन पर्यन्त उसके वश में हो जाता है।

मन्त्राभिमन्त्रितं कृत्वा दण्डेन्दीवर मूलकम् ।
रोचनाभिस्ताम्रपात्रे मृष्ट्वानेत्रद्वयां जनात् ॥ ५३ ॥

---

१ ग्राह्यं शुक्लचतुर्दश्यां श्वेतगुंजीयमूलकम् । ताम्बूलेन प्रदातव्यं सर्वलोक वशंकरम् ॥ इत्यस्यैतदुत्तरं पाठः अन्यत्र ।

२ ॐ वक्रकिरणे शिवेरक्षभये ममाद्यामृतं कुरु कुरु स्वाहा वा पाठः ।

प्रियोभवति सर्वेषां दृष्टमात्रे न संशयः ।
तन्मूलं मधुसंयुक्तं ललाटे तिलके कृते ॥ ५४ ॥
ताम्बूले वा प्रदातव्यं वशीकरणमुत्तमम् ।
तन्मूलं रंजनोत्थं वा मूलंपिष्ट्वा प्रयोजयेत् ॥ ५५ ॥
ताम्बूलेन तु तद्भुक्तेध्रुवं वश्यं समानयेत् ।
पिंगलायै नमः ।
अनेन मन्त्रेणाभिमन्त्र्योक्तयोगान्साधयेत् ।

नीलकमल की जड़ मन्त्र से अभिमन्त्रित करके गोरोचन सहित ताम्रपात्र में पीसकर दोनों नेत्रों में आंजने से देखते ही वह मनुष्य सबका प्यारा हो जाता है इसमें सन्देह नहीं है। इसी की जड़ का शहद के साथ तिलक लगाने से या ताम्बूल के साथ देने से उत्तम वशीकरण हो जाता है। नीलकमल की जड़ को पीसकर प्रयोग करना चाहिये। 'पिङ्गलायै नमः' इस मन्त्र से अभिमन्त्रित करके इस योग का साधन करना चाहिये।

रक्तगृध्रोभयं नेत्रं नेत्रं वा कृष्णपेचकम् ।
कृष्णपेचिकमाहृत्य तत्तैलेन प्रदीपकम् ॥ ५६ ॥
कृत्वा च मधुना लिप्त्वा वर्त्तिकज्जलपातने ।
तेन नेत्राञ्जनं कृत्वा त्रैलोक्यं वशमानयेत् ॥ ५७ ॥

लाल गृध्र के दोनों नेत्र और काले उल्लू का नेत्र लेकर, काले उल्लू को लाकर उसे तेल से प्रदीप्त करके और सब प्रकार सावधानी करके उसको शहद से लपेटकर बत्ती बनाकर काजल पारे। इस काजल को नेत्रों में लगाने से साधक त्रिलोकी को वश में कर सकता है।

देवदालीय सिद्धार्थं गुटिकां कारयेद्बुध ।
मुखे निःक्षिप्य सर्वेषां प्रियो भवति नान्यथा ॥ ५८ ॥

देवदाली (घघरबेल) तथा सरसों की गुटिका बनाकर मुख में रखने से सबका प्रिय होता है। (कहीं 'देवदानवसिद्धचर्थं' पाठ है, अर्थात् देवदानव की सिद्धि के निमित्त गुटिका धारण करे।)

भृङ्गमूलं मुखेक्षिप्त्वा सर्वैः संपूजितो भवेत् ।

इसमें सन्देह नहीं कि भांगरे की जड़ मुख में डालकर व्यक्ति सर्वत्र पूजित होता है।

रोहिण्यां वटवन्दाङ्कं संग्राह्यं धारयेत्करे ॥ ५९ ॥
वश्यं करोति सकलं विश्वामित्रेण भाषितम् ।

रोहिणीनक्षत्र में वट के बन्दे को संग्रह कर हाथ में धारण करने से

साधक सबको वशीभूत कर सकता है ऐसा विश्वामित्र ने कहा है।

कुंकुमं तगरं कुष्ठं हरितालं समन्त्रयम् ॥ ६० ॥
अनामिकाया रक्तेन तिलकं लोकवश्यकृत् ।

केशर (कश्मीर में उत्पन्न), तगर, कूठ, हरिताल इनको बराबर लेकर अनामिका अँगुली के रक्त के साथ तिलक करने से सर्वलोक वशीभूत हो जाते हैं।

विष्णुक्रांता शुभा भृंगीश्वदंष्ट्रा (ण्डा) मूलरोचनाम् ॥६१॥
पिष्ट्वा तु वटिकां कृत्वा तिलकं वशकृत्परम् ।

विष्णुक्रान्ता, भाँगरा, गोखरू की जड़, गोरोचन इन सबको पीसकर गोली बना ले। इनका तिलक करने से लोक वशीभूत हो जाते हैं।

पुष्योद्धृतं श्वेतभानु मूलंमूत्रैरजाभवैः ॥ ६२ ॥
वटिकां कारयेत्प्राज्ञस्तिलकेन जगद्वशम् ।

पुष्यनक्षत्र में श्वेतमन्दार की जड़ लेकर उसे तथा जवासा को अजामूत्र से पीसकर वटी बनाकर उसका तिलक करने से सब जगत् वशीभूत हो जाता है।

अजारक्तेन तन्मूलं पुष्यार्के पेषयेद्बुधः ॥ ६३ ॥
कज्जलं पातयित्वा तु चक्षुषीरञ्जयेन्नरः ।
त्रैलोक्यं वशतां यातिदृष्टमात्रेनसंशयः ॥ ६४ ॥

भेड़ के रुधिर के साथ मन्दार की जड़ को पुष्यनक्षत्र में पीसकर उसमें काजल डालकर यदि मनुष्य नेत्रों में लगावे तो उसके देखते ही त्रिलोकी वश में हो जाती है इसमें नहीं है।

मूलन्तु श्रवणा ऋक्षे पिण्डीतगर संभवम् ।
संग्राह्यं धारयेद्वश्यं कुरुते सकलं जगत् ॥ ६५ ॥

श्रवण नक्षत्र में पुष्करमूल की जड़ लेकर तगर मिलाकर धारण करने से सम्पूर्ण जगत् वश में हो जाता है।

कृष्णापराजिता मूलं पुष्येगोद्धृत्य चूर्णयेत् ।
गोघृतेन समालोड्य कज्जलं धारयेद्बुधः ॥ ६६ ॥
तेनैवाञ्जितमात्रेण वशीकुर्याज्जगत्त्रयम् ।

कृष्णक्रान्ता कोयल की जड़ पुष्यनक्षत्र में लाकर चूर्ण कर उसमें गाय का घृत मिलाकर कज्जल धारण करे (कहीं गोमूत्र लिखा है)। इसके आंजने मात्र से ही त्रिलोकी वश में हो जाती है।

पुत्रजीवकपत्रं च तिलकं रोचनायुतम् ॥ ६७ ॥
प्रियोभवति सर्वेषां नरःकृत्वा ललाटके ।

जियेपोते के वृक्ष के कोमल पत्तों को पीसकर उसमें गोरोचन मिलाकर तिलक करने से ललाट पर लगे इसके तिलक के दर्शन करते ही सब मनुष्य साधक को प्यार करने लगते हैं।

श्वेतापराजितामूलं तथा श्वेतजवाग्रजा (जयाल) (श्व) (यो: ।६८।
नासाग्रे तिलकं कृत्वा वशीकुर्यान्नसंशयः ॥ ६९ ॥

श्वेत विष्णुक्रान्ता की जड़ तथा श्वेत गुड़हल इन दोनों का नासा के अग्रभाग में तिलक लगाने से वशीकरण होता है इसमें सन्देह नहीं।

मंजिष्ठ तोयद वचाशितसूर्यमूलैः स्वीयाङ्गशोणितयुतैः समकुष्ठकैश्च ।
कृत्वा ललाट फलके तिलकं कृतज्ञो लोकत्रयं वशयति क्षणमात्रकेण ॥७०॥

मजीठ, मोथा, वच, श्वेतआक की जड़, अपने शरीर का रुधिर इनके बराबर कूठ लेकर इनका तिलक मस्तक पर करने से क्षणमात्र में त्रिलोकी वश में होती है।

शम्भोर्जलं च मधुकं च कृताञ्जलिश्च
हव्यं समं निजशरीरमलेन मिश्र (पिष्ट) म् ।
आलेप भक्षणविधौ तिलके कृते वा
योगोयमेव भुवनानि वशीकरोति ॥ ७१ ॥

शुद्धपारा, शहद, लज्जावन्ती हव्य और अपने शरीर का मल इनका लेपन, भक्षण या तिलक करने से मनुष्य सब भुवनों को वशीभूत कर सकता है। (कहीं 'घृतजलं च मधुकं च' पाठ है।)

मलं जटा तगर मेष विषाणिकानां पञ्चांगजं निजशरीरमलं तथैव ।
एकीकृतानि मधुनादिवसेकुजस्यकुर्वन्तिवक्रतिलकेनवशंजगन्ति ॥७२॥

रुद्रजटा, तगर, मेढासिंगी का पंचाग और अपने शरीर का मल इन सबको एकत्र कर मंगल के दिन टेढा तिलक लगाने से मनुष्य त्रिलोकी को अपने वश में कर सकता है।

भृङ्गस्य पक्षयुगलं शुक (कुश) मांसयुक्तं
स्वानामिकारुधिर कर्णमलं स्वबीजम् ।
एतानि लेपविधिनाप्यथ भक्षणाद्वा
कुर्वंति वश्यमखिलं जगदप्यकस्मात् ॥ ७३ ॥

भौंरे के दोनों पंख, तोते का मांस, अनामिका उँगली का रुधिर, कान का मैल तथा अपना वीर्य इनका लेप या भक्षण करने से तत्काल जगत वश में होता है इसमें सन्देह नहीं हैं।

तालीश कुष्ठ तगरैः परिलिप्य वर्त्ति
सिद्धार्थतैल सहितां दृढपट्टवस्त्राम् ॥
पुंसः कपालफलके विनिपातितेन
तेनाञ्जनेनः वशतां किलयातिलोकः ॥ ७४ ॥

तालीस, कूठ तथा तगर इनका लेप करके दृढ रेशमी कपड़े की बत्ती बनावे। उसे सरसों के तेल से युक्त कर पुरुष के कपाल में कज्जल पार कर नेत्रों में आंजने से सर्वजन निश्चय वशीभूत हो जाते हैं।

गोरोचना पद्मपत्रं प्रियंगु रक्तचन्दनम्।
एकीकृत्यांजयेन्नेत्रं यं पश्यति वशीभवेत् ॥ ७५ ॥

गोरोचन, पद्मपत्र, प्रियंगु, लालचन्दन इनको एकत्र कर नेत्रों में अंजन लगाकर जिसे देखा जाय वह वश में हो जाता है। इति सर्वजनवशीकरणम्। यहाँ १०,११,१२,१३,१५ इत्यादि ३० चित्र तक यन्त्र लिखें।

अथ राजवशीकरणम्

कुंकुमश्चन्दनश्चैव रोचनं शशिमिश्रितम्।
गवांक्षीरेण तिलकं राजवश्यकरं ध्रुवम् ॥ ७६ ॥

कुमकुम, चन्दन और गोरोचन इनमें भीमसेनी कपूर मिलाकर गाय के दूध से युक्त तिलक करने से राजा अपने वश में हो जाता है।

ॐ ह्रीं सः अमुकं मे वशमानय स्वाहा।
पूर्वमेव सहस्रं जप्त्वानेन मन्त्रेण सप्ताभिमन्त्रितंतिलकं कार्यम्।
चंपकस्य तु वन्दाकं करे बद्ध्वा प्रयत्नतः ॥
संगृह्यभरणी ऋक्षेपुष्यर्क्षे वा विधानतः ॥ ७७ ॥

'ॐ ह्रीं सः अमुकं मे वशमानय स्वाहा' यह मन्त्र पहले सहस्रबार जप कर फिर सातबार इन औषधियों को अभिमन्त्रित कर तिलक लगावे। चम्पे के वन्दे को यत्नपूर्वक भरणी नक्षत्र में, अथवा पुष्य नक्षत्र में, या विधान से संग्रह करके हाथ में बाँधे।

राजानं तत्क्षणादेवमनुष्यो वशमानयेत्।
करे सुदर्शनामूलं बद्ध्वा राजप्रियो भवेत् ॥ ७८ ॥

इसे राजा को दिखाने से उसी समय राजा वश में हो जाता है; अथवा सुदर्शना की जड़ हाथ में बांधने से मनुष्य राजा को प्रिय होता है।

इति राजवशीकरणम्।

अथ स्त्रीवशीकरणम्

पुष्ये पुष्पं च संगृह्य भरण्यान्तु फलं तथा ।
शाखाञ्चैव विशाखायां हस्तेपत्रं तथैव च ॥ ७९ ॥
मूलेमूलं समुधृत्य कृष्णोन्मत्तस्य तत्क्रमात् ।
पिष्ट्वा कर्पूरसंयुक्तं कुंकुम रोचनासमम् ॥ ८० ॥
तिलकात्स्त्रीवशं यातियदिसाक्षादरुंधती ।

पुष्य नक्षत्र में काले धतूरे के फूल, भरणी में फल, विशाखा में शाखा, हस्त में पत्ते तथा मूल में जड़ लावे । इस क्रम से काले धतूरे के विभिन्न अंगों को ग्रहख कर कपूर मिलाकर पीसे । फिर इसमें कुमकुम और गोरोचन मिलाकर इसका तिलक करने से कैसी भी स्त्री, चाहे साक्षात् अरुन्धती ही क्यों न हो, वह वश में हो जाती है ।

काकजंघा वचा कुष्ठं शुक्रशोणित मिश्रितम् ॥ ८१ ॥
तद्दत्तेभोजने बालाश्मशाने रोदिति सदा ।
ॐनमो भगवतेरुद्राय ॐचामुण्डे अमुकीं मे वशमानय स्वाहा ।
उक्तयोगानामयमेवमन्त्रः ।

काकजंघा (चौंटली), वच, कूठ, वीर्य और अपना रुधिर मिलाकर खिला देने से स्त्री सदा श्मशान में रोदन करती है ('तद्धस्ते' भी पाठ है), अर्थात् जीते जी साथ न छोड़कर मरने पर भी श्मशान में सदा रोती है । इस योग का मन्त्र यह है : (ॐ नमोभगवते रुद्राय चामुण्डे अमुकीं मे वशमानय स्वाहा) ।

प्रातर्मुखन्तु प्रक्षाल्य सप्तवारभिमन्त्रितम् ।
यस्यानाम्ना पिबेत्तोयं सा स्त्रीवश्याभवेद्ध्रुवम् ॥ ८२ ॥
ॐनमः क्षिप्रकामिनी (कर्मणि) अमुकीं मे वशमानय स्वाहा ।

सातबार इस मन्त्र को पढ़कर अपना मुख सातबार धोने से जिस स्त्री का नाम लेकर जल पिये वह स्त्री अवश्य वश में हो जाती है । मन्त्र यह है : 'ॐ नमः क्षिप्रकामिनी अमुकीं मे वशमानय स्वाहा' ।

कृष्णापराजितामूलं ताम्बूलेन समायुतम् ॥
अवश्यायैस्त्रियै दद्याद्वश्याभवति नान्यथा ।
ॐ ह्रूं स्वाहा । अनेनाभिमन्त्र्य दद्यात् ॥ ८३ ॥

काली विष्णुक्रातन की जड़ पान के साथ जो अवश्या स्त्री को देता है वह अवश्या स्त्री वश में हो जाती है । 'ॐ ह्रूं स्वाहा' इस मन्त्र से उपरोक्त औषधि को अभिमन्त्रित कर देना चाहिये ।

साध्यसाधक नाम्ना तु कृत्वा सप्ताभिमन्त्रितम् ।
दीयते कुसुमं यस्यै सा वश्या भवति ध्रुवम् ॥ ८४ ॥
सुसाधितो ह्ययं मन्त्र अवश्यं फलदायकः ।
तस्मादिमं प्रयत्नेन साधयेन्मन्त्रमुत्तमम् ॥ ८५ ॥

साधक और साध्य का नाम लेकर अर्थात् अपना और स्त्री का नाम लेकर उसे सात बार अभिमन्त्रित कर जिसको फूल दिया जाय वह अवश्य वश में हो जाती है। साधना करने से यह मन्त्र अवश्य फल देने वाला होता है इस कारण इस उत्तम मन्त्र को यत्न से सिद्ध कर लेना चाहिये।

ॐ ह्रूं स्वाहा। विशाखायान्तु वन्दाकं मङ्गले च समाहरेत् ।
हस्ते बध्वा तु कुरुते वशतां वरयोषितम् ॥ ८६ ॥

'ॐ ह्रूं स्वाहा' इस मन्त्र से विशाखा नक्षत्र और मङ्गलवार के दिन दारुहल्दी की जड़ को लाकर हाथ में बाँधने से मनुष्य श्रेष्ठ स्त्रियों को अपने वश में कर लेता है। 'ॐ पाते वज्राय स्वाहा' इस मन्त्र से अभिमन्त्रित करके बाँधना चाहिये।

चित्र ३१ के यन्त्र को गोरोचन से लिखकर देवदत्त के स्थान में पृथिवी में गाड़ दे, अर्थात् जिसे वशीभूत करना हो उसके स्थान में गाड़े तो वह वश में हो जाता है।

चित्र ३२ का यन्त्र गोरोचन से भोजपत्र पर लिखकर वश में होने वाले का नाम लिखकर सदा पुष्पवाले वृक्ष के नीचे स्थापित करने से वह सात रात्रि में वश में हो जाता है।

चित्र ३३ का यन्त्र भोजपत्र पर लालचन्दन से लिखकर और वश में होने वाले का नाम लिखकर घी के बीच में तीन रात्रि तक स्थापित करने से वह वशीभूत हो जाता है। बीच में उसका नाम लिखना चाहिये।

चित्र ३४ के यन्त्र को और वश में होने वाले के नाम को कनिष्ठिका उँगली के रुधिर से गोरोचन से लिखकर शहद के बीच में स्थापन करने से वह अवश्य वशीभूत हो जाता है।

चित्र ३५ का यन्त्र गोरोचन से जिसके नाम सहित लिखकर लाल डोरे से लपेट कर हाथ में बाँधा जाय वह वश में हो जाता है।

चित्र ३६ का यन्त्र गोरोचन से लिखकर और बीच में साध्य का नाम लिखकर घृत और शहद में स्थापित करने से वह अपने वश में हो जाता है।

ॐ पाते वज्राय स्वाहा। अनेनाभिमन्त्र्य बन्धयेत् ।

कृष्णोत्पलं मधुकरस्य च पक्षयुग्मं
मूलं तथातगरजं सितकाकजंघा ।
भवेज्झटिति सा तरुणी विचित्रम् ॥ ८७ ॥

काले कमल, भौंरे के दोनों पंख, पुष्करमूल, तगर, और श्वेत काकजंघा इन सब का चूर्ण करके 'ॐ पाते वज्राय स्वाहा' इस मन्त्र से अभिमन्त्रित करके जिसके शिर पर डाले वह स्त्री तत्काल दासी हो जाती है इसमें सन्देह नहीं । कहीं मोर पंख लिखा है ।

सव्येन पाणिकमलेन रतावसानेयो रेतसा निजभवेन विलासिनीनाम् ।
वामं विलंपति पदं सहसैवयस्यावश्यैव सा भवति नात्र विकल्पभावः ।८८।

जो मनुष्य रति के अन्त में सव्य (बायें) हाथ से अपना वीर्य स्त्री के वामचरण के तलुए में मलता है वह स्त्री उसके वश में हो जाती है इसमें सन्देह नहीं ।

सिंधूत्थ माक्षिक कपोतमलानि पिष्ट्वा लिङ्गंविलिप्य तरुणी रमते नवोढाम् ।
सान्यं नयाति पुरुषं मनसापिनूनं दासीभवेदिति मनोहर दिव्यमूर्त्तिः ।८९।

जो मनुष्य सेंधानमक, शहद तथा कबूतर के बीट को पीसकर मदनांकुश में लेपकर तरुणी से रमण करता है वह स्त्री मन से भी दूसरे पुरुष के पास नहीं जाती, सदैव के लिये पुरुष की दासी हो जाती है और उस पुरुष को मनोहर दिव्य मूर्ति मानती है ।

गोरोचना शिशिरदीधिति शम्भुबीजैः काश्मीरचन्दनयुतैः कनकद्रवैश्च ।
लिप्त्वा ध्वजं परिरमत्य बालां नरोयां तस्याःस एव हृदयेमुकुटत्वमेति।९०।

गोरोचन, कुमुद, पारा, केशर, चन्दन और धतूरे का रस इनको मदनांकुश पर लेपकर स्त्री के साथ रमण करने से उस स्त्री के हृदय से वह पुरुष क्षणमात्र को भी पृथक् नहीं होता ।

पुष्ये रुद्रजटामूलं मुखस्थं कारयेद्बुधः ।
ताम्बूलादौ प्रदातव्यं वश्या भवति निश्चितम् ॥ ९१ ॥

पुष्य नक्षत्र में रुद्रजटा (शङ्करजटा) की जड़ मुख में धारण कर ताम्बूलादि में जिसको दे वह वश में हो जाती है ।

तथैव पाटलामूलं ताम्बूलेन तु वश्यकृत् ।
त्रिपत्रभण्टिकामूलं पिष्ट्वा गात्रे तु संक्षिपेत् ॥ ९२ ॥
यस्याः सा वशतां याति बिन्दुमात्रेण तत्क्षणात् ।

इसी प्रकार पाढ़ल की जड़ को ताम्बूल के साथ देने से वशीभूत करती है। बेल तथा मजीठ की जड़ पीसकर एक कण भी जिसके शरीर पर डाले वह अवश्य वश में हो जाती है, इसमें सन्देह नहीं है।

स्वकीय काममादाय कामदेवं स्मरेत्पुनः ॥ ९३ ॥
तरुण्या हृदये दत्तं तत्क्षणात्स्त्रीवशाभवेत् ।

अपने वीर्य को लेकर और कामदेव का स्मरण करके तरुणी के हृदय में रखने से स्त्री तत्काल वश में हो जाती है।

गिलित्वा पारदं किञ्चिद्रम्यते नायिका यदि ॥ ९४ ॥
प्राणान्तेपि च सा नारी तन्नरं न विमुञ्चति ।

थोड़े से शोधे हुये पारे को निगल कर यदि स्त्री के साथ रमण किया जाय तो प्राणान्त-पर्यन्त वह स्त्री उस पुरुष को नहीं छोड़ सकती।

कामाक्रान्तेन चित्तेन मासार्द्धं जपते निशि ॥ ९५ ॥
अवश्यं कुरुते वश्यं प्रसन्नो विश्वचेटकः ॥ ९६ ॥

कामयुक्त चित्त होकर रात के समय जो पन्द्रह दिन तक जप करता है वह साधक निश्चय ही सम्पूर्ण विश्व को अपने वशीभूत कर सकता है।

ऐं पिं स्थां क्लीं कामपिशाचिनी शीघ्रं अमुकीं ग्राहय ग्राहय कामेन मम रूपेण नखैर्विदारय विदारय द्रावय द्रावय स्नेहेन बंधय बंधय श्रीं फट् । अयुतद्वयेनसिद्धिः ।

ऐं पिं स्थां क्लीं कामपिशाचिनी शीघ्रं अमुकीं ग्राहय ग्राहय कामेन मम रूपेण नखैर्विदारय विदारय विद्रावय विद्रावय स्नेहेन बंधय बंधय श्रींफट् ॥' इस मन्त्र का बीस सहस्र जप करने से सिद्धि होती है। कहीं मन्त्र में 'ऐंपिस्त्रीं' पाठ है।

नागपुष्पं प्रियंगुञ्च तगरं पद्मकेशरम् ।
जटामांसी समं निम्बं चूर्णयेन्मन्त्रवित्तमः ॥ ९७ ॥
स्वाङ्गं तु धूपयेत्तेन भजतेकामवत्स्त्रियः ।
ॐ मूली मूली महामूली सर्वं संक्षोभयएभ्य उपद्रवेभ्यःस्वाहा ॥ धूपमन्त्रः ॥
पानीयस्याञ्जलीन्सप्तकृत्वा विद्यामिमां जपेत् ।
सालंकारां नरः कन्यां लभते मासमात्रतः ॥ ९८ ॥

नागपुष्प प्रियंगु तगर पद्मकेशर जटामांसी इनके समान नीम का चूर्ण लेना चाहिये। इससे अपने अंग को धूपित करने से स्त्री कामदेव के समान अपने पति को मानती है। मन्त्र यह है 'ॐ मूली मूली महामूली सर्वं संक्षोभय

संक्षोभय एभ्य उपद्रवेभ्यः स्वाहा' यह धूप का मन्त्र है। अंजली में जल लेकर इस विद्या को जपने से एक मास में साधक अलंकार युक्त स्त्री को प्राप्त करता है।

ॐ विश्वावसुर्नामगन्धर्वः कन्यानामधिपतिः सुरूपां
सालंकृतां कन्यां देहि नमस्तस्मै विश्वावसेव स्वाहा ॥
कन्यागृहे शालकाष्ठं क्षिपेदेकादशांगुलम् ।
ऋक्षे च पूर्वफाल्गुन्यां यस्तां कन्यां प्रयच्छति ॥ ९९ ॥
इति स्त्रीवशीकरणम् ।

'ॐ विश्वावसुर्नाम गन्धर्वः कन्यानामधिपतिः सुरूपां सालंकृतां कन्यां देहिनमस्तस्मै विश्वावसवे स्वाहा' । यह मन्त्र है ॥ इससे अभिमन्त्रित करके कन्या के घर में ग्यारह अंगुल का शालकाष्ठ पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में डाल देने से कन्या उसको स्वीकार करेगी। यहाँ चित्र ३१ का यन्त्र लिखें।

इति स्त्रीवशीकरणमू ।

अथ पतिवशीकरणम्

खंजरीटस्य मांसन्तु मधुना सहपेषयेत् ।
अनेन योनिलेपेन पतिर्दासोभवेद् ध्रुवम् ॥ १०० ॥

खंजरीट का मांस शहद के साथ पीसकर जो स्त्री अपनी योनि में लेपन करती है उसका पति दास के तरह वश में हो जाता है।

पञ्चाङ्गं दाडिमं पिष्ट्वा श्वेतसर्षप संयुतम् ।
योनिलेपात्पतिं दासं करोत्यपिच दुर्भगा ॥ १०१ ॥

श्वेत सरसों के साथ दाडिम के पञ्चांग को पीसकर योनि में लेपन करने से दुर्भगा भी पति को अपना दास बना लेती है।

कर्पूरं देवदारुं च सक्षौद्रं पूर्ववत्फलम् ॥ १०२ ॥

और इसी प्रकार कर्पूर, देवदारु, शहद ये भी पूर्ववत् फलको देने वाले हैं।

ॐ काम काममालिनी पतिं मे वशमानय ठः ठः ।
उक्तयोगानां सप्ताभिमन्त्रिते सिद्धिः ॥

'ॐ काम काममालिनीपतिं मे वशमानय ठः ठः' इस मन्त्र से उपरोक्त औषधियों को सात बार अभिमन्त्रित कर प्रयोग करना चाहिये।

रोचनां मत्स्यपित्तं च पिष्ट्वापि तिलकेकृते ।
वामहस्तकनिष्ठायां पतिर्दासो भवेद्ध्रुवम् ॥ १०३ ॥

गोरोचन और मछली का पित्ता पीसकर तिलक करने से, अर्थात् बायें हाथ की कनिष्ठिका उँगली से तिलक लगाने से निश्चय पति अपना दास हो जाता है।

स्वशोणितं रोचनया तिलकं पतिवश्यकृत् ।

अपने रुधिर में गोरोचन मिलाकर तिलक करने से पति अपने वश में हो जाता है ।

चित्रकस्य तु पुष्पाणि मधुयुक्तानि कारयेत् ॥ १०४ ॥
खानेपानेप्रदातव्यं पतिवश्यकरं भवेत् ।

चीते के फूल को शहद के साथ मिलाकर अन्न या पान में देने से पति अवश्य अपने वश में हो जाता है ।

भूर्जपत्रं च मधुना योनिलेपे पतिर्वशः ॥ १०५ ॥

अथवा शहद में भोजपत्र मिलाकर योनि में लेप करने से पति अपने वश में हो जाता है ।

जलौकसां मुखदेयं शम्बूशंखादिचूर्णकम् ।
तच्चूर्णं तु समागृह्य ताम्बूलेन समायुतम् ॥ १०६ ॥
दातव्यं स्वामिने भोक्तु वश्योभवति नान्यथा ।

शुद्ध पारा और शंख का चूर्ण लेकर जल जीवों के मुख में देकर फिर उस चूर्ण को ताम्बूल में मिलाकर स्वामी को भोजन के निमित्त देने से अवश्य पति वश में हो जाता है ।

गोरोचनानलदकुंकुम भावितायास्तस्याः सदैवकुरुतेतिलकं वशित्वम् ।
वात्स्यायनेन बहुधा प्रमदाजनानां सौभाग्यकृत्य समयेप्रकटीकृतोसौ।१०७।

गोरोचन, नलद (खस), कुमकुम इनको मिलाकर तिलक करने से वशीकरण होता है । यह वात्स्यायन ऋषि ने स्त्रियों की सौभाग्यवृद्धि के निमित्त प्रगट किया है ।

सम्भोगशेषसमये निजकान्तमेढ्रं या कामिनी स्पृशतिवामपदाम्बुजेन ।
तस्याः पतिस्सपदिविन्दति दासभावं गोणीसुतेन कथितः
किलयोगराजः ॥ १०८ ॥

इतिपतिवशीकरणम् ।

सम्भोग के समय जो स्त्री अपने पति की ध्वजा का वामचरण से स्पर्श करती है उसका पति सदैव के लिये उसका दास हो जाता है, ऐसा योगराज गोणीपुत्र ने कहा है । इति पतिवशीकरणम् ।

इति श्रीनित्यनाथविरचिते कामरत्ने भाषाटीकायां
वशीकरणंनाम प्रथमोपदेशः ॥ १ ॥

अथाकर्षणम्

चतुर्थवर्णमाकृष्य द्वितीयवर्गसंस्थितम् ।
कृत्वात्रिविध हाहांतंतदन्तंहेद्वितीयकम् ॥
ॐकार शिरसंकृत्वा प्रत्यक्षर प्रजापनम् ।
सहस्रार्द्धस्य जापेन फलं भवति शाश्वतम् ॥ १–२ ॥
झां झां झां हां हां हां हें हें

द्वितीय वर्ग में स्थित चौथे वर्ण से तीन संयुक्त कर, अर्थात् झकारत्रय में आकार सहित तीन हकार की योजना करने के पश्चात् एकार सहित दो हकार मिलाकर सबके ऊपर अनुस्वार लगाकर तथा आदि में ॐकार लगाकर पाँच सौ जप करने से पूर्ण फल होता है ।

मन्त्र यह है : ॐ झां झां झां हां हां हां हें हें

मानुषासुरदेवाश्च सयक्षोरगराक्षसाः ।
स्थावराजंगमाश्चैव आकृष्टास्ते वराङ्गने ॥ ३ ॥

मनुष्य, असुर, देवता, यक्ष, उरग, राक्षस, स्थावर, जंगम, यह सब इससे आकर्षित होते हैं । कहीं झूं झूं झूं पाठ है ।

हान्तेरेफं समादाय यकारस्तु विशेषतः ।
अक्षरत्रितयं तच्च द्विधाकृत्वा प्रजापयेत् ॥ ४ ॥

हकार के अन्त में रेफ लगाकर और यकार सहित अक्षर को संयुक्त कर दो भाग करके जप करे ।

भक्ष्यं द्रव्यं स्वहस्तेन कृत्वा मन्त्रविभावनम् ।
दीयते यस्य भक्ष्यन्तत्सर्वेषां प्राणिनां शुभे ॥ ५ ॥
ते सर्वे यत्रनीयन्ते तत्र गच्छंति तत्क्षणात् ।

भक्ष्यद्रव्य को अपने हाथ से बनाकर उसमें मन्त्र की भावना करके उसका भक्षण करने से सब प्राणी जहाँ ले जाओ वहीं तत्काल गमन करने लगते हैं ।

मन्त्रः हरय हरय ह्रींकारेमन्त्रयेत्पाशं हूँकारेणांकुशन्तथा ।
त्रिफलं वामगंपाशं दक्षिणे ज्वलितांकुशम् ॥ ६ ॥
संधार्यं स्वकरे मन्त्री ततो मन्त्रमिमं जपेत् ॥ ७ ॥

मन्त्र यह है : 'हरय हरय ह्रीं' से पाश को अभिमन्त्रित कर, हूँ से अंकुश

को अभिमन्त्रित कर, त्रिफल वाम और पाश को, दक्षिण ओर प्रज्वलित अंकुश को मन्त्रवाला अपने हाथ में धारण कर, फिर इस मन्त्र को जपे :

ॐ ह्रीं रक्ष रक्ष चामुण्डेतुरु तुरु अमुकीमाकर्षय
आकर्षय ह्रीं अस्य मन्त्रस्यपूर्वमेवायुतं जपेत्सिद्धिः ।

'ॐ ह्रीं रक्ष रक्ष चामुण्डे तुरु तुरु अमुकीमाकर्षय आकर्षय ह्रीं' इस मन्त्र को १०,००० बार जपने से सिद्धि होती है ।

ॐ चामुण्डे ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल स्वाहा । अमुंमन्त्रं स्त्रियंदृष्ट्वा जपेत्तत्क्षणात् सा स्त्रीपृष्ठतः समागच्छतिपूर्वमयुतं जपेत्ततसिद्धिः।

इस अगले मन्त्र को स्त्री को देखकर जपने से तत्काल स्त्री उसके पीछे-पीछे चली आती है। मन्त्र यह है 'ॐ चामुण्डे ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल स्वाहा । यह मन्त्र भी प्रथम के समान १०,००० जपने से सिद्ध होता है ।

आश्लेषायां समादाय अर्जुनस्य तु वृध्नकम् ।
अजामूत्रेणसंपिष्य स्त्रीणां शिरसि दापयेत् ॥
पुरुषस्य पशूनां वाक्षिपेदाकर्षणं भवेत् ।

आश्लेषा नक्षत्र में अर्जुन वृक्ष के वन्दे को लाकर बकरी के मूत्र से पीसकर जिस स्त्री के शिर पर डाले अथवा जिस पुरुष या पशु के ऊपर डाले वह तत्काल आकर्षित हो जाता है ।

साध्यावामपदस्थां तां मृत्तिकामाहरेत्ततः ॥
कृकलासस्य रक्तेनप्रतिमां कारयेत्ततः ।
साध्यानामाक्षरं तस्यास्तद्रक्तैर्विलिखेद्धृदि ॥ ८-१० ॥
मूत्रस्थाने च निखनेत्सदा तत्रैव मूत्रयेत् ।
आकर्षयेत्ततां नारी शतयोजन संस्थिताम् ॥

जिसका आकर्षण करना हो उसके वामचरण के नीचे की मृत्तिका लाकर गिरगिट के रुधिर से उस मिट्टी का पुतला बनावे और हृदय में उसके रुधिर से आकर्षण वाले प्राणी का नाम लिखे और मूत्रस्थानपर गाड़कर सदा उसी स्थान में मूत्र करे । इससे सौ योजन पर स्थित हुई भी स्त्री आकर्षित हो जाती है ।

सूर्यावर्त्तस्य मूलन्तु पञ्चम्यां ग्राहयेद्बुधः ।
ताम्बूलेन समं दद्यात्स्वयमायाति तत्क्षणात् ॥

बुद्धिमान् पञ्चमी के दिन सूर्यावर्त (शाकविशेष, क्षुप, हुड़हुड़िया) की जड़ लाकर जिसको पान में मिलाकर दे वह तत्काल पीछे-पीछे स्वयम् आ जाती है ।

रतिकर्मकरौ ग्राह्यौ भ्रमरौ यत्नतो बुधैः ।
भिन्नौ कृत्वा दहेत्तौ तु चिताकाष्ठैस्तयोः पुनः ॥
वस्त्रेण बन्धयेद्भस्म पृथग्वै पुटलीद्वयम् ।
तयोरेकामजाशृंगे दृढं बद्ध्वा परीक्षयेत् ॥ ११–१४ ॥

जिस समय भौंरा भौंरी रति करते हों उस समय उनको ग्रहण करके अलग करके चित्ता काष्ठ में उनको जला दे और उनकी भस्म पृथक् पृथक् वस्त्र में ग्रहण कर पोटली बना ले। उनमें से एक को बकरी के सींग में दृढ बाँधकर परीक्षा करे।

यां यां याति च सामेषी सा पृथग्गृह्यते बुधैः ।
तद्भस्म शिरसिन्यस्तं क्षणादाकर्षयेत्स्त्रियः ।
अपरं रक्षयेद्वस्त्रेनोचेन्नायाति कामिनी ॥
ॐ कृष्णवर्णाय स्वाहा । इमं मन्त्र पूर्वमेकायुतं
जपेत्तत उक्तयोगमभिमन्त्र्य सिद्धिः ॥ १६ ॥

जिस जिस को वह स्पर्श करे उसकी पृथक् रक्षा करे। उस भस्म को शिर पर डालने से तत्काल स्त्री आकर्षित होती है। दूसरी को वस्त्र में रक्षा करे नहीं तो स्त्री कदाचित् नहीं आवेगी। 'ॐ कृष्ण वर्णाय स्वाहा' इस मन्त्र को १०,००० जपने से इस योग की सिद्धि होती है। चित्र ३६ से ५० तक यन्त्र द्रष्टव्य।

इति श्रीनित्यनाथविरचितेकामरत्ने आकर्षणं नामद्वितीयोपदेशः ॥२॥

अथ जयः

हकारं स्वरसंयुक्तमुकारेण सुपूजितम् ।
ॐ कारेण च संपूज्य अग्रे फट् विनियोजयेत् ॥ १ ॥
ॐ हुं फट् । जेयाग्रे शतजापेन जितो भवति नान्यथा ।

हकार को स्वर संयुक्त उकार से पूजित और ॐकार युक्त कर अन्त में फट् लगावे। जिसको जीतने की इच्छा हो उस पुरुष के आगे 'ॐ हुं फट्' मन्त्र को सौ बार जपने से उसे जीता जाता है इसमें सन्देह नहीं।

जेय नाम हृदिन्यस्य चक्षुषा तन्निमील्य च ॥ २ ॥
स्पृष्ट्वा च मन्त्रजापेन तत्क्षणाज्जितवानसौ ।

जिस किसी के नाम को हृदय में रखकर नेत्र से उसका निरीक्षण करके और स्पर्श कर मन्त्र जपे वह तत्काल जीत लिया जाता है।

गोजिह्वा शिखिमूली वा मुखेशिरसि संस्थिता ॥ ३ ॥
कुरुते सर्ववादेषु जयं पुष्ये समुद्धृता ।

गाजुवाँ, चीता, पुष्करमूल शिर पर रखने से और पुष्यनक्षत्र में उखाड़ कर लाने से सभी वाद में जय प्राप्त होती है ।

मार्गशीर्षस्य पूर्णायां शिखीमूलं समुद्धरेत् ॥ ४ ॥
बाहौशिरसिवाधार्यं विवादे विजयो भवेत् ।

मार्गशीर्ष की पूर्णमासी को शिखी की मूल उखाड़कर लाकर उसे भुजा में और शिर पर धारण करने से सब विवाद में विजय प्राप्त होती है इसमें सन्देह नहीं ।

गिरिकर्णी शमीं गुञ्जां श्वेतवर्णां समाहरेत् ॥ ५ ॥
चन्दनेनान्वितं सर्वं तिलकेन जयी भवेत् ।

गिरिकर्णी (कोयल), शमी (झंड), श्वेत चौंटली इनको लेकर चन्दन से युक्त कर तिलक लगाने से युद्ध में विजय प्राप्त होती है ।

कनकार्कवटो वह्निर्विद्रुम पञ्चमस्तथा ॥ ६ ॥
तिलकं कुरुते यस्तु पश्येत्तं पञ्चधा रिपुः ।

धतूरा, आक, वट, चीता, सूंगा इनका जो तिलक लगाता है उसको शत्रु पाँच प्रकार से देखता है अर्थात् अपने से पाँचगुना जानता है ।

कृष्णसर्प कपाले तु वसा मृत्तिकयान्विते ॥ ७ ॥
सितगुञ्जां वपेत्तत्र तस्यामूलं समाहरेत् ।
कृत तिलकं तदा दृष्ट्वा पश्येत्स्वंसम्भृतं रिपुः ॥ ८ ॥

काले साँप की खोपड़ी में चर्बी व मृत्तिका युक्त कर श्वेत चौंटली बोवे । फिर उसकी जड़ लेकर तिलक करने से साधक शत्रु को सब प्रकार से रक्षित दिखाई देता है ।

श्वगणैर्भक्ष्यमाणं च पतितं च ततो भुवि ।
औषधी सिंहिकानाम तयाघृष्टो महारसः ॥ ९ ॥
सिंही कपर्दिका मध्ये क्षेप्यस्तन्मूलसंयुतः ।
पिधाय वदनन्तस्यालिक्थकेन समन्वितः ॥ १० ॥
तस्यां वक्त्रस्थितायां तु सिंहवज्ज्ञायते नरः ।
रणे राजकुले द्यूते विवादे चापराजितः ॥ ११ ॥
मदोन्मत्तो गजस्तस्य दर्शनेन पराङ्मुखः ।

श्वगणों के भक्षण करने से जो पृथिवी पर गिरी सिंहिका नामक औषधी का महारस घिसे (कहीं 'स्वगणैः' स्वगतैः पाठ है) उस सिंहिका (कटेरी) को कौड़ी के बीच में रख ले फिर कटेरी की जड़ के सहित उसका मुख मोम

से बन्द करे। उसके मुख में स्थित होने से साधक सिंह के समान हो जाता है और युद्ध में, राजकुल में, जुए अथवा वाद में कहीं भी पराजित नहीं होता। उसे देखकर मदोन्मत्त हाथी भी पराङ्मुख हो जाता है।

व्याघ्रीरसेन संघृष्टः पारदोमूलसंयुतः।
पूर्ववत्साधयेद्व्याघ्रीं फलं चैव तथाविधम् ॥ १२ ॥

व्याघ्री (कटेरी) के फल में मूल सहित पारा घिसने से पूर्ववत् यह कटेरी विजय की प्राप्ति कराती है इसमें सन्देह नहीं।

करे सुदर्शनामूलं बद्ध्वा राजकुले जयी।
जयामूलं राजकुले मुखसंस्थं जयप्रदम् ॥ १३ ॥

सुदर्शना की जड़ हाथ में बाँधने से राजकुल में, मुकदमे में, विजय प्राप्त होती है और जया (जयन्ती) की जड़ मुख में रखने से राजकुल में जय प्राप्त होती है।

आर्द्रायां वटवन्दाकं हस्ते बद्ध्वाऽपराजितः।

आर्द्रा नक्षत्र में वट के वन्दे को हाथ में बाँधने से विजयी होता है।

तट्टके चूतवन्दाकं गृहीत्वा धारयेत्करे ॥ १४ ॥
संग्रामे जयमाप्नोति जयां स्मृत्वा जयी भवेत्।

इसी प्रकार आर्द्रा में आम का वन्दा हाथ में धारण करने से जहाँ जाय उसे सर्वत्र जय प्राप्त होती है तथा जयन्ती को स्मरण करने से (रण में) जय प्राप्त होती है।

कोकाया नयनं वामं गुडलोहेन वेष्टयेत् ॥ १५ ॥
मुखेप्रक्षिप्य च नरःसर्ववादे जयी भवेत्।

कोका का बायाँ नेत्र गुड़ और लोहे में लपेट कर मुख पर लेप करने से मनुष्य सम्पूर्ण वादों में जय प्राप्त करता है।

कृत्तिका च विशाखा च भौमवारेण संयुता ॥ १६ ॥
तद्दिने घटितं शस्त्रं संग्रामे जयदायकम्।

जब कृत्तिका और विशाखा नक्षत्र से युक्त भौमवार हो तो उस दिन बना हुआ शस्त्र संग्राम में जयदायक होता है।

अपामार्ग रसेनैव यानि शस्त्राणि लिप्यते ॥ १७ ॥
जायन्ते तानि संग्रामे वज्रसाराणि निश्चितम्।
पूर्वोक्त मन्त्रराजेन सर्वाण्येतानि मन्त्रयेत् ॥ १८ ॥
सर्वेषामुक्तयोगानां सिद्धिर्भवति ते ध्रुवम्।

चिरचिटे के रस में जितने शस्त्र लिप्त किये जायँ वे संग्राम में वज्रसार के

समान हो जाते हैं इसमें सन्देह नहीं। पूर्वोक्त मन्त्रराज द्वारा सम्पूर्ण अस्त्रों को अभिमन्त्रित कर लेना चाहिये। इससे निश्चय सम्पूर्ण योगों की सिद्धि होती है।

हस्तार्के लांगलीमूलं मूलमन्त्राभिमन्त्रितम् ॥ १९ ॥
तच्चूर्णोद्वर्त्तनान्मल्लोमल्लान्मोहयते बहून ॥ २० ॥
मन्त्रः ॐ नमो महाबलपराक्रम शस्त्रविद्याविशारद अमुकस्य भुजबलं बन्धय बन्धय दृष्टिं स्तम्भय स्तम्भय अङ्गानि धूनय धूनय पातय पातय महीतले हूँ ॥ इतिविजयप्रकरणम् ॥

हस्त नक्षत्र में लांगली (कलिहारी) की जड़ को मूल मन्त्र से अभिमन्त्रित करके उसके चूर्ण को छोटा पहलवान भी शरीर में मलकर दूसरे पहलवान को पछाड़ सकता है। मन्त्र यह है 'ॐ नमो महाबल पराक्रम शस्त्र विद्या-विशारद अमुकस्य भुजबलं बन्धय बन्धय दृष्टिं स्तम्भय स्तम्भय अङ्गानि धूनय धूनय पातय पातय महीतले हूं'। यहाँ चित्र ५३ से ६५ तक यन्त्र लिखें।

इति विजयप्रकरणम्।

अथ सौभाग्यम्

पुष्योद्धृतं सितार्कस्य मूलं वामेतरेभुजे।
बद्ध्वासौ भाग्यमाप्नोति स्वामिनो दुर्भगापि सा ॥ २१ ॥

अथ सौभाग्यप्रकरण। श्वेत आक की जड़ पुष्य नक्षत्र में उखाड़ कर दाहिनी भुजा में बाँधने से दुर्भगा स्त्री भी स्वामी से सौभाग्य को प्राप्त होती है।

रक्तचित्रकमूलन्तु सोमग्रस्ते समुद्धृतम्।
क्षौद्रैःपिष्ट्वा वटीः कुर्यात्तिलकैः सुभगाङ्गना ॥ २२ ॥

चन्द्रग्रहण में रक्त चीते की जड़ उखाड़कर शहद से पीसकर तिलक लगाने से सौभाग्य होता है। यहाँ चित्र ६६, ६७, ६८, ७१, ७२ के यन्त्र लिखें।

इति सौभाग्यम्।

अथेश्वरादीनां क्रोधोपशमनम्।
ॐ शान्ते प्रशान्ते सर्वक्रुद्धोपशमनि स्वाहा।
अनेन मन्त्रेण त्रिसप्तधा जप्तेन मुखमार्जनात् क्रोधोपशमनं भवति।
प्रसादपरो भवति इतीश्वरादीनां क्रोधोपशमनम् ॥

ईश्वर आदि का क्रोध शान्त करना। 'ॐ शान्ते प्रशान्ते सर्व क्रुद्धोपशमनि स्वाहा' इस मन्त्र से २१ बार जप कर मुख धोने से क्रोध शान्त और प्रसाद करने वाला होता है। इति। यहाँ चित्र ६९, ७०, ७५ के यन्त्र देखिये।

अथ गजनिवारणम्

गृहीत्वा शुभनक्षत्रे चूर्णयेत्तां छुछुन्दरीम् ।
तल्लेपेन गजोयाति दूरेण खलु सम्मुखम् ॥ २३ ॥

शुभ नक्षत्र में ग्रहणकर छुछुन्दर को भली प्रकार चूर्ण करके उसका लेप करने से देखते ही हाथी भाग जाता है ।

बिल्वपुष्पस्य चूर्णन्तु छुछुन्दर्याश्च तत्समम् ।
तल्लिप्ताङ्गं नरं दृष्ट्वा दूरे गच्छति कुंजरः ॥ २४ ॥

बेल के फूल का चूर्ण छुछुन्दर के साथ शरीर के ऊपर लेप करने से हाथी दूर से भाग जाता है ।

मूलं मर्कटवल्याश्च बाहौबद्धं च मूर्द्धनि ।
दुष्टदंतिहरं दूरं चित्रं संयाति जायते ॥ २५ ॥

कौंछ की जड़ बाहु और शिर पर बाँधने से दुष्ट हाथी दूर से भाग जाता है या चित्रवत् हो जाता है ।

श्वेतापराजितामूलं हस्तस्थं वारयेद्गजम् ।
मूलं त्रिशूल्या वक्त्रस्थं गजवश्यकरं ध्रुवम् ॥ २६ ॥

श्वेत विष्णुक्रान्ता की जड़ हाथ में रखने से गज निवारण होता है । त्रिशूली (बेल) की जड़ मुख में रखने से भी हाथी वश में हो जाता है ।

इति गजनिवारणम् ।

अथ व्याघ्रनिवारणम्

मुखस्थं बृहतीमूलं हस्तस्थं व्याघ्रभीतिजित् ।
ह्रीं ह्रीं श्रीं द्रौं द्रौं हि एति अथवा क्रीं ह्रीं ॐ ह्रीं ह्रीं ॥
इत्यष्टाक्षरमन्त्रेण लोष्टं पठित्वा क्षिपेत् ।
तदा मुखं न चालयति गन्तुमशक्तः ॥
मूलं कृष्णचतुर्दश्यां ग्राहयेल्लाङ्गलीभवम् ।
हस्तस्थं व्याघ्रसिंहादि भयहृत्परिकीर्तितम् ॥ २७ ॥

अथ व्याघ्रनिवारण ॥ कटेहरी की जड़ को हाथ में या मुख में रखने से व्याघ्र का भय दूर हो जाता है । 'ह्रीं ह्रीं श्रीं द्रौं द्रौं हि एति' अथवा 'क्रीं ह्रीं ॐ ह्रीं ह्रीं' इन मन्त्रों से आठबार मिट्टी को पढ़कर व्याघ्र के ऊपर फेंकने से न वह मुख चला सकेगा और न चल सकेगा । कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को कलिहारी की जड़ ग्रहण कर हाथ में रखने से ही सिंहव्याघ्रादि का भय दूर हो जाता है ।

इति श्रीनित्यानाथविरचितेकामरत्ने भाषाटीकायां विजयादि-
व्याघ्रनिवारणं नाम तृतीयोपदेशः ॥ ३ ॥

अथ शत्रूणां मुखस्तम्भनम्

मेघनादस्य मूलन्तु मुखस्थं तारवेष्टितम् ।
परवादी भवेन्मूकोऽथवा याति दिगन्तरम् ॥ १ ॥

नागरमोथा की जड़ को चाँदी में लपेट कर मुख में रखने से वादी मूक हो जायगा या दूर दिशा को चला जायगा ।

श्वेतगुञ्जोत्थितं मूलं मुखस्थं पुष्टतुण्डजित् ।
ॐ ह्रीं रक्ष चामुण्डे तुरु अमुकं मे वशमानय स्वाहा ॥ २ ॥
अयं चामुण्डामन्त्र उक्तयोगयोः सिद्धिकरः ।

श्वेत चौंटली की जड़ मुख में रखने से साधक शत्रु को जीतता है । मन्त्र यह है : 'ॐ ह्रीं रक्ष चामुण्डे तुरुतुरु अमुकं मे वशमानय स्वाहा ।

इस चामुण्डा के मन्त्र को पढ़ने से उक्त योग की सिद्धि होती है ।

पुष्यार्के मधुवन्दाकं गृहीत्वा प्रक्षिपेद्बुधः ।
सभामध्ये च सर्वेषां मुखस्तम्भः प्रजायते ॥ ३ ॥

पुष्यनक्षत्र में मुलेठी का वन्दा ग्रहण कर सभा के बीच में फेंक देने से सब का मुख स्तम्भित हो जाता है ।

मूलं बृहत्या मधुकं पिष्ट्वा नस्यं समाचरेत् ।
निद्रास्तम्भनमेतद्धि मूलदेवेन भाषितम् ॥ ४ ॥

कटेरी की जड़ और मुलेठी को पीसकर नस्य लेने से निद्रा दूर हो जाती है ऐसा मूलदेव ने कहा है । यहाँ चित्र ७५ से ८२ तक यन्त्र लिखें ।

इति निद्रास्तम्भनम् ।

भरण्यां क्षीरिकाष्ठस्य कीलं पञ्चांगुलं क्षिपेत् ।
नौकामध्ये तदा नौका स्तंभनं जायते ध्रुवम् ॥ ५ ॥

भरणी नक्षत्र में क्षीरी काष्ठ की पाँच अंगुल की कील नौका में डालने से नौका की गति निश्चित रूप से स्तम्भित होती है ।

अथ शस्त्रस्तम्भनम्

अंकुली च जटापाठा विष्णुक्रान्ता च पाटली ।
श्वेतापराजिता पुंसां सहदेवी काकजंघिका ॥ ६ ॥

पुष्यर्क्षेण समुद्धृत्य वक्त्रे शिरसि संस्थिता ।
एकैकं वारयत्येव शस्त्रसंघट्टने भृणाम् ॥ ७ ॥

अंकुली या अंकुशी, रुद्रजटा, पाठा, विष्णुक्रान्ता, पाढल, श्वेत जयन्ती, सहदेई, काकजंघा, इन्हें पुष्यनक्षत्र में उखाड़ कर मुख में तथा शिर में रखने से साधक युद्ध में एक एक मनुष्य का निवारण कर सकता है ।

बद्ध्वा तु व्याघ्र भूपाल चौर शत्रुभयं जयेत् ।

मेली की जड़ को बाँधने से व्याघ्र, राजा, चोर और शत्रु का भय दूर होकर विजय होती है (कहीं 'वह्नचम्बु' पाठ है) । यह जल और अग्नि का भी भय दूर करती है ।

जातीमूलं मुखेक्षिप्तं शत्रुस्तम्भनमुत्तमम् ॥ ८ ॥

चमेली की जड़ को मुख में रखने से शत्रु का स्तम्भन होता है ।

सूर्यस्य ग्रहणे चेन्दोर्मूलं चोत्तरगो हरेत् ।
पुंखायाः पाटलाया वा मुखस्थं काण्डशस्त्रहृत् ॥ ९ ॥

सूर्य के ग्रहण में अथवा चन्द्र के ग्रहण में उत्तर की ओर जाकर शुद्धता से सरफोका अथवा लाल लोध की जड़ को ग्रहण कर ले । इसको मुख में रखने से साधक सम्पूर्ण शस्त्रसमूह का स्तम्भन कर सकता है ।

कपित्थस्य च वन्दाकं कृत्तिकायां समुद्धरेत् ।
वक्त्रसंस्थं तदेव स्यात्खड्गस्तम्भकरं परम् ॥ १० ॥

कृत्तिका नक्षत्र में कैथ के वन्दे को ग्रहण करके मुख में रखने से खड्ग का स्तम्भन होता है ।

करे सुदर्शनामूलं बद्ध्वास्त्र स्तम्भनं भवेत् ।

हाथ में सुदर्शना की जड़ बाँधने से शस्त्रों का स्तम्भन हो जाता है ।

केतकीमस्तके नेत्रे तालमूलं मुखे स्थितम् ॥ ११ ॥
खर्जूरं च रणे हस्ते खड्गस्तम्भः प्रजायते ।
एतानि त्रीणि मूलानि चूर्णितानि घृतैः पिबेत् ॥ १२ ॥
त्र्यहं रात्रौ ततः सर्वैर्यावज्जीवं न बाध्यते ।

केतकी को मस्तक पर, नेत्र में, तालमूल अथवा मुख में रखने से तथा खजूर को रण में हाथ में रखने से खड्ग स्तम्भित हो जाता है । इन तीनों के मूल को चूर्णकर घी के साथ पीने से रात-दिन जीवन पर्यन्त स्तम्भन होता है ।

सर्वेषामुक्तयोगानां कुम्भकर्णः प्रसीदति ॥ १३ ॥
आयान्तं सैन्यकं शस्त्रसमूहं विनिवारयेत् ।

ॐ अहो ! कुम्भकर्ण महाराक्षस कैकसीगर्भसंभूत परसैन्यं स्तम्भय महाभगवान्रुद्रः प्राज्ञापयति स्वाहा ।
सर्वयोगानामष्टोत्तरंशतं जपेत्सिद्धिः ।

इन युक्त योगों से कुम्भकरण प्रसन्न हो जाय तो आती हुई शत्रुसेना का निवारण कर सकता है । मन्त्र यह है 'ॐ अहो कुम्भकर्ण महाराक्षस कैकसी (निकषा) गर्भसम्भूत परसैन्यं स्तम्भय महाभगवान् रुद्रःप्राज्ञापयति स्वाहा ।' सब योगों में यह मन्त्र एक सौ आठ बार जपने से सिद्धि होती है ।

वक्री चक्री तथावज्री त्रिशूली मुशली तथा ।
देहस्था समरे पुंसां सर्वायुध निवारिणी ॥ १४ ॥

वक्री, चक्री, वज्री, त्रिशूली, मुशली यह नाम देह में स्थित समर में पुरुष के सम्पूर्णायुधों का निवारण करने वाले हैं ।

गृहीतं शुभनक्षत्रे ह्यपामार्गस्य मूलकम् ।
लेपमात्रेण वीराणां सर्वशस्त्रनिवारणम् ॥ १५ ॥

चिरचिटे की जड़ अच्छे नक्षत्र में ग्रहण करके इसके लेपमात्र से वीरों के सब शस्त्रों का निवारण हो जाता है ।

खर्जूरीमुखमध्यस्था कट्यां बद्ध्वा च केतकीम् ।
भुजदण्डस्थितश्चार्कः सर्वशस्त्रनिवारणः ॥ १६ ॥

खजूँरी मुख में स्थित करने तथा कमर के मध्य में केतकी, भुजदण्ड में स्थित आक यह सब शस्त्रों का निवारण करने वाले हैं ।

पुष्यर्क्षे श्वेतगुञ्जायामूलमुद्धृत्य धारयेत् ।
हस्ते काण्डं भयं नास्ति संग्रामे च कदाचन ॥ १७ ॥

पुष्य नक्षत्र में श्वेत चौंटली की जड़ हाथ में धारण करने से कदाचित् शस्त्र का भय नहीं रहता ।

त्रिलोह वेष्टितं कृत्वा रसं वज्राभ्रसंयुतम् ।
वक्त्रस्थश्च करस्थश्च सर्वायुधनिवारणम् ॥ १८ ॥

सोना, चाँदी तथा ताँबे के सहित रस वज्राभ्र (पारा, अभ्रक) वेष्टित करके मुख में स्थित या हाथ में स्थित सम्पूर्ण आयुधों का निवारण करने वाला है ।

ब्रह्मदण्डी च कौमारी ईश्वरी वैष्णवी तथा ।
वाराही वज्रिणी चान्द्री महालक्ष्मीस्तथैव च ॥ १९ ॥
एताश्चौषधयो दिव्यास्तथैता मातरः स्मृताः ।
स्मृत्वा चैव करेबद्ध्वा सर्वशस्त्रनिवारणी ॥ २० ॥

ब्रह्मदण्डी, कौमारी, ईश्वरी, वैष्णवी, वाराही, वज्रिणी, चान्द्री, महालक्ष्मी इन माताओं का स्मरण कर यह दिव्य औषधि हाथ में बाँधने से सब शस्त्रों का निवारण हो जाता है।

इतिशस्त्रस्तम्भनम्।

अथाग्निस्तम्भनम्

ॐ शंकर हर हर अग्नि स्तम्भय स्तम्भय अनेनाग्नौ फूत्कारं दत्त्वा अग्निस्तम्भयति।

ॐशंकर हरहर अग्निस्तम्भय स्तम्भय (अनेन अग्नौ फूत्कारं दत्त्वा अग्निस्तम्भयति) इस मन्त्र से फूंक मारने से अग्नि थम जाती है।

जप्त्वा जटीन्नरोदेवीं तारां महिषमर्दिनीम्।
खदिराङ्गारमध्ये तु प्रविष्टो सौ न दह्यते ॥ २१ ॥

जटी, तारा, महिषमर्दिनी मन्त्र से १०,००० जप करके फिर खैर के अंगारों में घुस जाने से भी मनुष्य नहीं जलता। यहाँ चित्र ८४ का यन्त्र लिखें।

ॐ मत्कटिं तच्छयघनेशे कटीयमनीय श्रीअलिप्य प्रायम्बुदीये-वशनरकीर्य मन्त्री क्रीं फट। ॐ क्रीं महिषवाहिनी जम्भय जम्भय मोहय मोहय भेदय भेदय अग्निस्तम्भय स्तम्भय ठः ठः ॥ एतन्मन्त्रद्वयं पूर्वमेवायुतं जपेत्तेन सिद्धिः ॥ वा मत्त-कटीटछयघने सेकटीयमूलीयसी आलिप्याग्नायमुदीयतेशनक-वीज्जे मन्दी ह्रीं फट् ॐ ह्रीं महिष वाहिनी स्तभय मोहय भेदय अग्निस्तम्भय 'ठः ठः' वा पाठः।

ॐ मत्कटिं तच्छय घनेशे कटीय मनीय श्री अलिप्य प्रायम्बुदीये वशनरकीर्य मन्त्री क्रीं फट्॥ ॐ क्रीं महिषवाहिनी जम्भय जम्भय भेदय भेदय अग्निस्तम्भय स्तम्भय ठः ठः' इन दोनों मन्त्रों का दस-दस हजार जप करने से सिद्धि हो जाती है।

कुमारी शूरणंपिष्ट्वा लिप्तहस्तो नरोभवेत्।
दीप्तांगारैस्ततो लोहैर्मन्त्रयुक्तैर्न दह्यते ॥ २२ ॥

जो मनुष्य घीकुवार और जमीकन्द को हाथ में लपेट ले वह दीप्त अङ्गार और जलते हुए लोहे को हाथ में उठा सकता है। (कहीं 'कुमारीरसकं' पाठ है)।

करेसुदर्शनामूलं बद्ध्वाग्निस्तम्भनं भवेत्।
अत्र मन्त्रलेखनं पश्चात्॥

पीछे लिखे मन्त्र को पढ़ कर हाथ में सुदर्शना की जड़ बाँधने से अग्निस्तम्भित होती है।

अथ जलस्तम्भनम्

पद्मकं नामयद्द्रव्यं सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत्।
वापीकूपतडागेषु निःक्षिपेद्बन्धयेज्जलम् ॥ २३ ॥

अथ जलस्तम्भन। पद्मक (पद्माख) नामक द्रव्य चूर्ण कर के बावड़ी, कूप, तडाग आदि में डालने से जल थम जाता है।

ॐ नमो भगवते रुद्राय जलं स्तम्भय स्तम्भय ठःठःठः।
क्षणार्द्धेन घटं भित्त्वाज्जलं तत्रैव तिष्ठति ॥ २४ ॥

मन्त्र 'ॐ नमो भगवते रुद्राय जल स्तम्भय स्तम्भय ठः ठः ठः।' यह मन्त्र पढ़कर क्षणार्ध में, घट भेदित होने से भी, जल उसमें स्थित रहता है।

देवदालीयमूलं तु मण्डूकरसयोजितम्।
लेपयेद्धस्तपादौ तु जलस्तम्भनमुत्तमम् ॥ २५ ॥

घघरबेल की जड़ को मेढक के रस में युक्त कर हाथ-पैर में लपेटने से जल का स्तम्भन हो जाता है। चित्र ८५ का यन्त्र देखें तथा चित्र ८७ का यन्त्र लिखें।

श्लेष्मान्तकस्य पिष्टेनकर्त्तव्यं पादुकाद्वयम्।
गोधाचर्ममयं बद्धं कृत्वा रूढो भवेज्जले ॥ २६ ॥

दोनों खड़ाऊँ पर लिसोढे को पीस लपेटकर गोय के चर्म का बन्धन बाँधकर साधक जल पर चल सकता है।

श्लेष्मान्तकफलंचूर्णं मर्द्दयित्वा लिपेद्घटम्।
घनमंगुलमात्रं तु शोषयेत्पूरयेज्जलैः ॥ २७ ॥

लिसोड़े के फल को चूर्णकर घड़े पर इतना लेप करे जिससे वह एक अंगुल मात्र मोटा हा जाय। इससे जल पूर्ण और शोषित हो जाता है।

शिरीषमूलमादाय रविवारे तु पूर्वजम्।
उदकेन सहाघृष्टं लटाटे तिलके कृते ॥ २८ ॥

इतवार के दिन शिरस की जड़ लाकर जल के साथ घिसकर माथे पर तिलक करने से देखने वाला स्तम्भित हो जाता है।

अथ द्रव्यस्तम्भनम्

तप्तद्रव्ये तथा सर्वंकृत दोषोविमुच्यते।
उत्तराभिमुखं ग्राह्यं मेघनादस्य मूलकम् ॥ २९ ॥

अथ द्रव्य स्तम्भन । तप्त द्रव्य पदार्थ में सब दोष छूट जाते हैं । उत्तर की ओर मुखकर ढाक की जड़ ग्रहण करने से तप्त वस्तु गरम नहीं लगती ।

भक्षयेद्धारयेद्वस्त्रैर्द्रव्यस्तम्भकरं परम् ।

उसे भक्षण कर वस्त्र द्वारा धारण करने से द्रव्य पदार्थ स्तम्भित हो जाते हैं । चित्र ८६ का यन्त्र लिखें ।

श्वेतगुञ्जोत्थितं मूलमृक्षे उत्तरभाद्रके ॥ ३० ॥
उत्तराभिमुखं ग्राह्यं द्रव्यस्तम्भकरं मुखे ।

उत्तराभाद्रपद नक्षत्र में श्वेत चौंटली की जड़ उत्तर की ओर मुखकर ग्रहण करे । उसे मुख में धारण करने से द्रव्य का स्तम्भन होता है ।

भृंगीमूलं रोचनां च पिष्ट्वा पाणौ प्रलेपयेत् ॥ ३१ ॥
ललाटे तिलकं कृत्वा तप्त द्रव्यजयी भवेत् ।

भाँगरे की जड़ गोरोचन के साथ पीसकर हाथ में लपेटे । इसका मस्तक में तिलक करने से साधक तप्त द्रव्य पदार्थ को जीतने वाला होता है ।

मरिचं मागधी चैला चर्वितागिलिता सती ॥ ३२ ॥
रवितण्डुलजैर्द्रव्यैः कृतदोषोविमुच्यते ।

काली मिर्च, पीपल और इलायची इन्हें चबाने या निगलने से आक और तन्दुल से उत्पन्न सब प्रकार के दोष छूट जाते हैं ।

आज्यं शर्करया पीत्वा चर्वित्वानागरं वचाम् ॥ ३३ ॥
तप्तलोहं लिहेत्पश्चात्कृतदोषो विमुच्यते ।

घी, चीनी, सोंठ और वच मिलाकर मुख में रखने से गर्म लोहे को चाटने से भी उसका दोष नहीं लगता ।

मण्डूकरस संपिष्टैर्लज्जामूलैर्वनक्तकैः ॥ ३४ ॥
लिप्त पाणिर्नरः सत्ये तप्तद्रव्ये विशुद्धयति ।

सोनापाठा के रस में लज्जावन्ती की जड़ पीसकर उसे हाथ में लगाने पर मनुष्य द्रव्य पदार्थ के ताप से शुद्ध होता है, अर्थात् उसका शरीर जलता नहीं । चित्र ८३ का यन्त्र लिखें ।

ॐ अग्नी दहन्ती कोधरै मैं धरोजातीनाभावाछुछि निददो दिव्य पतितस्तम्भे ईश्वरो महेशः । एतेस्तम्भन श्रीमहादेव की आज्ञाअमुं मन्त्रमयुतं जपेद्रव्ये सिद्धिर्भवति ।
ॐलोहा प्रज्वले कोइला के भानु हौ चण्ड केदार का पडीलोहा पडौ तुषार । अयन्तु लौहद्रव्यस्तम्भन मन्त्रः ॥

मन्त्र 'ॐ अग्नीदहन्तीकोधरैमैंधरोजातीनाभावाछुछिनिददो दिव्यपति-स्तम्भेईश्वरोमहेशः। एतेन स्तम्भनम् श्री महादेव की आज्ञा'। इस मन्त्र को १०,००० जपने से सिद्धि होती है। 'ॐ लोहा प्रज्वलेकोइलाकेभानुहौ चण्ड-केदारकापडीलोहापडौतुपार।' यह लौह द्रव्य के स्तम्भन का मन्त्र है।

अथ गोमहिष्यादिस्तम्भनम्

उष्ट्रस्यास्थि चतुर्दिक्षु निखनेद्भूतले ध्रुवम्।
गोवाजि मेषी महिषीः स्तम्भयेत्करिणीमपि ॥ ३५ ॥

इति गोमहिष्यादि स्तम्भनम्।

अथ गोमहिषी आदि का स्तम्भन। ऊँट की हड्डी चारों ओर भूतल में गाड़ने से गाय, भैंस, भेड़, घोड़ा और हाथी तक का स्तम्भन होता है।

इति गोमहिषी आदि का स्तम्भन।

काली कराली अमुकं स्तम्भय स्वाहा ॥
अनेन मन्त्रेण साध्यनाम् हृदि धृत्वा स्पृष्ट्वा वा दर्शनाज्जपतः
स्तम्भितो भवति क्षिप्रम् ॥ ३६ ॥ इतिमनुष्यस्तम्भनम् ॥

'काली कराली अमुकं स्तम्भय स्वाहा', इस मन्त्र से साध्य का नाम हृदय में धारण कर छूकर या देखकर जपने से स्तम्भन होता है। चित्र ८८ से ९३ तक यन्त्र देखकर लिखें।

इति मनुष्यस्तम्भन।

अथ मनःस्तम्भनम्

चर्मकारस्य कुण्डानि रजकस्य तथैव च।
कुण्डान्मलं समुद्धृत्य चाण्डाल्या ऋतुवाससम् ॥ ३७ ॥
बन्धयेत्पोटलीं प्राज्ञो यस्याग्रे तां विनिःक्षिपेत्।
तस्योत्थाने भवेत्स्तम्भः सिद्धयोग उदाहृतः ॥

अथ मनःस्तम्भनम्। चमार और धोबी की नाँद का मैल लेकर चाण्डाली के ऋतु के वस्त्र में लपेट कर उसकी पोटली बाँधकर जिसके आगे फेंक दे वह उठने में स्तम्भित हो जायगा। यह सिद्ध योग है।

श्वेतगुञ्जाफलं वाप्यं नृकपालेऽपि मृत्सह।
निशि कृष्णचतुर्दश्यां त्रिदिनं तत्र जागरेत् ॥ ३८ ॥
नित्यं सिञ्चेज्जलेनैव मन्त्रपूजां च कारयेत्।
तस्या शाखा लता ग्राह्या शुभऋक्षेस्व मन्त्रतः ॥ ३९ ॥
क्षिपेद्यस्यासने तां तं स्तम्भयेत्तत्क्षणाद्ध्रुवम् ॥ ४० ॥

श्वेत चौंटली को मनुष्य की खोपड़ी में मिट्टी डालकर बो दे। कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को यह कार्य कर तीन रात तक जागे तथा तीन दिन बराबर उसपर जल छिड़ककर मन्त्रपूर्वक पूजा करे और शुभ नक्षत्र में उसकी शाखा को ग्रहण करे। जिसके आसन पर उसे फेंके वह उसी समय स्तम्भित हो जायगा।

ॐ रुद्रेभ्यो नमः। ॐ वज्ररूपाय वज्रकिरणाय शिवे रक्षभवे-समामृतं कुरु कुरु स्वाहा। अयं पूजामन्त्रः।

इत्यासनस्तम्भनम्।

ॐ रुद्रेभ्योनमः ॐ वज्ररूपाय वज्रकिरणाय शिवेरक्ष भवे समामृतं कुरु कुरु स्वाहा। यह पूजा का मन्त्र है। इति आसन स्तम्भन।

भृङ्गराजोह्यपामार्ग सिद्धार्थं सहदेविकाम्।
तुल्यं तुल्यं वचा श्वेता द्रव्यमेषां समाहरेत्।
लोहपात्रे विनिःक्षिप्य द्विदिनान्ते समुद्धरेत्॥ ४१॥
तिलकैः सर्वभूतानां बुद्धिस्तम्भकरो भवेत्॥ ४२॥

भाँगरा, चिरचिटा, सरसों, सहदेई और इनके बराबर वच, श्वेत कटेरी यह सब लोहपात्र में डालकर इनका रस निकाले। इसके तिलक करने से सब भूतों की बुद्धि स्तम्भित हो जाती है।

ॐ नमो भगवते विश्वामित्राय नमः। सर्वमुखीभ्यां विश्वा-मित्राय विश्वमित्र आज्ञापयतिशक्त्या आगच्छ आगच्छ स्वाहा उक्तयोगस्यायंमन्त्रः। अंगुलीलात्रिधाआशय आगल स्वाहा। अनेन मन्त्रेण नदीं प्रविश्य अष्टोत्तरशताञ्जलीस्तर्पयेत्। शत्रुणां बुद्धिस्तम्भो भवति। कर्पूरेण चिताङ्गारे नामलिखित्वा तदुपरि मृत्तिकां दद्यात्तत्र शत्रोर्मुख बन्धो भवति॥

इतिशत्रुबुद्धिस्तम्भनम्।

मन्त्र 'ॐ नमो भगवते विश्वामित्रायनमः। सर्वमुखीभ्यां विश्वामित्राय विश्वामित्र आज्ञापयति शक्त्या आगच्छ आगच्छ स्वाहा' (यह उपरोक्त योग का मन्त्र है) 'अंगुलीलात्रिधा आशय आगल स्वाहा।' इस मन्त्र से नदी में प्रवेशकर १०८ अञ्जलि के तर्पण करने से शत्रुओं की बुद्धि स्तम्भित हो जाती है। कपूर से चिता के अङ्गारे पर शत्रु का नाम लिखकर उसके ऊपर मिट्टी डालने से शत्रु का मुख बँध जाता है। इति शत्रुबुद्धिस्तम्भनम्।

अथ चौराणां गतिस्तम्भनम्

ॐ नमो ब्रह्मद्वेषिणी शिवे रक्ष रक्ष ठः ठः। अनेन मन्त्रेण सप्त पाषाणखण्डानि श्मशानाद्गृहीत्वा त्रीणिकट्यां बद्ध्वाऽपराणि

मुष्टिभ्यां धारयेच्चौराणां गतिस्तम्भो भवति । इतिचौराणां गतिस्तम्भनम् । (ब्रह्मवेशिनिवापाठः)

अथ चोरगतिस्तम्भनम् । 'ॐ नमो ब्रह्मद्वेषिणिशिवे रक्षरक्ष ठः ठः ।' इस मन्त्र से सात कङ्कुर श्मशान स्थान से लेकर तीन कमर में बाँधने और शेष को मुट्ठी में धारण करने से चोरों की गति स्तम्भित होती है । कहीं पाशों को धारण करना कहा है । इति चोराणां गतिस्तम्भन ।

अथ गर्भस्तम्भनम्

ग्राह्यं कृष्णचतुर्दश्यां धत्तूरस्य तु मूलकम् । कट्यां बद्ध्वा-रमेत्कान्तां न गर्भधारयेत्क्वचित् ॥ मुक्तेन लभते गर्भं पुरा-नागार्जुनोदितम् । तन्मूलचूर्णं योनिस्थं न गर्भं सम्भवेत्क्व चित् ॥ ४३ ॥

अथ गर्भस्तम्भनम् । कृष्णपक्ष की चतुर्दशी के दिन धतूरे की जड़ ग्रहण कर कमर में बाँधकर यदि स्त्री पति से रमण करे तो कभी गर्भ की स्थिति नहीं होती, इसके खोलने से गर्भ की स्थिति होती है ऐसा पहले नागार्जुन ने कहा है । अथवा धतूरे की जड़ को चूर्णकर योनि में धारण करने से कभी गर्भ की स्थिति नहीं होती है ।

सिद्धार्थमूलं शिरसि बद्ध्वा कान्तं रमेत्तूया ।
न गर्भधारयेत्सास्त्री मुक्तेन लभते पुनः ॥ ४४ ॥ अनेन गर्भो न भवतीति । इतिगर्भस्तम्भनम् ।

सरसों की जड़ शिरपर बाँधकर जो अपने कान्त से रमण करती है वह स्त्री कभी गर्भधारण नहीं करती । उसको खोल देने से फिर गर्भ की स्थिति होती है । यहाँ चित्र ९४ का यन्त्र देखें । मार्जार (बिलाव) का मल अनामिका से ग्रहण कर रक्त से भोजपत्र पर लिखकर भूमि में गाड़ने से गर्भ जम जाता है ।

इति गर्भस्तम्भनम् ।

अथ शुक्रस्तम्भनम्

इन्द्रवारुणिकामूलं पुष्ये नग्नः समुद्धरेत् ।
कटुत्रयैर्गवां क्षीरैः सम्पिष्य गोलकी कृतम् ॥ ४५ ॥
छायाशुष्कं स्थितं चास्ये वीर्यस्तम्भकरं नृणाम् ।

अथ वीर्यस्तम्भनम् । नग्न होकर पुष्यनक्षत्र में इन्द्रायण की जड़ उखाड़ कर उसे सोंठ, मिर्च और पीपल के साथ पीसकर गाय के दूध में गोली बनाकर छाया में सुखा ले । एक गोली मुख में रखने से वीर्यस्तम्भन होता है ।

नीलीमूलं श्मशानस्थं कट्यां बद्ध्वा तु वीर्यधृक् ॥ ४६ ॥

श्मशान में उत्पन्न हुई नीली की जड़ कमर में बाँधकर रमण करने से वीर्य स्तम्भित होता।

कृष्णोन्मत्त वचामूलं मधुपिष्टं प्रलेपयेत्।
लिंगेतदारमेत्कान्तां स्वभावद्विगुणं नरः ॥ ४७ ॥

काले धतूरे और वच की जड़ शहद में पीसकर मदनध्वज पर लेपकर स्त्री के साथ रमण करने से दोगुना पराक्रम उत्पन्न होता है।

भृङ्गीविषं पारदं च प्रत्येकं तु द्विगुञ्जकम् ॥
वराटाक्षं क्षिपेद्विन्दुः स्थिरः स्याच्छिरसाघृतम् ॥

अभ्रक, विष और पारा ये वस्तुयें शोधी हुई और प्रणाम में दो-दो चोंटली भर ले। इस प्रयोग से शुक्रस्तम्भन होता है।

रक्तापामार्गमूलं तु सोमवारे निमन्त्रयेत् ॥ ४८ ॥
भौमे प्रातःसमुद्धृत्य कट्यांबद्ध्वा तु वीर्यधृक् ॥

लाल अपामार्ग (चिरचिटे) की जड़ को सोमवार के दिन निमन्त्रण देकर मङ्गल के दिन प्रातःकाल उखाड़ कर लावे। इसे कमर में बाँधने से वीर्य स्तम्भित होता है।

दुन्दुभीनामयः सर्पः कृष्णवर्ण समाहरेत् ॥ ४९ ॥
तस्यास्थि धारयेत्कट्यां नरो वीर्यं न मुञ्चति ॥
विमुञ्चति विमुक्तेन सिद्धियोग उदाहृतः ॥ ५० ॥

काले वर्ण के दुन्दुभी नामक सर्प को लाकर उसकी हड्डी कमर में धारण करने से मनुष्य का वीर्य स्तम्भित होता है और उसको खोल देने से वीर्य मुक्त होता है। यह सिद्ध योग है।

नखास्थीनि समादाय मार्जारस्य सितस्य च।
कृकलासस्य पुच्छाग्र मुद्रिका प्रेततन्तुभिः ॥ ५१ ॥
वेष्टधा कनिष्ठिका धार्य्या नरोवीर्यं न मुञ्चति ॥ ५२ ॥

श्वेत मार्जार के नख और अस्थि को लेकर कृकलास (गिरगिट) की पूंछ के अग्रभाग की बनी अँगूठी को मृतक स्थान के सूत से लपेट कर कनिष्ठिका उँगली में धारण करने से मनुष्य का वीर्य स्खलित नहीं होता।

पुष्योद्धृतं श्वेतपिकाक्षबीजं कटी तटे लोहित सूत्रबद्धम्।
बीजच्युतिं धारयति प्रसंगेख्यातः सदायं किलयोगराजः ॥

पुष्यनक्षत्र में उखाड़ा हुआ श्वेत पिकाक्ष का बीज लाल सूत से कमर में बाँधने से वीर्य का स्खलन नहीं होता। यह योगराज का कथन है।

श्वेतान्य पुष्याख्यतरोः फलानि क्षीरेण पिष्ट्वा वटपादपस्य ।
करंजबीजोदर मध्यगानिस्तम्भन्ति वीर्यं वदने धृतानि ॥

श्वेत कोयल वृक्ष के फल लेकर उन्हें बड़ के दूध के साथ पीसे फिर उसमें करंज के बीज का मध्यांश डालकर मुख में रखने से वीर्य स्तम्भित होता है :

आदित्यवारोद्धृत सप्तपर्णवृक्षस्य बीजं विनिधाय वक्त्रे ।
जयेद काण्डं सुरतावतारे पुमान्पुरन्ध्रीः स्मरतीव्रवेगाः ॥५३॥

रविवार के दिन सप्तपर्ण वृक्ष के बीज लाकर उन बीजों को मुख में रखने से सुरत के समय पुरुष स्त्री का जय करता है ।

नागकेशर कर्षन्तु गोघृते पातयेद्बुधः ।
भुक्त्वा रमेच्च रमणीं तदाबिन्दुः स्थिरो भवेत् ॥ ५४ ॥

एक कर्ष नागकेशर को गाय के घी में डालकर उसका भोजन कर स्त्री से रमण करने पर वीर्य स्थिर होता है ।

श्वेतेषुपुंखाचरणं गृहीत्वा पुष्यार्कयोगे पुरुषस्य कट्याम् ।
कुमारिकाकर्तित सूत्रकेन बद्धञ्जयत्याशु मनोजबीजम् ॥५५॥

श्वेत सरफोंके की जड़ को पुष्यनक्षत्र युक्त रविवार में ग्रहण करके क्वारी कन्या के काते सूत से पुरुष की कमर में बाँधने से काम को जय करता है ।

बीजमीश्वरलिंगस्य सूतं वृश्चिककण्टकम् ।
क्षिपेत्पूगफलं चास्मिंस्त्रिलोहैस्तं च वेष्टयेत् ॥ ५६ ॥
जिह्वोपरि स्थिते तस्मिन्नरो वीर्यं न मुञ्चति ।

धतूरे के बीज, पारा और मैनफल को सुपारी के साथ मिलाकर त्रिलोह से उसको वेष्टित करके जिह्वा पर रखने से मनुष्य वीर्य को नहीं छोड़ता ।

सहदेवीबीजमूलं संमिश्र्यं पद्मकेसरैः ॥ ५७ ॥
मध्वाज्य सहिताल्लेपान्नरो वीर्यं न मुञ्चति ।

सहदेवी के बीज और जड़ तथा पद्मकेसर में घी और शहद मिलाकर लेप करने से मनुष्य का वीर्य स्खलित नहीं होता ।

नीलोत्पल सितांभोजकेसरं मधुशर्करम् ॥ ५८ ॥
अमीभिर्नाभिलेपेन चिरं रमति कामुकः ॥ ५९ ॥

नीलकमल तथा श्वेत कमल की केसर में शहद तथा शर्करा मिलाकर इसका नाभि पर लेप करने से बहुत देर तक कामी पुरुष रमण कर सकता है ।

आदाय कृष्णेतरकाकजंघामूलं सितांभोरुह च ।
क्षौद्रेण पिष्ट्वा परिलिप्यनाभि स्तम्भं प्रपद्येत्पुरुषस्य बीजम्

श्वेत काकजंघा की जड़ तथा श्वेत कमल का केसर लेकर शहद के साथ पीसकर नाभि पर लेप करने से पुरुष का वीर्य स्तम्भित होता है।

छाग्येडकादुग्ध पिष्टं लज्जामूलं प्रलेपयेत्।
हृदयेपादयोर्वीर्यं द्रवते न कदाचन॥ ६१॥

बकरी और भेड़ी के दूध में लज्जावन्ती की जड़ पीसकर हृदय और चरणों में लेप करने से पुरुष का वीर्य पतित नहीं होता है।

मूलं वा श्वेतपुंखायाः सक्षौद्रं नाभिलेपनात्।
मधुना पद्मबीजस्य तद्वल्लेपेन वीर्यधृक्॥ ६२॥

अथवा श्वेत सरफोंके की जड़ में शहद मिलाकर नाभि पर लेप करने से वीर्य स्तम्भित होता है। अथवा शहद में कमल का बीज मिलाकर लेप करने से वीर्य स्तम्भित होता है।

इन्द्रवारुणिकामूलमुन्मत्ताजस्य मूत्रतः।
भावयेत्सप्तवारं तं लिङ्गलेपेन वीर्यधृक्॥ ६३॥

इन्द्रायण की जड़ को उन्मत्त बकरे के मूत्र में सात बार भावना देकर लिंगपर लेप करने मे वीर्य स्तम्भित होता है।

उन्मत्ताजस्यमूत्रेण पेषयेद्वानरीशिफाम्।
लिप्त्वालिङ्गं नरोवीर्यं चिरकालं न मुञ्चति॥ ६४॥

अथवा उन्मत्त बकरे के मूत्र से जटामांसी को पीसकर ध्वजा पर लेप करने से मनुष्य का वीर्य चिरकाल तक स्खलित नहीं होता।

कर्पूरं टंकणं सूतं तुल्यं मुनिरसं मधु।
मर्दयित्वा लिपेल्लिङ्गं स्थित्वायामं तथैव च॥ ६५॥
ततः प्रक्षालयेल्लिङ्गं रमेद्रामां यथोचितम्।
वीर्यस्तम्भकरं पुंसां सम्यङ्नागार्जुनोदितम्॥ ६६॥

कपूर, सुहागा तथा पारा यह सब बराबर लेकर अगस्त्य के रस और शहद में मिलाकर लिंगपर लेपकर एक पहर तक स्थित रहने दे; फिर अपने ध्वज को धोकर कान्ता के साथ रमण करने से पुरुष का वीर्य स्तम्भित होता है। यह नागार्जुन का कथन है।

कौसुम्भतैलेन विलिप्यपादौ यदृच्छयादीव्यतिवृद्धवीर्यः
पुनर्नवाचूर्णविलेपनात्खलुजहातिबीजं न कदाचिदेतत्।

कुसुम्भ का तेल पैरों में मलने से स्वेच्छा से ही वीर्य की वृद्धि होती है और पुनर्नवा के चूर्ण का विलेपन करने से कदाचित् भी वीर्य स्खलित नहीं होता।

कर्पूरसंपाक महेशबीजैः स्वार्द्ध तु बीजं पुरुषस्य नाभौ ।
विलिप्य कांताजघने च कान्तेनलभ्यते शुक्रमधः कदापि ॥

कपूर, संपाक और पारा यह नरवीर्य के साथ पुरुष की नाभिपर लेप करने से या स्त्री की जंघा में लेप करने से कभी वीर्य स्खलित नहीं होता (कहीं 'चार्द्धेन्दुबीजं' पाठ है ।

भूलतासिक्थकं चैव कुसुंभस्य च तैलकम् ।
वीर्यधृक्पादलेपेन चटकाण्डस्य लेपनात् ॥ ६९ ॥

भूलता, मोम और कुसुम्भ का तेल पैर में लपेटने से वीर्य स्तम्भित होता हैं; अथवा चटिका के अंडे का पैर में लेप करने से वीर्य स्तम्भित होता है ।

नवनीतेन युक्ताभ्यां शय्यां पद्भ्यां च नस्पृशेत् ।
श्लेष्मांतस्य कुरंटस्यबीजं करंजकस्य च ॥
भेडीक्षीरेण तं पिष्ट्वा कर्षभुक्त्वा तु वीर्यधृक् ॥ ७० ॥

पैरों में मक्खन मलकर चरणों से सेज को स्पर्श न करे । लिसोडा, कुरंट (पीली कटसरैया) और करंज के बीज को भेड़ी के दूध में पीसकर एक कर्षमात्रा भक्षण करने से वीर्य स्तम्भित होता है ।

सुदर्शनाभवं मूलं ताम्बूलैः सहपेषयेत् ।
अल्पं त्याज्यं प्रयत्नेन शुक्रस्तंभनमुत्तमम् ॥ ७१ ॥

सुदर्शना की जड़ ताम्बूल के साथ पीसकर घृत के साथ यत्न से सेवन करने से वीर्य स्तम्भित होता है ।

श्वेतार्क तूलकैर्वर्त्तीदीपः सूकरमेदसा ।
यावज्ज्वलति दीपोयं तावद्वीर्यं न मुञ्चति ॥ ७२ ॥

श्वेत आक के रुई की बत्ती बनाकर सूकर की चरबी से दीपक जलाने से जबतक दीपक जलता रहेगा तबतक वीर्यपात नहीं होगा ।

मूलंवराहक्रांताया अजाक्षीरेण पेषयेत् ।
लिंगलेपेन चानेन वीर्यस्तंभकरं भवेत् ॥ ७३ ॥

वाराही कन्द की जड़ को बकरी के दूध से पीसकर ध्वज पर लेप करने से वीर्य स्तम्भित होता है ।

पुष्योद्धृतं श्वेतहयमारमूलं कटी तटे ।
बद्धं बिन्दुस्थिरकरं मुक्ते तु च्यवते पुनः ॥ ७४ ॥

पुष्यनक्षत्र में श्वेत हयमार अर्थात् कनेर की जड़ लाकर कमर में बाँधने से वीर्यपात नहीं होता ।

वक्रीरसंतूद्ध्वंगेनदात्रेणग्राह्ययेद्रवौ ।
संपिष्य वटिकां कृत्वा संशोष्य च विनिःक्षिपेत् ॥ ७५ ॥
आत्ममूत्रेणतल्लिप्यं लिंगमूलं तु वीर्यधृक् ।

पर्पटी को लेकर उसका रस रविवार के दिन ग्रहण कर उसको भली-प्रकार पीसकर उसकी गोली बनाकर सुखाकर रख छोड़े । फिर अपने मूत्र से उसको घिसकर मदनध्वज के मूल स्थान में लेप करने से वीर्य स्तम्भित होता है ।

पूतीकरंजबीजञ्च श्वेतबन्धूक मंडयोः ॥ ७६ ॥
मूलं पिष्ट्वा तु लिंगाग्रे लेपयेच्चन्दनैः सह ।
तथाकरतलेदद्याद्वामे बिन्दुः स्थिरोभवेत् ॥ ७७ ॥

पूतीकरंज के बीज, श्वेतबन्धूक, मण्ड और सोनापाठा इनकी जड़ को चन्दन के साथ मदनध्वज पर लेप करने से तथा हथेली में लेप करने से वीर्य स्तम्भित होता है ।

लज्जालुमूलं भटिकां पिष्ट्वा ताम्रस्यभाजने ।
कृत्वाञ्जनं च तेनांज्यादर्द्धरात्रं स्थिरोभवेत् ॥ ७८ ॥

लज्जावन्ती की जड़ और भटिका को पीसकर ताम्रपात्र में घिसकर रात्रि में अंजन करने से वीर्य स्थिर होता है ।

कृष्णधूर्त्तं महाकालं शनिवारे निमन्त्रयेत् ।
रविवारे समानीय चादत्ता रमणीतैः ॥ ७९ ॥
सूत्रैर्गुणत्रयैर्बद्धं करेवामे प्रयत्नतः ।
उपविश्यासने खण्डत्रयैर्यामत्रयं ततः ॥ ८० ॥
बिन्दुः स्थिरत्वमाप्नोति मुक्तेस्खलति तत्क्षणात् ।

काले धतूरे तथा महाकाललता को शनिवार के दिन निमन्त्रण देकर रविवार के दिन लाकर और कन्या से सूत कतवाकर उस सूत के तीन खण्ड कर वाम हाथ में यत्न से बाँधकर आसन पर तीन पहर तक बैठने से बराबर वीर्य स्थिर होता है और इसके खोलने से मुक्त होता है ।

हेमाह्वलोचनं तुल्यं कृष्णधत्तूरबीजकम् ॥ ८१ ॥
वटक्षीरेणसंमर्द्य कुबेराक्षस्य बीजकैः ।
क्षिप्त्वातद्धारयेद्वक्त्रे वीर्यस्तंभकरं भवेत् ॥ ८२ ॥

(चोक) नागकेशर, वंशलोचन और काले धतूर के बीज, बड का दूध और करञ्ज का बीज यह सब एकत्र कर मुख में धारण करने से वीर्य स्तम्भित होता है । इति शुक्रस्तम्भनम् ।

इति श्रीनित्यनाथविरचिते कामरत्ने भाषाटीकायां चतुर्थोपदेशः ॥४॥

अथ मोहनम्

कन्यावरे युवतिसंगमने नाराणामालोकने नरपतेः
क्रयविक्रयादौ ॥ प्रज्ञाविधौ सकलकर्मणिकौतुके
वा धूपः सदैव कृतिभिर्विनियोजनीयः ॥ १ ॥

कन्या के विषय में, स्त्री प्रसंग में, राजा के देखने, प्रज्ञाविधि में सम्पूर्ण कर्मों और कौतुक इनमें ही विद्वानों को धूप का प्रयोग सदा करना चाहिये।

शृंगीवचा नलदसर्जरसं समानं कृत्वा त्रुटिं मलयजं च षडेवमिश्रम् ॥
याधूपयेन्निजगृहं वसनं शरीरंतस्यास्तु दासइवमोहमुपैति लोकः ॥२॥

काकडासिंघी, वच, उशीर, राल (त्रुटि), छोटी इलायची समान भाग लेकर और मलयगिरि चन्दन को मिलाकर स्त्री यदि अपने घर, वस्त्र और शरीर में धूप दे तो लोक मोह को प्राप्त हो उसके दास के समान हो जाता है।

भृङ्गराजः केशराजो लज्जा च सहदेविका।
एभिस्तु तिलकं कृत्वा त्रैलोक्यं मोहयेन्नरः ॥ ३ ॥

भाँगरा, दूसरा भाँगरा, लज्जावन्ती, सहदेई, इनका तिलक लगाकर मनुष्य त्रिलोकी को मोहित कर सकता है।

त्रिदलं कुसुमं यस्यधत्तूरस्य कृतांञ्जलिः।
भृङ्गराजेन साज्येन तिलकं मोहयेन्नरः ॥ ४ ॥

त्रिदल हंसपदी के और धतूरे के फूल, लज्जावन्ती और भृङ्गराज इन सबको घृत मिलाकर तिलक करने से मनुष्य त्रिलोकी को मोह सकता है।

तालकं कुनटीं चैव भृङ्गपक्षं समं समम्।
कृष्णोन्मत्तस्य कुसुमं वटिकां कारयेद्बुधः ॥ ५ ॥
तेनैव तिलकं कृत्वा त्रैलोक्यं मोहमेन्नरः।

हरताल, मैनशिल और भौंरे के पङ्ख यह समान भाग लेकर तथा धतूरे के फूल लेकर गोली बनावे। उसी से तिलक करके मनुष्य त्रिलोकी को मोहित कर सकता है।

आदौ सप्तस्वराग्राह्या अन्ते हुंकार संयुताः ॥
ॐ कारं शिरसि कृत्वा हूं अन्ते फडिति न्यसेत् ॥ ६ ॥

मन्त्रः ॥ ॐ अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं फट् ।
अनेनैव तु मन्त्रेण कृत्वा ताम्बूल भावनाम् ।
साध्यस्य मुखेनिःक्षिप्ते मोहमायाति तत्क्षणात् ॥ ७ ॥

प्रथम सात स्वर उच्चारण कर अन्त में हूंकार मिलावे; ॐकार प्रथम लगाकर अन्त पद में फट् लगावे। मन्त्र यह है 'ॐ अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं फट्'। इस मन्त्र से ताम्बूल को भावना देकर साध्य के मुख में खिलाने से वह मोह को प्राप्त होता है, देर नहीं लगती।

ॐ भींक्षांभीं मोहय मोहय ।
ॐ नमो भगवती पादपंकजं परागेभ्यः ॥
ॐ अस्य मन्त्रस्य वारत्रयं जपान्मोहमाप्नुवंति जनाः ।

ॐ भीं क्षां भीं मोहय मोहय । ॐ नमो भगवतीपादपंकजंपरागेभ्यः । इस मन्त्र को तीन बार जपने से मनुष्य मोह को प्राप्त होता है।

शुभामूलं तथा बीजंरक्तचन्दन संभवम् ॥
त्रुटिबीजं समं पिष्ट्वा ताम्बूलादौ प्रयोजयेत् ।
भोक्तुं देयं स्वहस्तेन मोहमा नोति चेश्वरः ॥ ८ ॥

प्रियंगु की जड़ तथा बीज, लाल चन्दन, इलायची के बीज इनको समान भाग पीसकर ताम्बूल में दे। यदि अपने हाथ से खाने को दे तो ईश्वर भी मोह को प्राप्त हो जाता है।

गोरोचन और अनामिका के रक्त से जिसका नाम लिखकर घृत में स्थापन करे वह मोहित होता है। इति ईश्वरमोहनम्।

अथ दुष्टशत्रुमोहनम्

वृश्चिकोद्भवचूर्णेन धूपो मोहयते नृणाम् ।
कपिरोम हिगुदार्वी खरचर्म्माणि चूर्णयेत् ॥ ९ ॥
तच्चूर्णं मन्त्र संजप्तं नामकर्म विदर्भितम् ।
त्रिसहस्रं पुनस्तेन स्निग्धयोरत्नरात्मनोः ॥ १० ॥
धूपैरतीव विद्विष्टौ स्निग्धावपि भविष्यतः ।
तालपत्रे लिखेन्मंत्रं नामकर्म विदर्भितम् ॥ ११ ॥
कृतप्राण प्रतिष्ठान्तं प्रजप्तं त्रिसहस्रकम् ।
विषालिप्तं द्विधाकृत्वा निखनेत्सिन्धुतीरयो. ।
स्निग्धयोराशु विद्वेषः स्यादुमेशानयोरपि ॥ १२ ॥

अथ दुष्टशत्रुमोहन। मैनफल के चूर्ण की धूप शत्रु मनुष्य को मोहि

कर देता है। वानर के रोम, हिंगु, दारुहलदी, गर्दभचर्म यह सब चूर्ण करके उस शत्रु के नाम से ३००० मन्त्र जपने से यह धूप स्निग्ध होकर महाविद्वेष करता है। तालपत्र पर मन्त्र लिखकर शत्रु का नाम-कर्म भी लिखे। उसकी प्राणप्रतिष्ठा कर ३००० मन्त्र जपकर उसे विष लिप्तकर दो खण्ड कर समुद्र के किनारे गाड़ देने से शिवाशिव का भी विद्वेष हो जाता है और तो क्या हैं।

गरलंधूत्तं पंचांगं महिषीशोणितं कणा।
निशायां कुरुतेमोहं धूपोगुग्गुलुसंयुतः ॥ १३ ॥

विष, धतूरे का पञ्चांग, भैंस का रुधिर, श्वेत जीरा, गुग्गुल, इनका एकत्र धूप देने से यह मनुष्य को ही नहीं बल्कि शिला को भी मोहित करता है। 'दुश्चिक्योद्भव' भी पाठ है।

हलिनीविषधत्तूरं शिखिविष्ठाभिरन्वितम्।
तयाधूपः समंभागं मोहयत्येव निश्चितम् ॥ १४ ॥

कलिहारी, विष, धतूरा और मोर का बीट समान भाग लेकर धूप देने से यह उसी क्षण मनुष्य को मोहित करता है। 'हलिसी' पाठ भी है।

छुछुन्दरी सर्पमुण्डं वृश्चिकस्य तु कंटकम्।
हरितालं समं धूपो मोहयेत्सकलान्नरान् ॥ १५ ॥

छुछुन्दर, साँप का मुण्ड, विच्छु का काँटा और हरिताल यह सब समान भाग लेकर इनका धूप देने से मनुष्यों को मोहित करता है।

अधः पुष्पीशिखा[1]चैव श्वेतं च गिरिकर्णिका।
गोरोचन समायोगे तिलकं शत्रुमोहनम् ॥ १६ ॥

गोभी, कलिहारी, श्वेत कितही वृक्ष और गोरोचन इनका तिलक करने से शत्रु को मोहित किया जा सकता है। कहीं 'अविपीत' पाठ है।

तालकोन्मत्तबीजानिपाने शत्रोश्च दापयेत्।
तत्क्षणान्मोहमाप्नोति चोन्मत्तो जायतेनरः ॥ १७ ॥
समाक्षिकैः सिताम्भोजैः सुस्थः पानाद्भवेन्नरः ॥ १८ ॥
इति शत्रुमोहनम्।

हरताल और धतूरे के बीज पान में शत्रु को देने से शत्रु उसी क्षण मोह को प्राप्त हो जाता है और उन्मत्त हो जाता है। फिर शहद मिला श्वेत कमल का पान करने से मनुष्य स्वस्थ होता है। इति शत्रुमोहनम्।

इति मोहनाधिकारः।

---

१ शिलायां वा पाठः।

अथ रंजनम्

तत्रदेहरंजनम् । अत्राङ्गरागः पुरुषेणकायः
स्त्रियाश्चसंभोग सुखायगात्रे । तस्मादहंगन्ध-
विधानमादौ विलासिन सर्वमुदीरयामि ॥ १९ ॥

प्रथम देहरञ्जन कहते हैं । प्रायः स्त्रियों के सुख के निमित्त पुरुषों को तथा पतियों के निमित्त स्त्रियों को अपना देहरञ्जन करना चाहिये । इस कारण विलासी जनों के निमित्त गन्धादि कार्य कहता हूं ।

हरीतकी लोध्रमरिष्टपत्रं सप्तच्छदंदाडिमवल्कलं च ।
एषोङ्गनायाः कथितः कवीन्द्रैः शरीरदौर्गन्ध्यहरः प्रलेपः ।

हरड, लोध और नीम के पत्ते, सतौना, दाडिम का छिलका, इन सबका लेप करने से शरीर की दुर्गन्ध दूर होती है। यह प्रयोग विद्वानों द्वारा कहा हुआ है।

हरीतकी श्रीफल मुस्तचिचाफलत्रिकं पूतिकरंज बीजम् ।
कक्षादि दौर्गन्ध्यमपि प्रभूतं विनाशयत्याशु निदाघकाले ॥

हरड, नारियल की जड़, मोथा, चिचाफल, त्रिफला और पूतिकरंजुए के बीज इनका बगल में लेप करने से गरमी के दिनों में यह महादुर्गन्ध को दूर करता है ।

हरीतकी चन्दन मुस्तनागैरुशीरलोध्रामय रात्रितुल्यैः ।
स्त्रीपसयोर्घर्मंजगात्र गन्धं विनाशयत्याशु विलेपनेन ॥ २२ ॥

हरड, लालचन्दन, नागरमोथा नागकेशर, खस, लोध, हलदी यह सब बराबर लेकर स्त्री-पुरुषों के शरीर पर मलने से पसीने की दुर्गन्ध दूर हो जाती है ।

कदम्बपत्रं लोध्रं च अर्जुनस्यतु पुष्पकम् ।
पिष्ट्वागात्रोद्वर्त्तनाच्च दुर्गन्धचयनाशनम् ॥ २३ ॥

कदम्ब के पत्ते, लोध, अर्जुन के फूल पीसकर शरीर में मलने से शरीर की दुर्गंन्ध नष्ट होती है ।

सचन्दनोशीरकरंजपत्रैः कोलाक्षमज्जागुरुनागयुक्तैः ।
लिप्त्वा शरीरं प्रमदातु तेन चिर प्रसूतं विनिहन्ति गन्धम् ।२४।

चन्दन, उशीर, करञ्ज के पत्ते, कोल, बहेड़े की मींग, अगुरु और नागकेशर यह सब पीसकर शरीर पर मलने से बहुत काल की दुर्गन्ध को दूर करते हैं । कहीं 'बालपत्र' भी पाठ है जिसका अर्थ नेत्रवाला है ।

सदाडिमत्वङ्मधुलोध्रपद्मैः पिष्टैः समानैः पिचुमर्दपत्रैः ।
विलिप्यगात्रं तरुणीनिदाघे दुर्गन्धघर्म्माम्बुचयंनिहन्ति ॥२५॥

दाडिम का वल्कल, मधु, लोध्र और पद्म इनको समान भाग लेकर और

नीम के पत्तों को शरीर में मलने से स्त्री के पसीने की दुर्गन्ध दूर होती है।

सकेशरोशीर शिरीष लोध्रैश्चूर्णीकृतैरंग विलेपनेन।
ग्रीष्मे नराणां न कदापि देहेधर्मच्युतिः स्यादितिभोजराजः।२६।

केशर, उशीर, शिरस और लोध इनका चूर्ण कर शरीर पर लेप करने से गरमी में शरीर से बहुत पसीना नहीं निकलता, ऐसा भोजराज ने कहा है।

तिलसर्षप रजनीद्वय दूर्वा गोरोचनाकुष्ठैः
अजमूत्रतक्रपिष्टैरुद्वर्तितमंगमनुपमं भवति ॥ २७ ॥

तिल, सरसों, दोनों हलदी, दूर्वा, गोरोचन और कूठ को बकरे के मूत्र के और मट्ठे के साथ शरीर पर लेप करने से मनोहरता होती है।

हरीतकीतोयद तुल्य भागैर्वनेरुहस्यापि चतुर्थभागः।
तदर्ध भागः कथितो नखस्यस्यादेषगंधोमदन प्रकाशः ॥ २८ ॥

हरड और मोथा यह तुल्य भाग लेकर बनरुह का चौथाई भाग ले और इनसे आधा भाग तालमखाना। यह सब मिलाकर लेप करने से कामस्थान की दुर्गन्ध दूर होती है।

एलाशटीपत्रक चन्दनानि तोयाभयाशिग्रु घनामयानि।
ससौरभोयं सुरराजयोग्यः ख्यातः संगन्धोनरमोहनाख्यः।२९।

इलायची, कचूर, पत्रज, चन्दन, मोथा, हरड, सैंजना और कपूर यह मोहन नामक योग सब प्रकार की दुर्गन्ध को दूर करने वाला है।

धत्तूरकश्मीर घनाम्बुलोहनिशाकरोशीरसमानि पिष्टवा।
लेपः प्रियोयंसुरमानवानामुदीरितः पूर्वंकवीन्द्रधीरैः ॥३०॥

धतूरा, केशर, मोथा, नेत्रवाला, लोह, कपूर और उशीर यह सब समान भाग पीसकर इनका लेप करने से सब की प्रियता होती है। यह मनुष्य और देवताओं को प्रिय है ऐसा पूर्व विद्वानों ने कहा है।

उशीर कृष्णागुरु चन्दनानि पत्राम्बुतुल्यानि समानि पिष्ट्वा।
एतानिगात्रेषु विलासिनीनां श्रीखण्डतुल्य प्रकरोति गन्धम् ॥
इति देहरंजनम् ॥

उशीर, काला अगर, चन्दन, तेजपात, नेत्रवाला यह सब समान भाग पीसकर अङ्गों में लेप करने से विलासवती स्त्रियों के अङ्गों में चन्दन जैसी सुगन्ध हो जाती है। इति देहरञ्जनम्।

अथ मुखरञ्जनम्

रसाल जम्बूफलगर्भसारः सकर्कटोमाक्षिक संयुतश्च।
स्थितोमुखान्ते पुरुषस्यरात्रौ करोति पुंसां मुखवासमिष्टम्।३२।

आम और जामुन दोनों की गुठली लेकर काकड़ासिंघी और शहद मिलाकर यदि रात्रि के समय पुरुष मुख में रखे तो घोर दुर्गन्ध भी नष्ट होकर सुगन्धि उत्पन्न होती है।

गुडत्वगेलानख जातिशिल्लैः स्वर्णान्वितैः क्षुद्रवटी विधेया।
ताम्बूलगर्भादिव च रात्रौ करोति पुंसां मुखवासमिष्टम्।३३।

गुड़, दालचीनी, इलायची, नख (गन्धद्रव्य), जायफल और नागकेशर, इनमें सुवर्ण का वरक मिलाकर इनकी क्षुद्रवटी करके रात्रि में ताम्बूल के साथ खाने से पुरुषों के मुख में सुगन्धि उत्पन्न होती है।

चूर्णं मुरा केशर कुष्ठकानां प्रातर्दिनान्ते परिलेढियास्त्री।
अप्यर्द्ध मासेन मुखस्यगन्धः कर्पूरतुल्यो भवति प्रकामम् ॥३४॥

जो स्त्री प्रातःकाल के समय जटामांसी, केशर और कूठ तीनों को पीस इनका चूर्ण चाटती है उसके मुख की दुर्गन्ध १५ दिन में समाप्त होकर कपूर के समान हो जाती है।

यःकुष्ठचूर्णं मधुनाघृतेन पिकाक्षबीजान्वितमत्ति नित्यम्।
मासैकमात्रेण मुखंतदीयं गन्धायतेकेतकगन्धतुल्यम् ॥ ३५ ॥

जो कोई कूठ के चूर्ण, मधु और घृत के साथ तालमखाने का नित्य सेवन करता है उसका मुख एक महीने में केतकी के गन्ध के समान हो जाता है।

गोजलैः क्वथिता पथ्यामिशिकुष्ठकणान्विता।
वदनस्य दुरामोदं निहन्ति परिशीलिता ॥ ३६ ॥

गोमूत्र में हरड पकाकर उसमें सौफ, कूठ और पीपल डालकर सेवन करने से मुख की दुर्गन्ध दूर होती है।

तिलं जातिफलं पूगं भक्षयित्वा पिबेदनु।
शोततोयं पलार्द्धन्तु आस्य दुर्गन्धनाशनम् ॥ ३७ ॥

तिल, जायफल, सुपारी, भक्षण करने से और इसके ऊपर ठण्डा जल आधा पल पीने से मुख की दुर्गन्ध नष्ट होती है।

घृतकाञ्जिक गण्डूषं परितो भक्षयेच्छटोम्।
तथाकृते भवेदास्येदुरामोद विनाशनम् ॥ ३८ ॥

घी तथा काँजी इन दोनों का गण्डूष (कुल्ला) करने और इनके आदि, अन्त, तथा मध्य में कपूर का भक्षण करने से मुख की दुर्गन्ध नष्ट होती है।

गोमूत्रैः क्वाथयेत्कुष्ठं बालकं सहरीतकिम्।
सर्वंपिष्ट्वा वटीं कुर्यान्मुखदुर्गंध नाशनम् ॥ ३९ ॥

गोमूत्र में कूठ, सुगन्धबाला और हरड डालकर क्वाथ बनावे और फिर सब पीसकर गोली बनाकर मुख में रखने से मुख की दुर्गन्ध का नाश होता है।

कटुतिक्त कषायेण दन्तकाष्ठेन नित्यशः।
दुर्गन्धहन्तिनोचित्रं क्षौद्रैर्वा कुष्टचूर्णकम् ॥ ४० ॥

कड़वे और तीखे काढे के सेवन से अथवा नित्य दतोन करने से अथवा शहद के साथ कूठ का चूर्ण सेवन करने से मुख की दुर्गन्ध नष्ट होती है।

सिंधूत्थ सिद्धार्थक सारिवानां त्वचायुतानां परिलेपनेन।
स्त्रीपुंसयोर्यौवनयोर्हठेन विनाशमायाति मुखस्थगन्धः ॥४१॥

सेंधा नमक, सरसों, सारिवन तथा दालचीनी चूर्णकर इनका लेप करने से स्त्री पुरुषों के युवावस्था में उठने वाली मुख की दुर्गन्ध दूर हो जाती है।

पिष्ट्वामसूरं घनसावरेण मुहुर्मुहुस्तेन विलिप्य वक्त्रम्।
नश्यन्ति गण्डाः पिटिकाः प्ररूढा मासार्द्धमात्रेण विलासिनाम् ॥४२॥

मसूर को कपूर तथा सरवन के साथ पीसकर वारम्वार उसको स्त्रियों के मुखपर लेप करने से गण्ड, पिटक (मुहाँसे) पन्द्रह दिन में ही नष्ट हो जाते हैं।

यः कंटकाञ्शाल्मलि पादपस्य क्षीरेणपिष्ट्वाष्टदिनं विलिप्य।
गण्डप्रदेहाः पिटकास्त्र्यहेण प्रयांतिनाशं पुरुषस्यतन्व्याः ॥४३॥

सेमल के वृक्ष के काँटे आठ दिन दूध में पीसकर स्त्री या पुरुष के मुख पर लेप करने से उस स्त्री या पुरुष के मुख की झाँई तथा मुहाँसे आदि तीन दिन में नष्ट हो जाते हैं।

धान्यं वचा सावरतुल्यभागं पिष्ट्वा लिपेत्तेन मुखं नितांतम्।
मुखोद्भवा यौवनजा नराणां नश्यन्ति नूनं पिटकाः क्रमेण।४४।

धनियाँ, वच, सरवन यह बराबर भाग लेकर पीसकर निरन्तर मुखपर लेप करने से निश्चय ही मनुष्यों के जवानी के मुहाँसे या पिडिक दूर हो जाते हैं। "शैलजलोध्रतुल्य" भी पाठ है अर्थात् मैनसिल और लोध।

सिद्धार्थबीज द्वितयं तिलं च क्षारेणपिष्टवा परिलिप्यवक्त्रम्।
सप्ताहमात्रेण मुखस्थनीलीं निहंति कृष्णामिति रन्तिदेवः।४५।

सरसों और तिल को जवाखार के साथ पीसकर मुखपर लेप करने से सात दिन में मुख की नीलिका, फुन्सी, मुहाँसे आदि नष्ट होते हैं ऐसा रन्तिदेव ने कहा है।

निशाद्वयं गैरिकशोणयष्टि रम्भाम्बु माहेन्द्र यवोत्तमानि।
निघ्नन्ति नीलि त्रयवार मात्राच्चन्द्रेणतुल्यं वदनं भवेच्च।४६।

दोनों हलदी, गेरू, सोनापाठा, कदली, नेत्रवाला, इन्द्रजौ यह तीन बार मुख पर लगाने से मुख की फुन्सी दूर होती है और मुख चन्द्रमा के तुल्य हो जाता है।

मरिचं रोचनायुक्तं सम्पेष्य मुखमालिपेत्।
तरुण्याः पिटकाः सर्वानश्यन्ति मुखसम्भवाः॥ ४७॥

काली मिरच और गोरोचन पीसकर मुख पर लगाने से स्त्री के मुख के जवानी के मुहाँसे आदि दूर हो जाते हैं।

व्यंगेषु चार्जुनत्वग्वा मञ्जिष्ठा वा समाक्षिका।
एता लिप्तास्त्यहं यावद्भवेत्पद्मोपमं मुखम्॥ ४८॥

अर्जुन की छाल और मजीठ का चूर्ण इनको शहद में मिलाकर तीन दिन मुखपर लेप करने से मुख कमल के समान निर्मल हो जाता है।

मातुलिङ्ग जटासर्पिः शिलागोशकृतो रसः।
मुखकान्ति करोलेपः पिटका तिलकालजित्॥ ४९॥

बिजौरे की जड़, घी, मैनसिल, गाय के गोबर का रस इनका लेप करने से मुख पर कान्ति होती है और पिटिका तिल आदि दूर होते हैं।

रक्तचन्दन मञ्जिष्ठा कुष्ठलोध्रप्रियंगवः।
वटांकुर मसूराश्च व्यंगघ्ना मुखकान्तिदाः॥ ५०॥

रक्त चन्दन, मजीठ, कूठ, लोध, प्रियंगु, वट के अंकुर, मसूर इनका लेप मसूरिका, व्यंगादि को दूर कर मुखपर सुगन्ध और कान्ति उत्पन्न करता है।

मञ्जिष्ठा मधुकं लाक्षा मातुलिंगं सपिष्टकम्।
कर्षप्रमाणैरेतैस्तु तैलस्य कुडवं पचेत्॥ ५१॥
अजापयस्तद्द्विगुणं शनैर्मृद्वग्निना पचेत्॥ ५२॥
लीनका पिडिका व्यंगा अभ्यंगादेव नाशयेत्।
मुखप्रसन्नेपि हितं नीलकर्कश वर्जितम्॥ ५३॥
सप्तरात्र प्रयोगेण भवेत्कञ्चन सन्निभम्।
अत्र द्विरुक्तत्वाद्यष्टीमधु कर्षद्वयं तथा॥ ५४॥

मजीठ, मुलैठी, लाख और बिजौरे की जड़ को पीस कर एक-एक कर्ष प्रणाम लेकर एक कुडव तेल में पकावे। फिर उससे दूना बकरी का दूध लेकर मृदु अग्नि में इन सबको पकावे। लीनका, छोटी फुन्सी, व्यंग, (मुहाँसे आदि) सब इनके मलने से दूर होते हैं, मुख निर्मल हो जाता है, कंटकादि नहीं रहते तथा खुरदरापन जाता रहता है। सात रात के प्रयोग से मुख सुवर्ण के तुल्य हो जाता है। मधु को दो बार कहने से शहद दो कर्ष लेना चाहिये।

मनःशिला तथालोध्रं द्विनिशा सर्षपाः समाः ।
वारिपिष्टो हितोलेपो वदनेश्यामिकां हरेत् ॥ ५५ ॥

मैनशिल, लोध, दोनों हलदी, सरसों यह बराबर लेकर जल से पीस कर लेप करने से मुख की श्यामता छूट जाती है ।

महिषीक्षीर संयुक्तं रजनी रक्त चन्दनम् ।
कृतेलेपे निहन्त्याशु श्यामिकां वदनाश्रिताम् ॥ ५६ ॥

भैंस के क्षीर से युक्त दोनों हलदी और लाल चन्दन मिलाकर मुख पर लेप करने से मुख की झाँई दूर होती है तथा स्याही भी जाती रहती है ।

उभेहरिद्रे मञ्जिष्ठा घृतं गौराश्च सर्षपाः ।
पेश्यं गैरिक संयुक्तमजाक्षीरेण पाचितम् ॥ ५७ ॥
एतेनैव भवेद्वक्त्रमुदयादित्य वर्चसम् ।

दोनों हलदी, मजीठ, गाय का घी, सफेद सरसों, गेरू के साथ इन सबको पीसकर बकरी के दूध के साथ पकावे । इससे मुख पर सूर्य के समान कान्ति होती है ।

वचा लोध्रमुशीरं च सर्पिः सर्जरसः पयः ॥ ५८ ॥
पीतानि वटपत्राणि रजनीं सहपेषयेत् ।
लेपोयं मुखपादाभ्यां पद्मवत्कुरुते भृशम् ॥ ५९ ॥

वच, लोध, उशीर, घृत, राल, दूध, पीले वट के पत्ते, हलदी के साथ पीसकर मुखपर लेप करने से कमल ने समान मुख प्रकाशित होता है ।

मसूरान्मधुना सार्द्धं पिष्ट्वा तैर्मर्दयेन्मुखम् ।
सप्तरात्र प्रयोगेण पुण्डरीक दलप्रभम् ॥ ६० ॥

मसूर को शहद के साथ पीसकर मुखपर मलने से सात रात्रि के प्रयोग में कमल के समान मुख हो जाता है ।

इति मुखरञ्जनम् ।

अथ केशरञ्जनम्

स्नग्गन्ध धूपाम्बरभूशणानां न शोभते शुक्ल शिरोरुहाणाम् ।
यस्मादतोमूर्द्धज रागसेवां कुर्य्याद्यथैवाञ्जन भूषणानाम् ॥

माला, गन्ध, धूप, वस्त्र, भूषण यह श्वेत बाल वाले पुरुषों को शोभित नहीं होते । इस कारण बालों की सेवा अवश्य करे जिससे वह अंजन और भौंरे के समान हो जाँय ।

आम्राण्डेनोत्थितं तैलं कान्तपाषाण चूर्णितम् ।
काकतुंडीफलं कृष्णं चूर्णयित्वा प्रयत्नतः ॥ ६१ ॥
धान्यराशौ विनिःक्षिप्य मासार्द्धं शिरसिक्षिपेत् ।
नस्यं दिनत्रयन्तेन केशरञ्जनकं भवेत् ॥ ६२ ॥
वर्षार्द्धं तिष्ठते कृष्णभ्रमराञ्जन सन्निभम् ।

आम की गुठली का तेल और कान्तपाषाण का चूर्ण, काकादनी का फल, लोहचूर्ण यह सब यत्नपूर्वक चूर्ण करके या अंकोल का तेल धान्यराशि में दबा कर एक महीने के उपरान्त निकाल कर शिर में तीन दिन लेप करने से केश काले हो जाते हैं और छः महीने तक लेप करने से वे बाल काले भौंरे के समान हो जाते हैं ।

त्रिफला लोहचूर्णं तु नीली भृङ्गी समूलकम् ॥ ६४ ॥
एतच्चूर्णंमिडामूत्रे दिनमेकं विभावयेत् ।
तेनैव मर्द्दयेच्छीर्षं रञ्जते भ्रमरोपमम् ॥ ६५ ॥

त्रिफला, लोहचूर्ण, नील के पत्ते, भाँगरामूल इन सबका चूर्ण बकरी के मूत्र में एक दिन भावना देकर फिर शिर पर मलने से भौंरे के समान बाल हो जाते हैं ।

गुञ्जाबीजस्य चूर्णन्तु कुष्टैला देवदारुकम् ।
तुल्यांशं भावयेच्चूर्णं दिनैकं भृङ्गजद्रवैः ॥ ६६ ॥
चूर्णाच्चतुर्गुणे तैले पाचयेन्मृदुवह्निना ।
तेनाभ्यंगाद्धनाकेशारञ्जनं भ्रमरोपमम् ॥ ६७ ॥

चौंटली के बीजों का चूर्ण, कूठ, एला, देवदारु यह बराबर लेकर इनके चूर्ण की एक दिन भाँगरे के रस में भावना दे । इसके मलने से बाल भौंरे के समान कृष्णवर्ण होते हैं । चूर्ण से चौगुने तेल में इसे कोमल अग्नि से पकाना चाहिये । इसके लगाने से बाल भौंरे के समान हो जाते हैं ।

हस्तिदन्तस्य दग्धस्य समांशेन रसं समम् ।
अजाक्षीरेण तं पिष्ट्वा लेपनात्केशरञ्जनम् ॥ ६८ ॥

हाथी का दाँत जलाकर और उसके समान रस लेकर बकरी के दूध में उसे पीसकर लेप करने से बाल काले होते हैं ।

त्रिफला लोहचूर्णन्तु इक्षु भृङ्गरसस्तथा ।
कृष्णमृत्तिकया साद्धं भाण्डे मासे निरोधयेत् ॥ ६९ ॥
तल्लेपाद्रं जयेत्केशाश्चतुर्मासं स्थिरोभवेत् ।

त्रिफला, लोह चूर्ण, ईख का रस, भाँगरे का रस, इनसे आधी काली मिट्टी एक बर्तन में एक महीने तक बन्द कर रक्खे। उसके लेप करने से काले बाल होकर चार महीने तक स्थिर रहते हैं।

लोहकिट्टं जपापुष्पं पिष्ट्वा धात्रीफलं समम् ॥ ७० ॥
त्रिदिनं लेपयेच्छीर्षं द्विमासं केशरञ्जनम्।

लोहकिट्ट, जवा (गुडहल) के फूल, आमले यह समान भाग ले। इनको पीसकर तीन दिन लेप करने से दो महीने तक बाल काले रहते हैं।

भृङ्गराजरसप्रस्थं तैलं कृष्णतिलात्समम् ॥ ७१ ॥
मर्दयेत्प्रहरैकन्तु तैलाक्तं नीलिकारसम्।
तल्लेपं त्रिदिनं कुर्य्यात्केशरञ्जनकं भवेत् ॥ ७२ ॥

भाँगरे का रस एक सेर और इसी के बराबर काले तिल ले। एक प्रहर तक इसमें तेलयुक्त नीली का रस लिप्त करे। इसके तीन दिन लगाने से बाल काले हो जाते हैं।

चूर्णसर्जयवक्षारं सिद्धार्थं चारनालकैः।
नागपुष्पं दिनेमध्ये तल्लेपात्केशरञ्जनम् ॥ ७३ ॥

सज्जीखार, जवाखार, सरसों, काँजी और नागकेशर इनको पीसकर केशों में लगाने से बाल काले हो जाते हैं।

काकमाचीय बीजानि समं कृष्णतिलांस्ततः।
तत्तैलं ग्राहयेद्यंत्रे तस्यस्येत्केशरंजनम् ॥ ७४ ॥

काकमाची के बीज और उसके बराबर काले तिल लेकर यन्त्र में उनका तेल निकाल कर बालों में लगाने से बाल काले हो जाते हैं।

गोघृतं भृङ्गजद्रावं मयूरशिखया सह।
अग्निना मृदुना पाच्यं तं न्यस्तेत्केशरंजनम् ॥ ७५ ॥

गाय का घी, भाँगरे का रस, मोरशिखा के साथ मृदु अग्नि पर पकाकर इसके लगाने से बाल काले हो जाते हैं, यह प्रयोग उत्तम है।

काकमाचीयबीजानि समं कृष्णतिलांस्ततः।
जपापुष्परसं क्षौद्रं कर्षकं न्यस्यमाचरेत् ॥ ७६ ॥
सप्ताहं रंजयेत्केशान्सर्वन्यस्येत्वयं विधिः।

काकमाची के बीजों के समान काले तिल लेकर उसमें गुडहल के फूलों का रस तथा शहद एक कर्ष डाले। सब एकत्र करके सात दिन तक लगाने से बालों को काला रखता है। सब न्यास की यही विधि है।

त्रिफला लोहचूर्णन्तु वारिणा पेषयेत्समम् ॥ ७७ ॥
द्वयोस्तुल्येन तैलेन पचेन्मृद्वग्निना क्षणम् ।
तैलतुल्यं भृङ्गरसं यावत्तैलं च पाचयेत् ॥ ७८ ॥
स्निग्धं भाण्डगतं भूमौस्थितं मासात्समुद्धरेत् ।
सप्ताहं लेपयेद्दृष्ट्वा कदल्याश्चदलेशिरः ॥ ७९ ॥
निर्वातेक्षीरभोजीस्यात्क्षालयेत्त्रिफलाजलैः ।
नित्यमेवं हि कर्त्तव्यं सप्ताहै रंजनं भवेत् ॥ ८० ॥
यावज्जीवं न सन्देहः केशाः स्युर्भ्रमरोपमाः ।

त्रिफला और लोहचूर्ण यह समान भाग लेकर जल से पीसकर इन दोनों के समान तेल लेकर मृदु अग्नि पर पकावे। तेल के बराबर भाँगरे का रस भी इसमें डाले। जब रस जल जाय और तेलमात्र रह जाय तब उसे चिकने बर्तन में भरकर पृथ्वी में गाड़ दे। एक महीने के बाद निकाल कर केले के पत्तेपर लगाकर शिर में सात दिन तक लगावे। निर्वात स्थान में क्षीर का भोजन-पान करे और फिर त्रिफले के जल से धो डाले। सात दिन ऐसा करने से बाल सर्वथा काले हो जाते हैं और निःसन्देह जन्मपर्यन्त केश श्याम रहते हैं।

महाकालस्य बीजानि वाकुचीबीज तत्समम् ॥ ८१ ॥
चूर्णं द्रव्यैश्च निर्गुण्ड्यां भावयेत्त चतुर्दिनम् ।
जपापुष्पद्रवैरेवं ततः पातालयंत्रके ॥ ८२ ॥
तैलंग्राह्यं तु तल्लेपे पत्रैरेरण्डजै शिरः ।
वेष्टयेत्क्षीरभोजीं स्याद्वातातप विवर्जितः ॥ ८३ ॥
एवं सप्तदिनं लेप्यं तण्डुलान्धारयेन्मुखे ।
कृष्णवर्णाः प्रजायन्ते तथा भवति प्रत्यहम् ॥ ८४ ॥

अथवा महाकाल के बीज, उसी के समान भाग बाकुची और सोमराजी के बीज लेकर इनको चूर्णकर चार दिन तक गुडहल के रस की भावना दे और पाताल यन्त्र से इसका तेल निकाल कर एरण्ड के पत्ते में लगाकर शिरपर लेप करे और क्षीर (दूध) पान और वातधूप का सेवन न करे। मुख में तण्डुल रखकर इस प्रकार सात दिन तक बालों पर लेप करने से बाल कृष्णवर्ण हो जाते हैं।

महोग्रं कर्दमेक्षिप्त्वा षण्डमासात्तु समुद्धरेत् ।
तद्द्रुतं जायते कृष्णं कर्षैकं शिरसिक्षिपेत् ॥ ८५ ॥
केशाः कृष्णाः प्रजायन्ते भ्रमरींकुल सन्निभाः ।
कपाली रंजनं ख्यातं यावज्जीवं न संशयः ॥ ८६ ॥

तथा वायविडंग को कीचड़ में डालकर छः महीने तक पड़ा रहने दे। उसका एक कर्ष चूर्ण करके शिर में डालने से बाल काले हो जाते हैं और जीवनपर्यन्त वैसे ही रह जाते हैं इसमें सन्देह नहीं।

सनीलिकां सैन्धवपिप्पलीभिर्घृतानुयुक्तैरुलिप्य केशम्।
क्रमेण शंखोपममाशुकृष्णं शिरोरुहं मेचकतामुपैति ॥ ८७ ॥

नील की जड़, सेंधानमक, पीपल और घृत से बालों पर लेप करने से क्रमशः श्वेत बाल भी काले वर्ण के हो जाते हैं।

फलान्वितं चूततरोः प्रसूनं पिंडारकं पाण्डुरनीलिके वा।
प्रस्थप्रमाणं च तिलस्यतैलं पचेदमीभिर्विदितोपदेशः ॥ ८८ ॥
तस्मिंश्च मध्ये हंसपक्षः क्षिप्तो भवेन्मेचकवर्णयुक्तः।
पाकस्तदैवास्यनरैर्विधेयः ख्यातं पृथिव्यामपि नीलतैलम्।
एतन्निलिप्तं पलितं नराणां शंखावदातं सकलं त्रिरात्रम्।
पुष्पं नश्रेयांसि समानयुक्तं चिरं भवेद्दृष्ट इतिप्रयोगः ॥९०॥

फूल सहित आम के फल, पिंडार, धवई के फूल, नील यह सब लेकर और १ सेर तिल का तेल लेकर इसमें यह सब पकावे। उसके मध्य में राजहंस क बाल डालकर देखे, यदि वह डालते ही कृष्णवर्ण हो जाय तो इसका पाक यथार्थ जाने। यह पृथ्वी में नील तेल के नाम से विख्यात है। इसको बालों पर लगाने से श्वेत बाल भौंरे के समान काले हो जाते हैं यह प्रयोग अच्छी प्रकार देखा हुआ और सिद्ध है।

शतावरी कृष्णतिलेन युक्ता गोरोचनाकाकमुखाभिधा च।
अमीभिरालिप्य पुनः सुकेशान्करोति शुक्लानपि कृष्णवर्णान्।

शतावरी, काले तिल, गोरोचन, काकमुखा इनको पीसकर बालों पर लेप करने से शुक्ल बाल काले हो जाते हैं।

मदंतिकाया रसकल्क सिद्धं तिलोद्भवं तैलमिदं नराणाम्।
अकाल जातं पलितं सरौक्ष्यंकेशस्य कारुष्य मलंनिहन्ति ॥

नवमल्लिका का रस निकाल कर तिल का तेल डालकर कल्क लगाने से मनुष्यों के अकाल में श्वेत हुए बाल श्याम हो जाते हैं। यह बालों के सब प्रकार के रोग और मल को दूर करता है।

इति केशरञ्जनम्।

अथ सौगन्धिकरणम्

मुत्थ च सर्षपं चैव ह्युशीरं च तथैव च ।
हरीतक्याश्च क्वाथेन आमलक्याः समंततः ॥ ९३ ॥
केशमूलं समालेप्य मेघतुल्यो भवेत्कचः ॥ ९४ ॥

मोथा, सरसों, उशीर, हरड, आमला इनका क्वाथ करके केशों की जड़ में लेपन करने से बाल मेघ के समान काले हो जाते हैं ।

सूक्ष्मैलजीमूतनखैः सचूतैः स्वर्णामसी पत्रक संयुतैश्च ।
सौरभ्यकांती किलमूर्द्धजानां स्नात्वानरोविन्दति सर्वदैव ॥

छोटी इलायची, मोथा, नख (सुगन्ध द्रव्य), आम, नागकेशर, शेफालिका, तेजपात, ढाक इनका चूर्ण करके इनको बालों में लगाकर स्नान करने से बालों में सुगन्ध उत्पन्न हो जाती है ।

स्वर्णाम्बुदोशीर नखीयुतानां पत्यान्वितानां च विलेपने च ।
स्नात्वा नरः सौरभमर्द्धमासं वैकल्पमाप्नोति शिरोरुहस्य ॥

नागकेशर, मोथा, उशीर, नखी (सुगन्ध द्रव्य) और हरड इनका लेप कर स्नान करने से मनुष्यों के शिर में पन्द्रह दिन तक सुगन्धि आती है ।

पथ्यावसानामलकीफलानामजस्तु जीमूतरसामयानाम् ।
मासीयुतानां परिलेपनेन स्नात्वा नरः सौरभकान्तिमेति॥९७॥

इतिकेशरंजनेस्नानीयसुगन्धिद्रव्यम् ।

हरडी की बकली, आमला, मेढासिंगी, मोथे का रस और कूठ को जटामांसी के साथ लेप करके स्नान करने से सुगन्धि उत्पन्न हो जाती है ।

इति केशरञ्जने स्नानीयसुगन्धिद्रव्यम् ।

अथ केशयूकादिनिवारणम्

विडंग गंधोत्पल कल्कयोगाद्गोमूत्रसिद्धं कटुतैलमेतत् ।
अभ्यंगयोगेन शिरोरुहाणां यूकादिलिक्षाप्रचयं निहन्ति ॥९८॥

केशों की लीखादि का निवारण करना : बायविडंग, गन्धक और कमल इनको पीसकर गोमूत्र से सिद्ध कर कड़वे तेल में पकाकर बालों में मलने से सम्पूर्ण लीखें मर जाती हैं ।

गोमूत्रसारिवा मूलं लेपाद्यूकानिवारणम् ।

गोमूत्र और सरवन की जड़ का लेप लीखों का निवारण करता है ।

पारदं मर्दयेन्निष्कं कृष्णधत्तूरजैर्द्रवैः ॥ ९९ ॥

नागवल्ली द्रवैर्वापि वस्त्रखण्डं विलेपयेत् ।
तद्वस्त्रं वेष्टयेन्मौलौ धार्यायामत्रयं तथा ॥ १०० ॥
यूकाः पतन्तिनिःशेषं मस्तकान्नात्र संशयः ।

काले धतूरे के रस में एक निष्क (१०८ रत्ती) पारे को खरल करे और पान के रस में मिलाकर वस्त्र पर लपेट कर वह वस्त्र शिर पर धारण करे। इसे तीन पहर शिर पर रखने से शिर से सब लीखें गिर जाती हैं इसमें सन्देह नहीं है।

द्विनिशा नवनीतेन लेपान्मौलेः प्रकण्डुनुत् ॥ १०१ ॥

दोनों हलदी मक्खन के साथ मिलाकर मलने से शिर की खुजली नष्ट हो जाती है।

नीलोत्पलं तिलं यष्टिसर्षपा नागकेशरम् ।
धात्रीफलं समं पिष्ट्वा लेपो यूकाविनाशकः ॥ १०२ ॥

नीलकमल, तिल, मुलेठी, सरसों और नागकेशर को आमले के साथ पीसकर लेप करने से यह लेप लीख का नाश कर देता है।

निशागन्धक गोमूत्रं विडङ्गं कटुतैलकम् ।
पारदेनसमं मर्द्यलेपो यूकाविनाशकः ॥ १०३ ॥

हलदी, गन्धक, गोमूत्र, वायबिडंग और कड़वा तेल को पारे के साथ मिलाकर लेप करने से यह लीखों को दूर करता है।

लाक्षा भल्लातकं मुस्ताकूटगुग्गुल सर्षपाः ।
विडंगेन समं लेपाद्धूमोयूकानिवारकः ॥ १०४ ॥

लाख, भिलावा, नागरमोथा, कूठ, गूगल, सरसों, वायबिडंग इनको मिलाकर लेप करने से लीखो का निवारण हो जाता हैं।

बिल्वमूलं सगोमूत्रं लेपाद्यूकाविनाशनम् ॥ १०५ ॥

बेल की जड़ और गोमूत्र इनका लेप लीखों का निवारण करने वाला है।

इति केशरञ्जन में यूकादि निवारण।

अथ केशस्येन्द्रलुप्तादिनिवारणम्

गुंजाफलैः क्षौद्रयुतैर्विलिप्यशिरः प्रदेशे सकलेन्द्रलुप्तम् ।
अनेन योगेन सदैव केशारोहन्ति कृष्णाःकुटिलाविशालाः।१०६।

बालों का इन्द्रलुप्त रोग निवारण करना : शिर के बाल गिरने लगें तो इसको इन्द्रलुप्त कहते हैं। चौंटली और शहद पीसकर शिर पर लगाने से सब प्रकार का इन्द्रलुप्त रोग दूर हो जाता है। इस योग से बाल जमकर बड़े और कुटिल हो जाते हैं।

मातङ्गदंतस्य मसीं विधाय श्वेतांजनं तुल्य तयासुपिष्टम् ।
लिप्येदनेनैव महेन्द्रलुप्तं केशाः प्ररोहंत्यपि हस्तमध्ये ॥१०७॥

हाथी के दाँत को जलाकर उसकी राख कर उसके बराबर रसौत लेकर बकरी के दूध में पीसकर लेप करने से हाथों की हथेली में भी बाल जम सकते हैं और जगह की क्या कहें ।

कुंकुमं मरिचैः सार्द्धं पिष्ट्वा तैलेन लेपयेत् ।
इन्द्रलुप्तं निहंत्याशु किंवा जंबीरजद्रवैः ॥ १०८ ॥

कुमकुम और काली मिर्च को तेल के साथ पीसकर लेप करने से इन्द्रलुप्त रोग शीघ्र नष्ट हो जाता है; जम्बीरी के बीजों का रस भी यही गुण करता है।

सुदग्धं हस्तिदन्तन्तु छागदुग्धं रसांजनम् ।
पिष्ट्वालेपात्प्रजायन्ते केशाः करतलेष्वपि ॥ १०९ ॥

दग्ध हुआ हाथी का दाँत, बकरी का दूध, रसोत इनको पीसकर हाथ में लेप करने से भी बाल जम आते हैं ।

जातीपुष्पं दलं मूलं कृष्णगोमूत्र पेषितम ।
लेपोऽयं सप्तरात्रेण दृढकेशकरः परः ॥ ११० ॥

चमेली के फूल, दल और मूल, काली गाय के मूत्र में पीसकर यह लेप करने से सात रात्रि में बालों को दृढ़ कर देता है ।

शृंगाटत्रिफलाभृङ्गीनीलोत्पलमयोरजः ।
सूक्ष्मं चूर्णं समं कृत्वा पचेत्तैले चतुर्गुणे ॥ १११ ॥
तल्लेपेन दृढाः केशाः कुटिलाः सरलाऽपि ।

सिंघाड़ा, त्रिफला, भाँगरा, नीलकमल, लोह चूर्ण इन सबका चूर्ण कर इसमें चौगुना तेल डालकर पका ले । (कहीं 'भृंगाटं' पाठ है, जिसका अर्थ भाँगरा है) इसका लेप करने से बाल कुटिल और सरल हो जाते हैं ।

कीटभक्षितकेशं तु स्थानं स्वर्णेन घर्षयेत् ॥ ११२ ॥
यावत्सुतप्ततां याति तावल्लेपमिमं कुरु ।

यदि बालों को कीड़ा खा गया हो तो सुवर्ण को वहाँ घिसे; जब तक वह तप्तता को प्राप्त न हो जाय तब तक बराबर घिसता रहे ।

भल्लातकं च बृहती गुञ्जामूलफलं तथा ॥ ११३ ॥
मधुनासहलेपेन वायुक्षीरोटक प्रणुत् ।

भिलावा, कटेरी, चौंटली की जड़ और फल यह शहद के साथ पीसकर लेप करने से इन्द्रलुप्त दूर होता है ।

भल्लातकं कृष्णतिलं कण्टकारीफलं समम् ॥ ११४ ॥
पिष्टं तण्डुलतोयेन लेपोयन्तं विनाशयेत् ।

भिलावा, काले तिल, कटेरी के फल यह समान भाग ले। इसे चावल के जल से पीसकर लेप करने से इन्द्रलुप्त रोग दूर होता है।

जपापुष्पैश्च तं हन्यात्कृष्णा गोमूत्रलेपनात् ॥ ११५ ॥
तिलप्रसूनं सहगोक्षुरेण सलावणं गव्यघृतेन पिष्टम् ।
सप्ताहमात्रेणशिरः प्रलेपाद्भवन्तिदीर्घाः प्रचुराश्च केशाः ।११६।

काली गाय के मूत्र में जवा के पुष्प पीसकर लेपन करे; अथवा तिल के पुष्प, गोखरू और लवण को गाय के घी से पीसकर सात दिन लेप करने से बाल दीर्घ और बहुत घने हो जाते हैं।

शाल्मलीतालमूल्योश्च मूलं पद्मसमुद्भवम् ।
छागदुग्धेसमं पिष्टं लेपयेन्मुण्डितं शिरः ॥
त्रिदिनं भक्षयेत्तच्च केशवर्द्धनमुत्तमम् ॥ ११७ ॥

सेमल, तालमूली, कमलमूल यह बराबर लेकर बकरी के दूध के साथ पीसने से यह लेप शिरमुण्डित बालों को हितकारी है। तीन दिन लेप करने से उत्तम केशवृद्धि हो जाती है। इति केशरंजन में इन्द्रलुप्त आदि निवारण।

अथकेशशुक्लीकरणम्

वज्रीक्षीरेण सप्ताहं तच्छेषं भावयेत्तिलम् ।
तत्तैललिप्ताः केशाश्च शुक्लाः स्युर्नात्र संशयः ॥ ११८ ॥

बाल श्वेत करने की विधि। थूहर के दूध में काले तिलों को सात दिन भावना देकर उस तेल को बालों पर लेप करने से निःसन्देह बाल श्वेत हो जाते हैं।

रोगामलकचूर्णन्तु वज्रीक्षीरेण सप्तधा ।
भावयेत्तस्यलेपेन शुक्लतां यांति मूर्द्धजाः ॥ ११९ ॥

कूठ और आमले के चूर्ण को थूहर के दूध से सात बार भावित करने से इसका लेप बालों को श्वेत करता है।

अजाक्षीरेण सप्ताहं भावयेदभयाफलम् ।
तच्चूर्णं सहतैलेन लेपाच्छुक्लाभवन्तिहि ॥ १२० ॥
इति केशशुक्लीकरणम् ।

हरड को सात दिन बकरी के दूध में भावना देकर उसका चूर्ण कर तेल में मिलाकर बालों में लगाने से बाल श्वेत हो जाते हैं।

इति श्रीनित्यनाथविरचिते कामरत्ने भाषाटीकायां पञ्चमोपदेशः ॥ ५ ॥

अथ वाजीकरणम्

बलेननारीपरितोषमेति न हीनवीर्यस्य कदापि सौख्यम् ।
अतोबलार्थं रतिलम्पटस्य वाजीविधानं प्रथमं विदध्ये ॥ १ ॥

वाजीकरण : बल से स्त्री सन्तुष्ट होती है, परन्तु हीनवीर्य पुरुष से वह कभी सन्तुष्ट नहीं होती । इस कारण उन लम्पट पुरुषों के बल के निमित्त वाजी (पुष्ट) प्रकरण लिखा जाता है ।

अश्विन्यां वटवृन्दाकं क्षीरैः पीत्वा महाबलः ।
पुष्योद्धृतं पिबेन्मूलं श्वेतार्कस्य प्रयत्नतः ।
सप्तरात्रं तु गोक्षीरैर्वृद्धोऽपि तरुणायते ॥ २ ॥

अश्विनी नक्षत्र में बड़ का वन्दा दूध के साथ पीसकर पीने से बल की वृद्धि होती है । पुष्यनक्षत्र में उखाड़ी हुई श्वेत आक की जड़ सात दिन तक गाय के दूध के साथ यत्न से पीने से वृद्ध भी तरुण हो जाता है ।

चूर्णविदार्याः स्वरसेन तस्या विभावितं भास्कर रश्मिजालैः ।
मध्वाज्यसंमिश्रितमेव लीढ्वा दशस्त्रियोगच्छति निर्विशंक।३।

विदारीकन्द का चूर्ण कर उसी के स्वरस में भावना देकर धूप में सुखाकर फिर शहद और घृत मिलाकर न्यून और अधिक सेवन कर मनुष्य दश स्त्रियों को तृप्त कर सकता है ।

भूयो विभाव्यामलस्य चूर्णं रसेन तस्यैव सिताज्यमिश्रम् ।
सक्षौद्रमालेढि निशामुखे योनूनं सवृद्धः तरुणत्वमेति ॥ ४ ॥

आमले के रस में आमलों को भावना देकर उसमें मिश्री और घृत मिलाकर शहद के साथ रात्रि में पान करने से वृद्ध पुरुष भी तरुण हो जाता है ।

कर्षप्रमाणं मधुकस्य चूर्णंक्षौद्राज्यसंमिश्रितमेवलीढवा ।
क्षीरानुपानाद्रमते तु तावद्यावन्नराणामुदरस्थमेतत् ॥५॥

मुलेठी का चूर्ण एक कर्ष लेकर उसमें घृत और शहद मिलाकर चाटने से और उसके ऊपर दूध पीने से मनुष्य में अधिक सामर्थ्य हो जाती है अर्थात् यह जब तक न पचे तब तक वह रमण करता है ।

सितपिकतरुबीजं तण्डुलायष्टिकानां सघृतमधुसमेतं प्रत्यहं योवलेढि ।
जठरकुहरमध्येयाति पाकं नयावद्रमयति कृशदेहोप्यंगनानां समूहम् ।६।

कौंच के बीज, साठी के चावल, मुलेठी, न्यूनाधिक घृत और शहद मिलाकर चाटने से जब तक यह न पचे तब तक कृश मनुष्य भी स्त्रियों के साथ रमण कर सकता है।

वृद्धशाल्मलिमूलस्यरसं शर्करयापिबेत्।
एतत्प्रयोगात्सप्ताहाज्जायते रेतसोम्बुधिः ॥ ७ ॥

वृद्ध सेमल की जड़ का रस शर्करा के साथ पान करने से इस प्रयोग से सात दिन में मनुष्य वीर्यवान् हो जाता है।

लघुशाल्मलिमूलेन तालमूलीसचूर्णितम्।
सर्पिषा पयसा पीत्वा रतौ चटकवद्भवेत् ॥ ८ ॥

लघु सेमल की जड़ और तालमूली का चूर्ण घृत के साथ पान करने से पुरुष रति में चटक के समान हो जाता है।

घृतेनमासंमसृतानिभूयो सुभावयित्वार विशोषितानि।
क्षीरेण संसाध्य च भक्षयित्वा सयातिनारीशतमुग्ररेताः ॥९॥

और फिर घृत के साथ एक महीना इसी को प्लावित करके सुखाकर दूध से सम्भावित कर भक्षण करने से भी रति में चटकतुल्य हो जाता है और सौ स्त्रियों से रमण कर सकता है।

योवर्त्तकीलावकपिंजलानां मांसं तथावेश्म विहंगमस्य।
हव्येनसिद्धं सहसैन्धवेन महाबलः स्यादुपयुज्यमानः ॥ १० ॥

जो वत्तक, लवा और कबूतर (जंगली चिड़िया) पक्षी का मांस हव्य में घृत डालकर सेंधानमक के साथ भक्षण करता है उसका बल अधिक बढ़ जाता है।

विदारीकन्दकल्कन्तु घृतेन पयसा नरः।
उदुम्बरसमं खादेद्वृद्धोऽपि तरुणायते ॥ ११ ॥

विदारीकन्द के कल्क को घी मिले दूध के साथ एक तोला पान करने से वृद्ध पुरुष भी तरुण हो जाता है।

पिप्पलीनां रसोपेतौ बस्तांडौक्षीरसर्पिषा।
साधितौ भक्षयेद्यस्तु सगच्छेत्प्रमदा शतम् ॥ १२ ॥

बकरे के दोनों अण्डकोशों को प्रथम जल में उबाल कर फिर दूध से निकाले हुए घी में भूनकर अनुपान के अनुसार उसमें सेंधानमक और पीपल का चूर्ण मिलाकर भक्षण करने से अनेक स्त्रियों से रमण कर सकता है।

बस्ताण्डसिद्धे पयसिभावितान सकृत्तिलान्।
यः खादेत्सनरोगच्छेत्स्त्रीणां शतमपूर्ववत् ॥ १३ ॥

बकरे के अण्डकोश को दूध में औटाकर उस दूध को तिलों में बारम्बार

भावना दे, फिर उनको छाया में सुखाकर सेवन करने से सौ स्त्रियों से रमण कर सकता है।

गोक्षुरकः क्षुरकः शतमूलीवानरीनागबलातिबलाच।
चूर्णमिदं पयसानिशिपेयं यस्य गृहेप्रमदाशतमस्ति ॥ १४ ॥

गोखरू, तालमखाने, शतावर, कौंच के बीज, नागबला और खिरेंटी का चूर्ण दूध के साथ रात्रि में पान करने से सौ स्त्रियों को तृप्त कर सकता है।

अश्वत्थफलमूलत्वक्छुंगा सिद्धं पयोनरः।
सपीत्वा शर्कराक्षौद्रं कलिङ्ग इव हृष्यते ॥ १५ ॥

पीपल के फल, जड़, छाल और कली इनको अनुमान के अनुसार दूध में डाल कर औटावे। शीतल होने पर मिश्री शहदमिलाकर तथा बूरा डालकर पीने से कुलिंग (चिडे) के समान प्रसन्न होता है।

घृतं शतावरीगर्भं क्षीरेचतुर्गुणेपचेत्।
शर्क्करापिप्पलीक्षौद्रयुक्तं तद्वृष्यमुच्यते ॥ १६ ॥

घृत में शतावरी का स्वरस मिलाकर चौगुने दूध के साथ पकाकर उसमें मिश्री, शहद, पीपल, शतावर का कल्क डालकर खाने से पुष्टता होती है।

शतावरीरजः प्रस्थं प्रस्थं गोक्षुरकस्य च।
वाराह्या विशति पलं गुडूच्या पञ्चविंशतिः ॥ १७ ॥
भल्लातकानां द्वात्रिंशच्चित्रकानान्दशैवतु।
तिलानां निस्तुषाणां तु प्रस्थंदद्यात्सुचूर्णितम् ॥ १८ ॥
त्रिफलस्य पलान्यष्टौ शर्करायाश्च सप्ततिः।
माक्षिकं शर्कराद्धेन माक्षिकार्द्धेन वै घृतम् ॥ १९ ॥
शतावरीसमं देयं विदारीकन्दजं रजः।
एतदेकीकृतं चूर्णं स्निग्ध भाण्डे निधापयेत् ॥ २० ॥
पलार्द्धमुपभुंजीत यथेष्टं चास्य भोजनम्।
मासैकमुपयोगेन जरां हन्तिरुजामपि ॥ २१ ॥
वली पलित खालित्य हेमपाण्डवाद्य पीनसान्।
हन्त्यष्टादश कुष्ठानि तथाष्टावुदराणि च ॥ २२ ॥
भगन्दरं मूत्रकृच्छ्रंगृध्रसी सहलीमकम्।
क्षयंचैव महाव्याधि पञ्चकासान्सुदारुणान् ॥ २३ ॥
अशीति वातजरोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान्।
विंशति सूक्ष्मरोगांश्च संसृष्टान्सन्निपातिकान् ॥ २४ ॥

सर्वानर्शोगदान्हन्याद्वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥ २५ ॥
सकाञ्चना भोमृगराज विक्रमस्तुरङ्गमं चाप्यनुयाति वेगतः ।
स्त्रीणां शतं गच्छति सातिरेकं प्रहृष्टपुष्टं च यथा विहंगम्।२६॥
पुत्रान्संजनयेद्धीमान्नरसिंहनिभास्तथा ।
नारसिंहमिदंचूर्णं सर्वरोगहरं नृणाम् ॥ २७ ॥

इति नृसिंह चूर्णम् ।

शतावर का चूर्ण एक सेर, दक्षिणी गोखरू का चूर्ण एक सेर, वाराही कन्द का चूर्ण एक सेर, सतगिलोय एक सेर नौ छटांक, शुद्ध किये भिलावे दो सेर, चीते की छाल ढाई पाव, धुले तिल एक सेर; सोंठ, मिर्च, पीपल का चूर्ण आध सेर, मिश्री साढ़े चार सेर इससे आधा शहद और एक सेर दो छटांक घी और शतावरी के समान भाग विदारीकन्द का चूर्ण यह सब बारीक कर मिलाकर चिकने बर्तन में रख छोड़े। प्रतिदिन दो तोले सेवन करने और यथेष्ट भोजन करने से एक महीने में जरा और हीनवीर्यता नष्ट होती है। वली, शिर के बालों का श्वेत होना, गञ्जापन, प्रमेह, पीनस, अठारह कोढ़, आठ प्रकार के उदर रोग, भगन्दर, मूत्रकृच्छ्र, गृध्रसी, हलीमक, रोग, क्षय, महाव्याधि, पाँच प्रकार की दारुण खाँसी, अस्सी वातरोग, चालीस पित्त के रोग, बीस सूक्ष्मरोग, सन्निपात के रोग, बवासीर यह सब ऐसे दूर हो जाते हैं जैसे इन्द्र के वज्र से वृक्ष नष्ट हो जाते हैं ; तथा सुवर्ण के समान शरीर होकर सिंह के समान पराक्रम, घोड़े के समान कामवेग प्राप्त होता है, वह सौ स्त्रियों के साथ गमन कर सकता है तथा विहङ्ग के समान हृष्ट-पुष्ट होता है। यह चूर्ण मनुष्य को नृसिंह के समान कान्तिमान् करता है। यह नृसिंह चूर्ण मनुष्यों के सब रोग दूर करता है।

इति नृसिंह चूर्ण ।

त्रैलोक्य विजयापत्रं सबीजं घृतभर्जितम् ।
त्रिकटुस्त्रिफलाकुष्ठं भृङ्गीसैन्धवन्धान्यकम् ॥ २८ ॥
चव्यं तालीशपत्रं च कट्फलं नागकेशरम् ।
अजमोदायवानी च यष्टीमधुकमेव च ॥ २९ ॥
मेथी जीरकयुग्मं च गृहीत्वा समभागतः ।
यावन्त्येतानि चूर्णानितावदेवतदौषधम् ॥ ३० ॥
समेशिलातले पिष्ट्वा चूर्णयेरतिचिक्कणम ।
तावदेव सितादेया यावदायाति बन्धनम् ॥ ३१ ॥
घृतेन मधुनामिश्रं मोदको परिकल्पयेत् ।

घृतभर्जित तिलचूर्णं मोदको परिविन्यसेत् ।
त्रिसुगन्धि समायुक्तं कर्पूरेणाधिवासितम् ॥ ३२ ॥
स्थापयेद्घृत भाण्डे तु श्रीमन्मदन मोदकम् ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय वातश्लेष्म भयापहम् ॥ ३३ ॥
प्रवृद्धमग्निं कुरुते मन्दमग्निं प्रदीपयेत् ।
कृशानामतिरूक्षाणां स्नेहनं स्थौल्यकारणम् ॥ ३४ ॥
कासघ्नं सर्वशूलघ्नमामवात विनाशनम् ।
सर्वरोगहरं ह्येतत्संग्रहं ग्रहणी हरम् ॥ ३५ ॥
एतस्य सततभ्यासाद्वृद्धोऽपि तरुणायते ।
ब्रह्मणश्च मुखाच्छ्रुत्वा वासुदेवेजगत्पतौ ॥ ३६ ॥
एष कामस्यवृद्धयर्थं नारदेन प्रकाशितः ।
येन लक्षैर्वरस्त्रीणामरस्य यदुनन्दनः ॥ ३७ ॥

इति श्रीमन्मदनमोदकः ॥

अथवा त्रिलोक विजया (भंग) के पत्ते और बीज घृत में भूनकर उसमें त्रिकटु (सोंठ, मिर्च, पीपल), हरड, बहेडा, आमला, कूठ, भाँगरा, धनियाँ, वच, चव्य, तालीस की छाल, कट्फल, नागकेशर, अजमोद, अजवायन, मुलेठी, मेथी, काला जीरा, श्वेत जीरा यह सब समान भाग लेकर यह सम्पूर्ण औषधि समान शिला पर पीसकर महीन चूर्ण करे। मिश्री की इसमें इतनी चासनी करे जिससे वह बँध जाय फिर इसमें घी और शहद मिलाकर लड्डू बाँधे उनके ऊपर घी में भुने हुये तिलों का चूर्ण डाले तथा उन्हें पत्रज, तज, इलायची, कपूर से अधिवासित करे। तदनन्तर घृत के बर्त्तन में स्थापन करके रख छोड़े। यह मदनमोदक प्रातःकाल उठकर खाने से श्लेष्मा का भय दूर करता है, बढ़ी हुई अग्नि को सम और मन्दाग्नि को बढ़ाता है, कृश, अत्यन्त रूखे पुरुषों को स्थूल और स्नेहन करता है, कास, शूल, आमवात का नाशक है सम्पूर्ण रोग तथा संग्रहणी रोग का यह हरण करता है। निरन्तर इसके सेवन से वृद्ध भी तरुण होता है। ब्रह्मा के मुख से श्रवण करके इसे काम की वृद्धि के लिये नारदजी ने वासुदेव जगत्पति से कहा था जिसके कारण यदुनन्दन सैकड़ों स्त्रियों से रमण करते थे।

इति मदनमोदक ।

मृतसूताभ्रकं स्वर्णवाजिगन्धावचा रसैः ।
मुशलीकन्दलीकन्द द्रवैश्च मर्द्ययेद्दिनम् ॥ ३८ ॥
लाक्षा लघुपुटैः पच्चान्मर्द्ययेत्पूर्ववद्द्रवैः ।

पुटं देयं पुनर्मर्द्द्यमेवमष्टपुटैः पचेत् ॥ ३९ ॥
शाल्मलीजात निर्यासैश्चतुर्मासांस्तु भक्षयेत् ।
गोदुग्धं मर्कटीबीजैः पलार्द्धं पाचयेदनु ॥ ४० ॥
रसः कामकलाख्योऽयं रमते स्त्री सहस्रकैः ।
सर्वांगोद्वर्त्तनं कुर्यात्स्वरसैः शाल्मलीरसैः ॥ ४१ ॥
इतिकामकलारसः ॥

शुद्ध, पारा, शुद्ध सुवर्ण तथा असगन्ध को वच के रस में खरल कर इसमें मुशली और कदलीकन्द का चूर्ण डालकर एक दिन खरल करे। लाख का लघुपुट देकर इसको फिर खरल करता रहे और लाक्षा जल के आठ पुट देकर इसको पकावे। इसको सेमल से उत्पन्न हुए गोंद से चार महीने भक्षण करे। गाय के दूध को कौंच के आधे पल बीज डालकर पकावे। यह कामकला नामक रस है। इसके सेवन से मनुष्य सहस्र स्त्रियों से रमण कर सकता है। सर्वांग में सेमल के स्वरस को मलने से पुरुष का कामबल बढ जाता है।

इति कामकलारस।

शुद्धसूत समं गन्धं त्र्यहं कल्हारजैर्द्रवैः ।
मर्दितं वालुकायन्त्रेयामंसम्पुटगं पचेत् ॥ ४२ ॥
रक्तागस्त्यद्रवैर्भाव्यं दिनमेकमिवद्रुतम् ।
यथेष्टं भक्षयेच्चान्नं कामये कामिनी शतम् ॥ ४३ ॥

शुद्ध पारा, उसके बराबर शोधी गन्धक तीन दिन श्वेतकमल के साथ खरल करके वालुका यन्त्र में एक प्रहर सम्पुट कर आँच दे और फिर निकाल कर एक दिन लाल अगस्त्य के रस की भावना दे। इसका सेवन कर यथेष्ट अन्न भक्षण करने से पुरुष सौ स्त्रियों से रमण कर सकता है।

पलद्वयं द्वयंशुद्धं पारदं गन्धकं तथा ।
मृतहेम्नस्तु कर्षकं पलैकं च मृताभ्रकम् ॥ ४४ ॥
मृतताम्रं चतुर्निष्कं सर्वं पञ्चामृतैर्दिनम् ।
रुद्रैर्गजपुटैः पाच्यादिनैकान्ते समुद्धरेत् ॥ ४५ ॥
पिष्ट्वा पञ्चामृतैः कुर्याद्वटिकां बदराकृतिम् ।
अनङ्गसुन्दरीं खादेद्रमेद्रामा शतत्रयम् ॥ ४६ ॥

दो पल शुद्ध पारा, दो पल शुद्ध गन्धक, शुद्ध सोना एक कर्ष, शुद्ध अभ्रक एक पल और फूंका हुआ ताँबा चार निष्क (६४ माशे) इन सबको पञ्चामृत

से खरल करके ग्यारह दिन पीछे गजपुट में रखकर फूंक दे। एक दिन की आँच देकर फिर इसको फूंक दे। इसको निकाल कर पीसे और बेर के बराबर इसकी गोली बनावे। यह अनङ्गसुन्दरी नामक वटी सेवन करने से पुरुष तीन सौ स्त्रियों से रमण कर सकता है।

शाल्मलीमूलचूर्णन्तु भृङ्गराजस्यमूलकम्।
पलैकं सितया चान्नं भक्षयेत्कामयेच्छतम् ॥ ४७ ॥

इत्यनंगसुन्दरीवटिका।

सेमल की जड़ और भाँगरे की जड़ का चूर्ण कर इसमें एक पल मिश्री डालकर खाने से पुरुष सौ स्त्रियों से गमन कर सकता है।

इति अनङ्गसुन्दरी वटिका।

सूतपादं ताम्रचूर्णं खल्वेपिष्टं प्रकारयेत्।
निःक्षिप्य कदलीकन्दे पुनर्लेप्यं च गोमयैः ॥ ४८ ॥
शुष्कं गजपुटैः पच्यात्तथा कन्दे पुनःक्षिपेत्।
एवं सप्तपुटैः पच्यात्कन्दैः कन्दं पृथक्पृथक् ॥ ४९ ॥
दत्त्वा तत्र घृतं चूर्णं वस्त्रे बद्ध्वा तु पाचयेत्।
दोलायन्त्रे च संयुक्तं छागीदुग्धे पुनःपचेत् ॥ ५० ॥
गुडूच्याथ शतावर्या वानर्या गोक्षुरस्तथा।
गजपिप्पलिका लाजा कदल्या कोकिलाक्षकै ॥ ५१ ॥
सितया पाचयेदेवद्विगुणं लघु वह्निना।
उद्धृत्य चूर्णयेत्स्वच्छं भक्षेद् गुञ्जा चतुष्टयम् ॥ ५२ ॥
सितायुक्तं सदा सेव्यं महाकामेश्वरो रसः।
कामिनीनां सहस्रैकं क्षोभयेन्निमिषान्तरे ॥ ५३ ॥

पारा चौथाई भाग और ताँबा इनको लेकर चूर्णकर केले की जड़ में खरल करे, फिर इसको गोलाकार गोबर से लपेटकर सुखाकर गजपुट से फूंक दे; फिर निकाल कर केले की कन्द में भावना देकर फूंक दे। इस प्रकार सात बार पृथक् पृथक् भावना दे और घृत मिलाकर फिर वस्त्र की कपरोटी लगाकर सुखाकर फिर कपरोटी चढावे; फिर दोलायन्त्र में सिद्धकर बकरी के दूध से पाक करे। गुडूची, शतावरी, कौंच के बीज, गोखरू, गजपीपल, लाजा (खील), केलाकन्द, तालमखाना इन सबको बराबर लेकर बारीक चूर्ण कर ले। फिर इनसे दूनी मिश्री की चाशनी बनाकर लघु आँच से पकावे तथा उपरोक्त सब औषधि उसमें डाल दे और ऊपर के रस भी उसमें डाल दे।

इस चूर्ण को चार चौंटली प्रमाण भक्षण करे। मिश्री के साथ यह महाकामेश्वर रस सदा सेवन करने से पुरुष एक क्षण में सहस्र स्त्रियों को क्षुभित कर सकता है।

गोक्षुरं वानरंबीजं गुडूचीगजपिप्पली।
कोकिलाक्षस्यबीजानि फलं गुणशतावरी ॥ ५४ ॥
कर्कशाबीज मज्जा च सर्वतुल्यं विचूर्णयेत्।
चूर्णतुल्यासिता योज्या मधुनापिण्डितं लिहेत्।
पलार्द्धमनुपानं स्यात्किञ्चित्पेयं गवां पयः ॥ ५५ ॥

इति महाकामेश्वररसः।

गोखरू, कौंच के बीज, गुडूची, गजपीपल, तालमखाने के फल, शतावरी, कर्कशा के बीज और मींग, यह सब बराबर लेकर चूर्ण करे और चूर्ण के बराबर मिश्री डालकर शहद के साथ इसकी वटी बनाकर सेवन करे। इसके अनुपान की मात्रा आधा पल है। इस पर गाय का थोड़ा दूध पीना चाहिये।

इति महाकामेश्वररस।

शुद्धसूतसमं गन्धं रक्तोत्पलदल द्रवैः।
याममेकं पुनर्गन्धं पूर्वार्द्धं विनिःक्षिपेत् ॥ ५६ ॥
तद्द्रवैर्मर्द्दयेच्चाङ्गं पूर्वगन्धंच मर्द्दनम्।
पूर्वद्रावैर्दिनैकं तु काचकुप्यानिरुध्य च ॥ ५७ ॥
दिनैकं वालुकायन्त्रं पक्वमुद्धृत्य भक्षयेत्।
पञ्चगुञ्जासितासार्द्धं रसोऽयं मदनोदयः ॥ ५८ ॥

शोधा पारा, शोधी गन्धक, लाल कमल के दल के रस में एक प्रहर तक खरल करे। इस रसको सुखाकर बारम्बार खरल करे और जब पारा और गन्धक सब प्रकार से एकरूप हो जायँ तब इसको लेकर काँच की शीशी में भरकर एक दिन तक वालुकायन्त्र में चढ़ा दे। फिर उतार कर इसे प्रयोग करे। यह मदनोदय रस पाँच चौंटली प्रमाण मिश्री के सहित खाना उचित है।

कोकिलाक्षस्यबीजं च समूलीशर्करा समम्।
गवांक्षीरेण तत्पेयं पलार्द्धमनुपानकम् ॥ ५९ ॥
वानरीकोकिलाक्षस्यबीजं श्यामतिलं समम्।
मूलं गोक्षुरमासाभ्यां शुष्कचूर्णं प्रकल्पयेत् ॥ ६० ॥
चूर्णन्तुल्यं मृतं चाभ्रं सर्वतुल्यासिता भवेत्।
कर्षमेकं गवाक्षीरैः पेयं कामाङ्ग नायकम् ॥ ६१ ॥

इति मदनोदयरसः।

तालमखाने के बीज, मुसली और शर्करा यह समान भाग ले। आधे पल गाय के दूध के साथ इनका पान करने से पुष्टि होती है। यह मदनोदय रस है। कौंच के बीज, तालमखाने के बीज और काले तिल यह समान भाग लेकर गोखरू तथा उरद इनको पीसकर चूर्ण कर ले। इस चूर्ण में अनुमान से शोधा अभ्रक और इन सबके बराबर मिश्री डाले। एक कर्ष (सोलहमाशे) गाय के दूध से पान करने से पुरुष स्त्रियों को अतिप्रिय होता है।

तैलेनपक्वं चटकं खादेद्भोजनपूर्वतः।
भोजनान्ते पिबेत्क्षीरं रामाः कामयते शतम् ॥ ६२ ॥
इति कामांगनायकः।

चटकपक्षी के मांस को तेल में पकाकर भोजन से पहले खाने और भोजन के अन्त में दूध पीने से व्यक्ति सौ स्त्रियों से रमण कर सकता है। वह कामांगनायक है।

अश्वगन्धावल्लिमूलं शाल्मली च शतावरी।
विदारीमुशलीकन्दं कोकिलाक्षस्य बीजकम् ॥ ६३ ॥
वानरीबीजं तत्तुल्यं सुष्ठुचूर्णं तु कारयेत्।
चूर्णतुल्यं मृतं चाभ्रं सर्वतुल्यासिता भवेत् ॥ ६४ ॥
गवांक्षीरैः पिबेत्कर्षं रमयेत्कामिनी शतम्।

असगन्ध, चीते की जड़, सेमल, शतावरी, विदारीकन्द, मुसलीकन्द, तालमखाने और कौंच के बीज का चूर्ण और चूर्ण के अनुसार शुद्ध अभ्रक डाले। सबके बराबर मिश्री लेकर इन सबको एक कर्ष गाय के दूध के साथ लेने से सौ स्त्रियों से रमण कर सकता है।

अश्वकर्कटमांसन्तु भक्षयेच्च पिबेत्पयः ॥ ६५ ॥
योगः कामामृतः ख्यातो बलवीर्यायुवर्द्धकः।

अश्व और केकड़े का मांसभक्षण कर ऊपर से दूध पीना चाहिये। यह कामामृत नामक योग अत्यन्त बल-वीर्य का बढ़ाने वाला है।

धात्रीफलस्य चूर्णं तु भावयेत्तत्फलद्रवैः ॥ ६६ ॥
एकविंशतिवारन्तु शोष्यं पेष्यं पुनः पुनः।
चूर्णपादं मृतं लोहं मध्वाज्य शर्करान्वितम् ॥ ६७ ॥
पलैकं भक्षयेन्नित्यं सिताक्षीरं पिबेदनु।
कामयेत्स्त्रीशतं नित्यं धात्रीलोह प्रभावतः ॥ ६८ ॥
इति धात्रीलोहम्।

आँवले का चूर्ण कर उसमें उसी के फलों के रस की भावना देकर सुखावे।

ऐसे एक्कीस बार भावना देकर सुखावे। इस चूर्ण से चौथाई लोहभस्म डाले। इसमें शहद, घृत और मिश्री भी डाल दे। इसको प्रतिदिन एक पल खाने और मिश्री सहित ऊपर से दूध पीने से धात्रीलोह के प्रभाव से पुरुष सौ स्त्रियों की नित्य इच्छा कर सकता है।

इति धात्रीलोह।

वानरीबीजचूर्णं तु निस्तुषं माषचूर्णितम्।
नारिकेलोदकैर्भाव्यं यामान्तं पेषयेत्समम्॥ ६९॥
पिष्टस्य विंशद्विंशेनमृतमभ्रं नियोजयेत्।
तद्वत्तौर्वटिकाकार्यामध्वाज्याभ्यां तु भक्षयेत्॥ ७०॥
पीत्वाक्षीरं सितायुक्तं रम्या रामा रमेच्छतम्।
सताम्बूलं शतामूलमनुपानं निरन्तरम्॥ ७१॥

कौंच के बीजों का चूर्ण और छिलके रहित उडदों का चूर्ण लेकर नारियल के रस की भावना देकर एक प्रहर के उपरान्त उसको पीस ले। अच्छे प्रकार उसको पीसकर उसमें शुद्ध अभ्रक डाले। इस प्रकार उनकी वटिका करके शहद और घृत के साथ भक्षण करे। इसके ऊपर मिश्री डालकर दूध पीने से अनेक स्त्रियों के साथ रमण कर सकता है। इसके ऊपर निरन्तर शतामूल युक्त ताम्बूल भक्षण करना चाहिये।

ऊर्णनाभिभवं बीजं मधुनासह पेषयेत्।
तेन नाभिप्रलेपेन बन्धः सद्योविमुच्यति॥ ७२॥

मकड़ी के बीज को शहद के साथ नाभि पर लेप करने से स्त्री से बद्ध हुआ पुरुष शीघ्र मुक्त होता है अर्थात् मैथुन में समर्थ होता है।

अन्तरिक्षेन संग्राह्य यत्नाद्वागुटिकामलम्।
तेन लिङ्गप्रलेपेन रमेद्रामा शतं नरः॥ ७३॥

अन्तरिक्ष से गुटिका मल लेकर उसको ध्वजा पर लेप करने से मनुष्य सौ स्त्रियों से रमण कर सकता है।

सम्यङ्मारितमभ्रकं कटफलं कुष्ठाश्वगंधामृता
मेथीमोचरसं विदारमुशलीगोक्षूरमिक्षूरकम्।
रम्भाकन्दशतावरीह्यजमुदामाषास्तिलाधान्यकं।
यष्टीनागबलाकचूरमदनं जातीफलं सैन्धवम्॥ ७४॥
मार्गीकर्कट शृङ्गभृङ्गकटुकं जीरद्वयं चित्रकं
चातुर्जातपुनर्नवा गजकणाब्राह्मीनिशावासकम्।

बीजं मर्कटिशाल्मलं फलत्रिकं चूर्णं समं कल्पये-
च्चूर्णं संविजयासिता द्विगुणिता मध्वाज्ययोः पिंडितम् ॥७५॥
कर्षार्द्धं वटिका विलेह्यमथवा सेव्यं मुदा सर्वदा ।
पेयं क्षीरसितानुवीर्यंकरणेस्तम्भेप्ययं कामिनीम्
वामावश्यकरं परं च सुखदं प्रौढाङ्गनाद्रावकं ।
क्षीणे पुष्टिकरं गदक्षयकरं हन्त्याशु सर्वामयम् ॥ ७६ ॥
कासश्वासमहातिसारशमनं मन्दाग्निसंदीपनं ।
अर्शः संग्रहणी प्रमेह निचयं श्लेष्मातिरक्तप्रणुत्
नित्यानन्दकरं विशेषकविता वाचां विलासोत्तमं
धत्ते सर्वगुणं हठात्स्ववदशाध्यान प्रधानं पुनः ॥ ७७ ॥
अभ्यासेन निहन्ति मृत्युपलितं कामेश्वरोवत्सरात्
सर्वेषां हितकारकोनिगदितः श्रीनित्यनाथेन स. ।
वृद्धानां मदनोदयोदयकरः प्रौढाङ्गनासङ्गमे
सिद्धोऽयं समदृष्ट प्रत्ययकरोराज सदासेव्यताम् ॥ ७८ ॥

इति कामेश्वररसः ।

अच्छे प्रकार शोधा अभ्रक, शोधा हुआ कट्फल, कूठ, अजमोद, गिलोय, मेथी, मोचरस, विदारीकन्द, मुशली, गोखरू, कोकिलाक्ष के बीज, कन्दली-कन्द, शतावरी अतिबला, उड़द, तिल, धनियाँ, असगन्ध, खिरैंटी, मुलहठी, नागबला, कपूर, मैनफल, जायफल, सेंधा नमक, कस्तूरी, काकडासिंगी, भाँगरा, त्रिकटु, दोनों जीरे, तज, पत्रज, इलायची, दालचीनी, नागकेशर, पुनर्नवा, गजपीपल, ब्राह्मी, हलदी, अडूसा, कौंच के बीज, सेमल, त्रिफला, इन सबको बराबर लेकर चूर्ण करे, फिर उस चूर्ण के समान भंग, दूनी मिश्री ले और इसमें घृत तथा मधु डालकर इसकी आधे-आधे कर्ष की वटिका बना ले। इस वटिका को चाटने अथवा वैसे ही सेवन करने और इसके ऊपर मिश्री डालकर दूध पीने से यह स्त्री को स्तम्भित कर सकता है। स्त्री को वश में करने वाला सुखदायक, प्रौढ़ स्त्रियों को प्रेरित करने वाला, क्षीणवीर्य को पुष्ट करने वाला तथा रोगक्षय कर शीघ्र यह सब रोगों का नाशक है। कास, श्वास, महातिसार का शमन करने वाला, मन्दाग्नि को प्रदीप्त करने वाला, बवासीर, संग्रहणी, सब प्रकार के प्रमेह, कफ के रोग तथा रक्तरोग को दूर करने वाला और नित्य आनन्द करने वाला विशेषकर विशेष बुद्धि आदि के गुण देता है। सम्पूर्ण गुण इसके प्रभाव से प्राप्त हो जाते हैं। इसके अभ्यास से मृत्यु पर विजय प्राप्त हो जाती है। बालों का अकाल में पकना

दूर होता है। यह सबका हितकारक कामेश्वर रस नित्यनाथ ने कहा है। वृद्धों में कामउदय करने वाला, प्रौढ़ांगना के संग में सुख देने वाला, यह सिद्धराजों को सदा विश्वास कर सेवन करना चाहिये।

इति कामेश्वर रस।

यत्किंचिन्मधुरस्निग्धं जीवनं बृंहणं गुरु।
हर्षणं मनसश्चैव तत्सर्वं वृष्यमुच्यते॥ ७९॥

जो कुछ वस्तु मधुर और चिकनी है वह जीवनकारक और भारी है। मनको हर्षण करने वाली जो वस्तुमात्र है वह सब वृष्य कहलाती है।

नरोवीर्यकरान्योगान्सम्यक् शुद्धो निरामयः।
आसप्तते प्रकुर्वीत वर्षादूर्ध्वं च षोडशात्॥ ८०॥

वीर्यकारी पदार्थों को शुद्ध रोगरहित होकर सेवन करना चाहिये। सोलह वर्ष से ऊपर और ७० वर्ष तक इन योगों का सेवन करे।

न पूर्वं षोडशाद्वर्षात्सप्तत्याः परतो न च
आयुः कामोनरः स्त्रीभिः संयोगं कर्त्तुमर्हति।
कल्पः सोदग्धवयसो वाजीकरण सेवितः॥ ८१॥
आयुष्मन्तो मन्दजरावपुर्वीर्यबलान्विताः
स्थिरोपचितमान्साश्च भवन्ति स्त्रीषु संयुताः।
त्रिभिस्त्रिभिरहोभिश्च सेवेत प्रमदां नरः॥ ८२॥
सर्वर्त्तुषु च ग्रीष्मेषु पक्षात् पक्षाद्व्रजेद्बुधः।
योगं कृत्वासुसेव्यं सुशृतमपि पयः शीतलं चाम्बुपीत्वा
गच्छेन्नारीं सुरूपां स्मरशरवशगां कामुकः कामलीलः।
रत्याहृष्टप्रहृष्टो व्यपगतसुरतः संघयेन्नित्य नित्यं
कान्तासङ्गाद्युवापिह्य सकृदपि नरो धातुवैषम्यमेति॥ ८३॥
ग्लानिकम्पोरुदौर्बल्यं धान्त्विन्द्रियबलक्षयः।
क्षयवृद्धुपदंशाद्यारोगाश्चातीवदुर्जयाः॥ ८४॥
अकालमरणं चैव भजत स्त्रियमन्यथा।

सोलह से न्यून और सत्तर वर्ष से अधिक व्यक्ति योगों का सेवन न करे। आयु की कामना करने वाला मनुष्य स्त्रियों से इस प्रकार संयोग करे। वाजीकरण कल्प से शरीर पुष्ट हो जाता है और इसके होने से उत्साह और इष्टसिद्ध होता है। आयु वाले मन्दजरा वीर्यबल से युक्त हो जाते हैं और स्थिर आरोग्य बल से युक्त हो स्त्रीसंयुक्त होते हैं। सम्पूर्ण ऋतुओं में तीन दिन में स्त्री को

सेवन करे अर्थात् तीसरे दिन स्त्री का संगम करना उचित है। यदि अत्यधिक बल की आवश्यकता हो तो ग्रीष्म में न्यून प्रसङ्ग करे अर्थात् एक पक्ष में गमन करे। जो बलवर्द्धक औषधियों का सेवन नही करता वह दुर्बल इस योग का सेवन करे। शीतल जलपान करने के बाद औटाया दूध पीकर कामीजन रूपवती स्त्री से गमन करें। यत्नपूर्वक रात के समय प्रेम और धैर्य से सेवन करे। ग्रीष्मकाल की यह विधि है। अति प्रसङ्ग नहीं करना चाहिये। जो इसमें अन्यथा स्त्रियों को सेवन करते हैं उनके ग्लानि, कम्प, दुर्बलता, धातु और इन्द्रियों के बल का क्षय होता है तथा क्षय, अण्डवृद्धि, उपदंशादि दुर्जय रोग भी होते हैं। इस कारण अकाल में स्त्री के भजने से अकाल में रमण भी होता है।

शोषकासज्वराशासि श्वासकार्श्यांति पाण्डुता ॥ ८५ ॥
अतिव्यवायाज्जायन्ते रोगाश्च क्षयकादयः।
असेवनान्मोहमदो ग्रन्थिरग्नेश्च मार्दवम् ॥ ८६ ॥

शोष रोग, श्वास, कास, ज्वर आदि पाण्डु रोग तथा अति रति करने से क्षयादि रोग हो जाते हैं। विना सेवन के मोह, मद, ग्रन्थी आदि तथा अग्नि की मन्दता होती है।

त्यजेच्चिन्ताद्य शुचितां लोकाध्यक्षं च मैथुनम्।
जरायाश्चिन्तयाशुक्रं व्याधिभिः कर्मकर्षणात् ॥ ८७ ॥
क्षयं गच्छत्यनशनात्स्त्रीणां चैवाति सेवनात्।
क्षयाद्भयादविश्वासाच्छोकस्त्रीदोषदर्शनात् ॥ ८८ ॥

मनुष्य चिन्ता तथा मैथुन का ध्यान त्याग दे। जरा की चिन्ता से वीर्य क्षीण होता है और व्याधियों से, अतिकर्म से, भोजन न करने से और स्त्री के अति सेवन करने से क्षय, भय, अविश्वास और शोक, तथा स्त्री दोष देखने से क्षीणता होती है।

नारीणामवसन्नत्वादभिघातादसेवनात्।
रूपयौवनमौदार्यं लक्षणैर्याविभूषिता ॥
यावश्या शिक्षिताया च सास्त्री वृष्यतमा मता ॥ ८९ ॥

नारी को समान सुखदायक मानकर अभिघात से और असेवन से क्षय होता है। जो यौवन सम्पन्न और लक्षणों से विभूषित है, जो वशीभूत स्त्री शिक्षित है, वह अपने वश में होने से वाजीकरण के योग्य है।

स्त्रीषुक्षयं मृगयतां वृद्धानां चरितश्रिताम्।
क्षीणजामल्पशुक्राणां स्त्रीषुक्षीणाश्च ये नराः ॥ ९० ॥

विलासिनामर्थवतां यौवनेबलशालिनाम् ।
बहुपत्नीवतां नृणां योगावाजिकरा हिताः ॥ ९१ ॥

स्त्रीजनों में जिसका अल्पवीर्य हो गया है, क्षीण, अल्पवीर्य तथा जो मनुष्य स्त्री में क्षीण हैं, विलासी अर्थ वाले, यौवन वाले पुरुष और बहुत स्त्रीजनों के पतिवाले पुरुषों के लिये वाजीकरण योग हितकारक हैं ।

इति श्रीनित्यनाथविरचितेकामरत्ने भाषाटीकायां
वीर्यवर्द्धन नाम षष्ठोपदेशः ॥ ६ ॥

अथ गाढीकरणम्, तत्र भक्ष्यनिषेधः

अत्यन्तमूलकटुतिक्तकषायमम्ल क्षारं च शाकखदिरं लवणाधिकं च ।
कामीसदैवरतिमान्वनिताभिलाषी नोभक्षयेदिति समस्तजन प्रसिद्धः ।१।

वीर्यगाढ़ीकरण और उसमें भक्ष्यनिषेध : अत्यन्त मूल, कड़वी, कसैली, अम्ल, खारी, शाक, खैर, अत्यन्त नमकीन वस्तु इन्हें स्त्री से रति की अभिलाषा करने वाले पुरुष को सेवन नहीं करना चाहिये ।

प्रौढांगनाया नवसूतिकायाः श्लथं वराङ्गं न सुखाय यूनाम् ।
तस्मान्नरैर्भेषजतोविधेया गाढीक्रिया मन्मथमन्दिरस्य ॥ २ ॥

प्रौढ तथा नवीन प्रसूता स्त्रियों का वरांग शिथिल हो जाने के कारण युवा पुरुषों को सुखदायक नहीं होता इस कारण मदनमन्दिर का संकोच करना चाहिये ।

निशाद्वयं पङ्कजकेशरञ्च निष्पीडयदेवद्रुम तुल्यभागम् ।
अनेनलिप्तं मदनातपत्रं प्रयाति संकोचमलं युवत्याः ॥ ३ ॥

दोनों हलदी, कमल, केशर, देवदारु इनको तुल्य भाग लेकर काममन्दिर में लेप करने से उसमें संकोच होकर निर्मलता होती है ।

सधातकीपुष्पफलत्रिकेण जम्बूत्वचासाररसं घृतेन ।
लिप्त्वा वराङ्गंम धुकेनतुल्यं वृद्धापिकन्येव भवेत्पुरंध्री ॥ ४ ॥

धाय के फूल, हरड, बहेडा, आमला, जामुन की त्वचा, लोहसार, घृत और मुलहठी इनका लेप करने से वृद्धा स्त्री भी कन्या के समान होती है ।

पिकाक्षबीजेन मनोजगेहं विलिप्य योषानियमश्चरन्ति ।
हठेनगाढं लभते तदंगंदृष्टं नरैरेष हठेन योगः ॥ ५ ॥

शिलारस और रुद्राक्ष के बीजों से काममन्दिर पर लेप करने और साक्षात् नियम करने से अवश्य मदनमन्दिर संकुचित हो जाता है। यह एक श्रेष्ठ योग है।

मृणालपद्मं पयसासुपिष्यद्दासमांगीगुटिकाविधेया।
यस्यावरांगे निहिता क्षणेन कन्यात्वमेत्याह समूलदेवः॥ ६॥

कमल को जड़ सहित जल से पीसकर और उसकी गुटिका बनाकर जिसके काममन्दिर में क्षणमात्र को रख दिया जाय वह कन्यावत् हो जाती है ऐसा मूलदेव ने कहा है।

इक्ष्वाकुबीजं स्नुहिसारवेण पिष्ट्वा वराङ्गं परिलिप्यतेन।
नवप्रसूतानि हठेन नारीकन्याभवेत्संयमतो न चित्रम्॥ ७॥

कडवी तुम्बी के बीज और सेहुँड को सारिवा के साथ पीसकर योनिपर लेप करने से स्त्री का काम भवन कन्या के समान हो जाता है।

इन्दीवरव्याघ्रिवचोषणानां तुरङ्गमारासनयामिनीनाम्।
लेपेननार्यास्मरसंस्थ रंध्रंसङ्कोचत्याशु हठेनयोगः॥ ८॥

नीलकमल, कटेरी, वच, काली मिरच, कनेर, असन और हलदी यह लेप करने से तत्काल स्त्री का काममन्दिर संकुचित हो जाता है।

याशकगोपं स्वयमेव पिष्ट्वा विलिंपति स्त्री च वरांगदेशम्।
आहत्य तस्याः कठिनं च गाढं भवेन्न चात्रास्ति विचारचर्या॥९॥

वीरबहूटी को पीसकर जो स्त्री रतिमन्दिर पर लेप करती है उसक मदनमन्दिर मनोहर और संकुचित हो जाता है, इसमें आश्चर्य नहीं है।

मदनकथनसारैः क्षौद्रतुल्यैर्वराङ्गं शिथिलितमपियस्याः पूरितं भूय एव।
भवतिकठिनमुच्चैः कर्कशं कामिनीनामितिनिगदति योगं रन्तिदेवोनरेन्द्रः
१० अश्वगन्धैर्लिपेद्योनिं गाढीकरणमुत्तमम्।

इति गाढीकरणम्।

मैनफल और कथनसार को बराबर शहद डालकर काममन्दिर में लेप करने से वह स्थान कर्कश और कठोर हो जाता है। यह योग नरेन्द्र रन्तिदेव ने कहा है। या असगन्ध का योनिपर लेप करने से उसका दृढ़ीकरण होता है।

इति गाढीकरण।

अथ स्त्रीद्रावणम्

यद्यप्यष्टगुणाधिको निगदितः कामोऽङ्गनानां सदा
नोयातिद्रवतां तथापि झटिति स्त्रीकामिनां सङ्गमे।
तस्माद्भेषज संप्रयोगविधिना संक्षेपतो द्रावणं
किञ्चित्पल्लवयामिनीरजहशां प्रीत्यापरं कामिनाम्॥ ११॥

स्त्रीद्रावण : यद्यपि स्त्रियों में कामदेव को आठ गुना कहा गया है, तथापि प्रसङ्ग में वे द्रवीभूत नहीं होतीं। इस कारण संक्षेप से द्रवीभूत होने की औषधि कहते हैं, जिसके होने से कामिनियों को परमप्रीति प्राप्त होती है।

सिन्दूरचिञ्चाफलमाक्षिकानि तुल्यानि यस्यामदनातपत्रे।
प्रलिप्यतासां पुरुषप्रसङ्गात्प्रागेव वीर्यच्युतिमातनोति ॥ १२ ॥

सिन्दूर, इमली का फल और शहद यह बराबर लेकर कामध्वज पर लेप कर स्त्री से रति करने से शीघ्र ही स्त्री द्रवीभूत हो जाती है।

व्योषंरजः क्षौद्रसमन्वितं वाक्षिप्तं यदि स्यात्स्मरयन्त्रगेहे।
द्रुताभवेत्सा सहसैव नारीहृष्टस्सदायं किलयोगराजः ॥ १३ ॥

त्रिकुटे का चूर्ण शहद के साथ रतिस्थान में डालने से पुरुष के प्रसङ्ग में स्त्री बहुत शीघ्र द्रवीभूत हो जाती है। यह योगराज देखा जा चुका है।

सुपक्वचिञ्चाफलघोषमूलीगुडं तथामाक्षिक तुल्य भागम्।
अमीभिरालिप्यपुनः सुलिङ्गं बीजं करोत्याशु नितंबिनीनां।१४।

पक्के इमली के फल, मूली, गुड़ और शहद यह सब वस्तु कामध्वज पर लेप कर रति करने से स्त्री शीघ्र द्रवीभूत हो जाती है।

सटीकणांक्षौद्रमहेशबीजैः कर्पूरतुल्यैरुपलिप्यलिंगम् ॥
शतंनरोयः सविलासिनीना रेतः प्रपातं कुरुते हठेन ॥ १५ ॥

कचूर, पीपल, शहद, पारा और कपूर यह कामध्वज पर लेपन कर पुरुष द्वार रति करने पर स्त्री अवश्य द्रवीभूत हो जाती है।

पारावत पुरीषं च मधुनासैंधवैर्युतम् ॥
लिंगस्य लेपनात्तेनस्त्रीणां द्रावणमुत्तमम् ॥ १६ ॥

कबूतर का बीट, शहद, सेंधा नमक यह कामध्वज पर लेप कर रति करने से स्त्री द्रवीभूत हो जाती है।

गोक्षुवार्ताक्यपामार्गरसेन लिङ्गलेपनात्।
तत्क्षणाद्द्रवते नारी पद्मपत्रेयथापय. ॥ १७ ॥

गोखरू, बैंगन और अपामार्ग के रस का कामध्वज पर लेप करने से उसी क्षण स्त्री ऐसे द्रवीभूत हो जाती है जैसे कमल पत्रपर से जल।

पिप्पलीचन्दनं चैव बृहतीपक्वतिन्तिडी।
एतैर्लिङ्ग प्रलेपेन द्रवेन्नारी न संशयः ॥ १८ ॥

पीपली, लालचन्दन, कटेरी और पक्की इमली इनका कामध्वज पर लेप करने से स्त्री द्रवीभूत हो जाती है इसमें सन्देह नहीं।

अगस्तिपत्रद्रवसंयुतेन मध्वाज्य सम्मिश्रितटङ्कणेन ।
लिप्त्वाध्वजं योरमतेङ्गनानां सशुक्रमाकर्षति शीघ्रमेव ॥१९॥

अगस्त के पत्तों के रस के सहित उसमें मधु, घृत और सुहागा मिलाकर जो स्त्रियों से रमण करते हैं उनसे बहुत शीघ्र स्त्री द्रवीभूत होती हैं ।

सलोध्र धत्तूरकपिप्पलीनां क्षुद्रोषणक्षौद्रविमिश्रितानाम् ।
लेपेनलिङ्गस्य करोतिरेतश्च्युति विपक्षप्रमदाजनस्य ॥ २० ॥

लोध, धतूरा, पीपली, कटेरी और पीपलामूल इनमें शहद मिलाकर लेप कर जो रति करता है उससे स्त्री बहुत शीघ्र द्रवीभूत हो जाती है ।

तुरगसलिलमध्येभावितं क्षेत्रमाषं मरिचमधुकतुल्यां पिप्पलीं पेषयित्वा ।
परिरमतिविलिप्यस्वीयलिङ्गं नरोयःप्रभवतिवनितानां कामकल्लोलमानः॥

असगन्ध के जल के मध्य में क्षेत्रमाष (उड़द), मिर्च, मुलेठी और उसी के समान पीपल को पीसकर कामपताका पर लेप कर स्त्री से विहार करने से स्त्री बहुत शीघ्र द्रवीभूत होती है ।

बिल्वपुष्प सुकर्पूरं मुण्डीपुष्पं च पेषितम् ।
लिङ्गलेपेनरामाणां द्रावोभवति संगमे ॥ २२ ॥

बेल का फूल और कपूर इसे मुण्डी के पुष्प के साथ पीसकर कामध्वज पर लेप करने से स्त्री शीघ्र द्रवीभूत होती है ।

बृहती फलमूलानि पिप्पल्योमरिचानि च ।
मधुरोचनयासार्द्धं लिङ्गलेपे द्रवन्ति ताः ॥ २३ ॥

कटेरी के फल और जड़, पीपल, काली मिर्च, शहद और गोरोचन यह मिलाकर कामध्वज पर लेप कर रमण करने से स्त्री द्रवीभूत होती है ।

क्षौद्रगन्धकलेपेन शिलायुक्तेन तत्फलम् ।

तथा शहद, गन्धक और मैनशिल के लेप से भी यही कार्य सिद्ध होता है ।

उपहारपशोरक्तं गृह्णीयादन्तरिक्षतः ॥ २४ ॥
तच्छुष्कं चूर्णितं स्थाप्यं पुष्पेरक्ताश्वमारजे ।
तत्पुष्पं धारयेद्वस्त्रेतर्ज्जन्यंगुष्ठयोगतः ॥ २५ ॥
आवर्त्य सम्मुखे स्त्रीणां दृष्टमात्रे द्रवतिताः ।

बलि के पशु का रक्त अन्तरिक्ष से ग्रहण करे । उसको सुखाकर चूर्णकर लाल कनेर के फूल में रखकर तर्जनी (अँगूली के निकट की अँगुली) और अँगूठे से उसको धारण करे । स्त्री के सन्मुख होते ही वह अवश्य द्रवीभूत हो जायगी ।

जम्बीरफलमध्ये तु मूलं वृश्चिककंटकम् ॥ २६ ॥

क्षिप्त्वाबद्ध्वा स्त्रियैदद्याद्घ्राणमात्रेद्रवन्तिताः ।

जम्बीरी नीबू के बीच में श्वेत पुनर्नवा की जड़ रखकर बाँधकर स्त्री को दे तो सूंघने मात्र से वह द्रवीभूत होती है ।

आहरेद्वामजङ्घां तु टिट्टिभस्य तु दक्षिणैः ॥ २७ ॥
तन्मध्येप्रक्षिपेद्भूर्ज्जपत्रमोंकारलेपितम् ।
रक्ताश्वमारपुष्पेण मुखं तस्य निरोधयेत् ॥ २८ ॥
कर्णोपरिस्थितं तेन दृष्ट्वा स्त्रीद्रवति ध्रुवम् ।
जलेन लाङ्गलीमूलं पिष्ट्वा हस्ते प्रलेपयेत् ॥ २९ ॥
हस्तेन स्त्रीकरस्पर्शेद्रवत्यग्नौ घृतं यथा ॥ ३० ॥

टिट्टिभी की बाईं जंघा लाकर उसको शुद्ध करके फिर उसके बीच में ॐकार लिखकर भोजपत्र डाल चारों ओर लपेट कर रक्खे और लाल कनेर के फूल से उसका मुख बन्द कर कानपर रक्खे । देखते ही स्त्री द्रवीभूत हो जाती है । कलिहारी की जड़ को जल से पीसकर हाथ में लेप करने से हाथ से छूते ही इस प्रकार स्त्री द्रवीभूत हो जाती है जैसे अग्नि से घृत ।

मरिचकनकबीजैः पिप्पलीलोध्रयुक्तैर्विमलमधुविमिश्रैर्मानवोलिप्तलिङ्गः ।
स्मरतिरतिविलासेकष्टसाध्यां चनारीं समुचितरतिरागां
संविदध्यादवश्यम् ॥ ३१ ॥

कालि मिर्च, धतूरे के बीज, पीपल और लोध यह सब पीसकर शहद में मिलाकर कामध्वज पर लेप करने से रतियुद्ध में कठिन स्त्री भी अवश्य पराजित हो जाती है ।

सर्वेषां द्रवयोगानां मन्त्रराजं शिवोदितम् ।
जपेदष्टोत्तरशतं तत्रयोगस्य सिद्धये ॥ ३२ ॥

द्रवीभूत करने के इन सब योगों का एक मन्त्र शिवजी ने कहा है जिससे ये योग सिद्ध होते हैं । इन योगों की सिद्धि के निमित्त एक सौ आठ मन्त्र जपना चाहिये । मन्त्र इस प्रकार है:

ॐनमो भगवते रुद्राय उड्डामरेश्वराय द्रावय द्रावय
स्त्रीणां मदं पातय पातय स्वाहा । ठः ठः ।

इति द्रावणम् ।

ॐ नमो भगवते रुद्राय उड्डामरेश्वराय द्रावय द्रावय स्त्रीणां मदं पातय पातय स्वाहा ठः ठः । (कहीं पातय की जगह द्रावय पाठ है ।) ।

इतिद्रावण ।

अथ कामध्वजस्थूलीकरणम् (दृढीकरणम्)

सकुष्ठमातङ्गबलाबलानां वचाश्वगन्धागजपिप्पलीनाम् ।
तुरङ्गशत्रोर्नवनीतयोगाल्लेपेन लिङ्गं मुसलत्वमेति ॥ ३३ ॥
दिनेदिनेयदाह्येवं सुधीः कुर्यात्प्रयत्नतः ।
तदास्थूलं भवेल्लिङ्गं निश्चितं नात्रसंशयः ॥ ३४ ॥

कामध्वज स्थूलीकरण : कूठ, पीपल, दोनों खिरैंटी, वच, असगन्ध, गजपीपल और कनेर इनका मक्खन के साथ लेप करने से ध्वजा मूसल के समान कठोर होती है । जो बुद्धिमान् प्रति दिन यत्नपूर्वक यह प्रयोग करता है उसकी ध्वजा स्थूल हो जाती है इसमें सन्देह नहीं ।

सलोध्रकाश्मीरतुरङ्गगन्धा मातङ्गगन्धापरिपाचितेन ।
तैलेनवृद्धिं खलु यातिलिङ्गं वरांगनालोकमनोहरं तत् ॥३५॥

लोध, केशर, असगन्ध, पीपल और शालपर्णी को तेल में पकाकर लेप करने से ध्वजा की वृद्धि होती है, जो स्त्रीजनों के लिये मनोहर है ।

भल्लातकास्थि जलशूकमथाजपत्रमंतर्विदाह्यमतिमान्सहसैन्धवेन ।
एतद्विरूढबृहतीफलतोयपिष्टमालेपनं महिषवद्विमलीकृतेऽङ्गे ।
स्थूलं महत्तरतुरङ्गमतुल्यमाशु शेफः करोत्यभिमतं न हि संशयोस्ति३६

भिलावों की मींगी, शेवाल और कमलपत्र इन तीनों को जलाकर सेंधानमक मिलाकर और बड़ी कटेरी के साथ जल से पीसकर आलेपन करने से महिष के सदृश और तुरङ्ग के समान ध्वजा हो जाती है और दृढ़ होती है इसमें सन्देह नहीं ।

सूतकं मरिचं कुष्ठं नागरं कंटकारिका ।
अश्वगन्धातिलं क्षौद्रं सैन्धवं श्वेतसर्षपाः ॥ ३७ ॥
अपामार्गोयवामाषाः पिप्पलीपेषयेज्जलैः ।
लेपोयं कुरुते वृद्धिं लिङ्गस्य दृढतां ध्रुवम् ॥ ३८ ॥

पारा, काली मिर्च, कूठ, सोंठ, कटेरी, असगन्ध, तिल, शहद, सेंधानमक, श्वेत सरसों, चिरचिटा, जौ, उड़द और पीपल इनको जल के साथ पीसकर लेप करने से ध्वजा की वृद्धि और दृढता होती है ।

मासमात्रं सदालिप्त्वा मर्दयेच्च दिवानिशम् ।
वराहवसयालिङ्गं मधुनासह लेपयेत् ।
स्थूलं दृढं च दीर्घं च मासाल्लिङ्गं प्रजायते ॥ ३९ ॥

एक महीने तक उक्त योग का लेप और मालिश करने से तथा सूकर की चरबी को शहद से एक महीने लेपन करने से ध्वजा स्थूल और दृढ़ हो जाती है ।

अश्वगन्धावचाकुष्ठं बृहती च शतावरी ।
तिलतैलेन सम्पक्वं तल्लेपः स्थूललिङ्गकृत् ॥ ४० ॥

असगन्ध, वच, कूठ, कटेरी और शतावरी यह तिल के तेल में पकाकर लेप करने से लिंग स्थूल होता है ।

अश्वगन्धावरीकुष्ठं मांसीसिंहीफलान्वितम् ।
चतुर्गुणेन दुग्धेन तिलतैलं विपाचयेत् ॥ ४१ ॥
स्तनलिङ्गकर्णपाणि वर्द्धनं भक्षणादितः ।

असगन्ध, शतावरी, कूठ, जटामांसी, कटेरी के फल, चौगुने दूध और तिल के तेल से पकाकर लेप करने से ध्वजा में दृढता होती है और यही स्तन, ध्वज, कान, पाणि आदि की भी वृद्धि करने वाला है ।

टङ्कणं च महाराष्ट्री जम्बूसूकरतैलकम् ॥ ४२ ॥
मधुनासहलेपेनलिङ्गं स्यान्मुसलोपमम् ।

सुहागा, जल पीपल, जामुन और सूकर का तेल इन्हें शहद के साथ लेपन करने से ध्वजा मूसल के समान हो जाती है ।

महिषीनवनीतं च मुशलीचूर्णं मिश्रितम् ॥ ४३ ॥
धान्यराशिस्थितं भाण्डेसप्ताहाच्च समुद्धरेत् ।
तेनप्रलेपयेल्लिङ्गं मासैकाद्वर्द्धते ध्रुवम् ॥ ४४ ॥

भैंस के मक्खन में मुशली का चूर्ण मिलाकर बर्तन में डालकर धान्य में रख दे । फिर सात दिन में निकाल कर उसको लिंगपर लेप करने से एक महीने में अवश्य ध्वजा की वृद्धि होती है ।

मुशलीशीतला भक्ष्यालिङ्गवृद्धिकरी मता ।

मुशली और आरामशीतला खाने से लिंग की वृद्धि होती है ।

मार[1]णोत्थं कृमिं चैव कण्टकारीफलं जलैः ॥ ४५ ॥
पिष्ट्वा लिङ्गं प्रलेपेनस्थूलं भवति निश्चितम् ।
तद्वच्चमुशलीसाज्यालेपाल्लिङ्गस्य दार्ढ्यकृत् ॥ ४६ ॥

धतूरा, लाख और कृमि कटेहरी के फल को जल से पीसकर लेप करने से कामध्वजा अवश्य स्थूल हो जाती है । इसी प्रकार मुशली और घृत का लेप भी ध्वजा को दृढ़ करता है ।

पिप्पलीलवणक्षीरसितालेपोऽपि दीर्घकृत् ।
मांसीवाक्षफलं कुष्ठमश्वगन्धा शतावरी ॥ ४७ ॥

---

१ वमनोत्थं वा पाठः ।

तैलेपक्त्वा प्रलेपेन लिङ्गस्थौल्यकरं ध्रुवम् ।

पीपल, सेंधालवण, दूध और मिश्री का लेप करने से ध्वजा दृढ होती है। अथवा जटामांसी, बहेडा, कूठ, असगन्ध और शतावरी को तेल में पकाकर लेप करने से ध्वजा स्थूल हो जाती है इसमें सन्देह नहीं।

रोहितामत्स्यपित्तन्तु जलौकालाङ्गलीसदा ॥ ४८ ॥
अनेनमर्द्दयेलिङ्गं वर्द्धते मुसलोपमम् ।

रोहू मछली का पित्ता, जोंक और कलिहारी का ध्वजा की जड़ में मर्दन करने से ध्वजा मूसल के समान वृद्धि को प्राप्त होती है।

सूतकोह्यश्वगन्धा च रजनीगजपिप्पली ॥ ४९ ॥
सितायुक्तं जलैः पिष्ट्वा मासैकं लेपयेत्तदा ।
अद्भुतं वर्द्धयेलिङ्गंयोगिकर्णस्तनानि च ॥ ५० ॥

पारा, असगन्ध, हलदी, गजपीपल और मिश्री यह सब वस्तु जल के साथ पीसकर एक महीने पर्यन्त लेप करने से ध्वजा अद्भुत प्रकार से बढ़ती है। इससे योगी के कान और स्तन भी बढ़ते हैं।

योमर्कटीमूलमजाजलेनव्यालुप्तकेशः शयनेनिशायाम् ।
पिष्ट्वाध्वजं लिम्पति तस्य कामं भवेदयोदण्डमिवक्षणेन ॥५१॥

जो कौंच की जड़ को अजा औषधि के साथ पीसकर शयन के समय रात्रि में लेप करता है, उसका मदनध्वज लोहदण्ड के समान हो जाता है।

हयारिपत्नी नवनीतमध्ये वचाबलाभागरसा मयैश्च ।
लेपेनलिङ्गं सहसैव पुंसां लोहोपमं स्यादिति दृष्टमेतत् ॥५२॥

अथवा अजा जल और बकरी के मूत्र और भैंस के मक्खन में बच, खिरेंटी और पारा मिलाकर लेपन करने से तत्काल यह लेप मदनध्वज को लोहदण्ड के समान कर देता है। यह देखा हुआ योग है।

कृष्णापराजितामूलं ग्राह्यं खदिरकीलकैः ।
कृष्णसूत्रैः कटिबद्ध्वा ऊर्द्ध्वलिङ्गं करोति च ॥ ५३ ॥

कृष्णा विष्णुकान्ता की जड़, खदिर की कीलक से ग्रहण कर काले तागे से कमर में बाँधने से रतिध्वज को दृढ़ करती है।

देवदालीरसंधात्रीक्षीरपानात्स्थिरोध्वजः ।

वन्दाली का रस, आमला और दूध पीने से ध्वजा स्थिर होती है।

इत्येवं सर्वयोगानां मन्त्रराजः शिवोदितः ॥ ५४ ॥
अनेन मन्त्रितं कृत्वामासैकं लेपयेत्ततः ।

ॐनमो भगवते उडडामहेश्वराय सव सव प्रसव प्रसव कुरु कुरु स्वाहा ठः ठः । दृढीकरणं तु विनामन्त्रेण कार्यम् ।

इति लिङ्गस्थूलीकरणम् (दृढीकरणम्) ।

इस प्रकार इन सब योगों में शिवजी का कहा हुआ मन्त्रराज है जिससे अभिमन्त्रित कर एक मासपर्यन्त लेपन करना चाहिये । मन्त्र : ॐ नमो भगवते उड्डामहेश्वराय सव सव प्रसव प्रसव कुरु कुरु स्वाहा ठः ठः । दृढीकरण विना मन्त्र के ही करना चाहिये ।

इति लिंगस्थूलीकरण (दृढीकरण)

अथ स्तनवर्द्धनं स्तनोत्थापनं च

मातङ्गकृष्णाप्यथवाजगन्धावचायुता पर्युषिताम्बुमिश्रा ।
हयारिपत्नी नवनीत योगात्कुर्वन्ति पीनं कुचकुम्भयुग्मम् ॥

स्तनवर्धन तथा उत्थापन : गजपीपल, असगन्ध और बच इन सब को मिलाकर भैंस के मक्खन के साथ कुचों पर लगाने से यह शीघ्र दोनों स्तनों को कुम्भ के समान दृढ करता है ।

तैलं वचादाडिमकल्कसिद्धं सिद्धार्थजं लेपनतो नितान्तम् ।
नारीकुचौचारुतरौ च पीनौ कुर्यादऽसौ योगवरः प्रदिष्टः ॥

वच तथा दाडिम को सरसों के तेल में पकाकर इनका लेप करने से स्त्री के स्तन अत्यन्त सुन्दर तथा पुष्ट होते हैं । यह प्रयोग बहुत श्रेष्ठ कहा गया है ।

श्रीपर्णिकायारसकन्तुसिद्धं तिलोद्भवं तैलवरं प्रदिष्टम् ।
लेपेन वक्षोजयुगे च शीघ्रं वृद्धि प्रयातः पतिते रमण्याः ॥५७॥

श्रीपर्णी (कम्भारी) के रस में सिद्धकर तेल बना ले । इसको दोनों उरोजों पर लगाने से गिरे हुए भी स्त्री के कुच उठ आते हैं ।

प्रथमकुसुम कालेनस्ययोगेनपीतं सनियममथवास्यात्तंदुलांभोयुवत्याः ।
कुचयुगल सपीनंक्वापिनो यातिपातं कथितइतिपुरस्तैवं चक्रदत्तेनयोगः ।५८

प्रथम रजोदर्शन के समय युवती द्वारा चावलों का जल नस्य और पान नियमपूर्वक सेवन करने से यदि अन्य किसी प्रकार से भी कुच पुष्ट न हों तो इससे हो जाते हैं । यह योग चक्रदत्त ने कहा है ।

शालितंदुलौदकं कर्षमात्रं वामदक्षिण नासाभ्यां नस्यंदेयं मुंडीचूर्णंदश पलं तोयैश्चतुर्गुणैःपचेत् ॥
अर्द्धशेषं हरेत्क्वाथं क्वाथार्द्धं तिलतैलकम् ॥ ५९ ॥

तैलशेषंपचेत्तेन नस्यं पानं च कारयेत् ॥
पतितं यौवनं स्त्रीणां मासादुत्तिष्ठते ध्रुवम् ॥ ६० ॥

शालितण्डल का जल एक कर्ष बाईं और दाहिनी नासिका के छिद्रों से नस्य लेने से, और दश पल मुण्डी या सोंठ का चूर्ण लेकर उसे चौगुने जल में पकाकर जब आधा रह जाय तब उसमें तिल का तेल डालकर जब क्वाथ जल जाय और तेल मात्र रह जाय तब उसको नस्य और पान के काम में लाने से गिरे हुए स्त्री के कुच फिर उठ आते हैं।

[1]श्यामानिशाबलालाजालवणं क्वाथयेत्समम् ।
तोये चतुर्गुणे पाच्यं पादशेषं समाहरेत् ॥ ६१ ॥
तिलतैलं क्वाथपादं तैलार्द्धं महिषी घृतम् ।
स्नेहशेषं पचेत्तैलं नस्येन मासमात्रतः ॥ ६२ ॥
बालास्त्री वृद्धनारीणां यौवनं कुरुतेऽद्भुतम् ॥ ६३ ॥

प्रियंगु, हलदी, खिरैंटी, खील तथा सेंधानमक इनका क्वाथ करके चौगुने पानी में पकावे। जब चौथाई भाग रह जाय तब उसमें तिल का तेल डालकर क्वाथ करे। तेल से आधा भैंस का घी ले और जब रस जल जाय और तेल मात्र रह जाय तब एक माशेभर नस्य लेने से बाला, स्त्री और वृद्ध स्त्रियों के यौवन अद्भुत हो जाते हैं।

एरण्डतैलं शकुलस्यतैलं तथामबिल्वस्यरसं गृहीत्वा ।
सम्मर्दयेदूर्ध्वगहस्तकेन तदास्तनं स्यात्पतितं न चैव ॥ ६४ ॥

एरण्ड का तेल, सीलमत्स्य का तेल और बेल का रस ग्रहण करके यह तेल कुचों पर मर्दन करने से कुच नवीन हो जाते हैं।

श्रीपर्णी रसकर्काभ्यां तैलं सिद्धतिलोद्भवम् ।
तत्तैलं तिलकेनापि स्तनस्थो परिदापयेत् ॥ ६५ ॥
काठिन्यं वृद्धतां यातः पतितौ चोत्थितौ च तौ ।

श्रीपर्णी (गम्भारी) का रस, कर्कट वृक्ष और तिल का तेल लेकर पकाकर उसे स्तन पर लगाने से स्तन कठिन और वृद्धि को प्राप्त होते हैं। इससे पतित हुए स्तन उठ आते हैं।

वृद्धायाः कन्यकाया वाह्य बलायाः पयोधरौ ॥ ६६ ॥
श्वेतोन्दस्य कुसुमं कृष्णधेनु पयसि नित्यम् ।
पिष्ट्वास्तनयुगेदेयं भवेत्पीन पयोधरा ॥ ६७ ॥

---

१ शुण्डी वा पाठः ।

जिस वृद्धा या कन्या के पयोधर पतित हो जाँय उसे श्वेत मोथे के फूल को काली गाय के दूध में पीसकर दोनों स्तनों पर लेप करना चाहिये। इससे स्तन पुष्ट हो जाते हैं।

वचाश्वगन्धा संयुक्ता चाश्वारिपत्रकं तथा।
गजपिप्पलिकायुक्तं सद्योभिन्नजलेन च।
पेषयित्वा विधानेन लेपयेत्स्तनमण्डले ॥ ६८ ॥
नयतेतु कदाचिद्वै ताम्रतालफलं तथा।

वच, असगन्ध और असगन्ध के पत्तों को गजपीपल के साथ जल से पीस कर स्तनमण्डल में लेप करने से स्तन आम्रफल के समान उन्नत हो जाते हैं।

गम्भारिपत्ररसश्चैव तत्सम तिलतैलकम् ॥ ६९ ॥
समानं जलभागं च दत्त्वापाकं समाचरेत्।
तैलशेषं परिज्ञायवस्त्रेण शोधयेत्कुचौ ॥ ७० ॥
दिवाप्रलेपनादेव लोहत्वं जायते चिरात् ॥ ७१ ॥

इति स्तनवर्द्धनं स्तनोत्थापनञ्च।

गम्भीरा के पत्र का रस और तिल का तेल तथा इनके बराबर जल लेकर पाक करे। जब तेल मात्र शेष रह जाय तब स्तन पर लेप करने से स्तन लोहे के समान कठोर हो जाते हैं।

इति स्तनवर्द्धन और उत्थापन।

अथ योनिसंस्कारः

प्रक्षालयेन्निम्बकषाय तोयैर्निशाज्य कृष्णागुरुगुग्गुलूनाम्।
धूपेन योनिं निशिधूपयित्वा नारीप्रमोदं विदधाति भर्तुः॥७२॥

योनिसंस्कार : नीम के काढे से योनि को धोना चाहिये, अथवा नीम, हलदी, घृत, काला अगुरु तथा गूगल इनकी योनि में धूप देने से भी स्त्री प्रमोद को प्राप्त होती है।

प्रक्षाल्य निम्बस्य जलेन भूयस्तस्यैव वल्केन विलेपयेच्च।
त्यजेयुरत्याश्चिरकालभूतं गन्धं वरांगस्य न संशयोऽत्र ॥७३॥

इति योनिसंस्कारः।

फिर नीम के जल से प्रक्षालन करके और नीम के छाल का लेप करने से चिरकाल के लिये योनि की दुर्गन्ध नष्ट होती है, इसमें सन्देह नहीं।

इति योनिसंस्कारः।

अथ लोमशातनविधिः

पलाशभस्मान्वित तालचूर्णैरंभाम्बुमिश्रैरुपलिप्य भूयः।
कन्दर्पगेहं मृगलोचनानां रोमाणिरोहन्ति कदापि नैव ॥७४॥

लोमशातनविधि : ढाक की भस्म और हरताल की भस्म यह दोनों जल से पीसकर लेप करने से स्त्रियों के मदनमन्दिर के रोम कदाचित् भी नहीं जमते।

एकः प्रदेयो हरितालभाग. पञ्चप्रदेया जलजस्यभागाः।
सवस्तरोर्भस्म न एव पञ्चप्रोक्ताश्च भागाः कदलीजलार्द्राः॥
संसिद्धपात्रेषु सप्ताहमित्थं कृत्वास्मरागारविलेपनं च।
रोमाणिसर्वाणि विलासिनीनां पुनर्नरोहंति कदाचिदेव ॥
रम्भाजलैः सप्तदिनं विभाव्यभस्मानिकंबोर्मृणानिपश्चात्।
नलेनयुक्तानि विलेपनेन रोमाणि निर्मूलयति क्षणेन ॥

हरिताल एक भाग, शङ्ख की भस्म पाँच भाग और सबतरु (पिलखन) की भस्म पाँच भाग, यह केले के जल में पात्र में छानकर सात दिन लेप करने से मदन स्थान में कभी रोम नहीं जमते। कहीं 'ब्रह्मतरु' पाठ है किन्तु वहाँ पिलखन की भस्म लेनी चाहिये। केले के जल में सात दिन तक शङ्ख की भस्म से भावना दे और नलतृण से युक्त लेप करने से फिर रोम कभी नहीं जमते और क्षणमात्र में निर्मूल हो जाते हैं।

तालकं शङ्खचूर्णन्तु मञ्जिष्ठाभस्मकिंशुकम्।
समभाग प्रलेपेन रोमखण्डनमुत्तमम् ॥ ७८ ॥

हरताल, शङ्खचूर्ण, मजीठ और केसू की भस्म इनको समान भाग लेकर जल से लेप करने से रोम दूर हो जाते हैं।

तालकं शङ्खचूर्णं तु पिष्ट्वा च क्षारतोयकैः।
तेनलिप्त्वा कचाघर्मेस्थिते गच्छन्ति तत्क्षणात् ॥ ७९ ॥

हरताल और शङ्ख का चूर्ण पीसकर खारी जल के साथ लेपकर धूप में स्थित होने से बाल उड़ जाते हैं।

पूगवृक्षस्य पत्रोत्थद्रवैः पिष्ट्वा तु गन्धकम्।
तेन लिप्त्वास्थिते घर्मेरोमखण्डनमुत्तमम् ॥ ८० ॥

सुपारी के पेड़ के पत्तों के रस में गन्धक पीसकर लेपकर धूप में स्थित होने से रोम उड़ जाते हैं।

नराणां खण्डकेशानां क्षुच्छुन्दर्याश्च तैलतः।
ननिर्यान्ति पुनर्लेपात्त्रिसप्ताहे कृतेसति ॥ ८१ ॥

जिनके खण्डकेश हो गये हों उन्हें छछून्दर के तेल का तीन सप्ताह तक लेप करने से बाल नहीं जमते ।

कुसुम्भ तैलतप्तानां सप्तवारं तथागुणम् ।

कुसुम्भ के तेल को तप्त करके सात दिन तक लगाने से भी यही गुण उत्पन्न होता है ।

सद्योजातस्य महिषीवत्सस्य मलमाहरेत् ॥ ८२ ॥
तल्लिप्त्वा वेष्टयेद्रात्रौ केशान्वातारि पत्रतः ।
प्रातः तप्तोदकैः शाल्वाः पतन्त्यामूलतोत्थिताः ॥ ८३ ॥

तत्काल उत्पन्न हुए भैंस के बच्चे का गोबर लाकर रात्रि में उसको बालों पर एरण्ड के पत्तों में लगाकर लेप करे । फिर गरम पानी से धोने से बाल जड़ से गिर जाते हैं ।

पिपीलिकानां कृष्णानां स्थूलानां भूगृहं हरेत् ।
छायाशुष्कं च तच्चूर्णं पञ्चाहं लेपयेत्सदा ॥ ८४ ॥
पूर्ववत्खण्डकेशानां न पुनारोहणं भवेत् ।

बड़े काले चींटे के रहने के स्थान की मट्टी लाकर छाया में सुखाकर उसका चूर्ण कर ले । इसको पाँच दिन लेप करने से पूर्व में खण्ड हुए बाल फिर नहीं जमते ।

शङ्खतालं यवं गुञ्जां काञ्जिकैः पेषयेत्सदा ॥ ८५ ॥
लेपात्पतंतिरोमाणि पक्वपत्रमिवद्रुमात् ।
लेपनाद्धन्तिकेशांश्च कटुतैलैर्मनश्शिला ॥ ८६ ॥

इतिलोमशातनम् ।

शङ्ख की भस्म, हरताल, इन्द्रजौ और गुञ्जा यह काञ्जी के साथ पीसकर सदा उसके लेप से रोम ऐसे गिर जाते हैं जैसे वृक्ष से पके पत्र । बालों पर कड़वा तेल और मैनशिल का लेप करने से भी बाल गिर जाते हैं ।

इति लोमशातन ।

इति श्रीनित्यनाथविरचिते कामरत्ने गाढीकरणादिलोमशातनं नाम सप्तमोपदेशः ॥ ७ ॥

अथ षंढीकरणं, तच्छमनं च

नरोमूत्रयते यत्र कृष्णं तत्र तु वृश्चिकम् ।
निखन्याज्जायते षंढ उद्धृते तु पुनः सुखी ॥ १ ॥

षंढी (नपुंसक) करण और उसका प्रतिहार : जहाँ मनुष्य मूत्र करता है वहाँ काला बिच्छू गाड़ देने से वह व्यक्ति नपुंसक हो जाता है और उसे उखाड़ने से सुखी होता है ।

अजामूत्रेण सम्भाव्यं निशिषडबिन्दुचूर्णितम् ।
खानपान प्रयोगेण षंढत्वं जायते नृणाम् ॥ २ ॥

बकरी के मूत्र में भावना देकर रात्रि में षड्बिन्दु का चूर्ण कर खान-पान में प्रयोग करने से मनुष्य को नपुंसकता होती है ।

तिलगोक्षुरयोश्चूर्णं छागदुग्धेन पाचितम् ।
शीतलं मधुनायुक्तं पिबेत्षंढत्वशान्तये ॥ ३ ॥

तिल और गोखरू का चूर्ण बकरी के दूध में पकाकर शीतलकर शहद के साथ पीने से षंढत्व शान्त हो जाता है ।

जलौकादग्धचूर्णन्तु नवनीतेन भक्षितम् ।
यावज्जीवं न सन्देहः षढत्वं प्राप्नुयान्नरः ॥ ४ ॥

जलौका और कतृण का चूर्ण मक्खन के साथ भक्षण करने से मनुष्य जीवन पर्यन्त षंढ हो जाता इसमें सन्देह नहीं ।

धत्तूरपुष्प भक्ष्येण पुनः सम्पद्यते सुखम् ॥ ५ ॥

फिर धतूरे के फूलों को भक्षण करने से पुनः सुखी होता है ।

योगोविषाणम्पतितञ्च घृष्ट्वा लिपेद्व्रतौ स्वस्यमनोभवास्त्रे ।
एकान्तकं तत्कुरुतेन्य पत्न्यानोत्तिष्ठते तामपहायपत्नीम् ॥

गिरे हुए गाय के सींग को घिसकर रति करने के समय कामास्त्र (शिश्न) पर लेप करने से फिर वह स्त्री उसे छोड़कर कभी दूसरे से रति नहीं करती ।

अत्युन्नतं चापरगोविषाणं घृष्ट्वा पुनस्तेन विलिप्यलिङ्गम् ।
प्रयातिभूयः प्रकृतं तदंगं दृष्टोनरैरेष सदाप्रयोगः ॥ ७ ॥

फिर दूसरे उससे बड़े सींग को घिसकर शिश्न पर लेप करने से फिर अपनी प्रकृति को प्राप्त होती है । यह प्रयोग देखा हुआ है ।

निशाविचूर्णं घनसारचूर्णं समीकृतम्बस्त पयोवियुक्तम् ।
भक्तं निपीतं कुरुते निकामं नरस्य षंढत्वमिति प्रसिद्धम् ॥८॥

हलदी का चूर्ण और कपूर का चूर्ण दोनों समान भाग लेकर दूध से पान करना मनुष्य को षंढ अर्थात् नपुंसक कर देता है, इसमें सन्देह नहीं ।

तिलस्य दण्डाविटपस्य चूर्णं प्रसाधिरम्भापयसोऽर्द्धमासम् ।
सयावकं शर्करयान्वितं च पीत्वाहरेत्षंढकतामवाप्य ॥ ९ ॥

तिल में नागबला का चूर्ण करके केले के रस में भावित करे । लाक्षा रस के साथ इसे आधे महीने तक शर्करा मिलाकर पीने से षंढपन दूर हो जाता है ।

इति षंढीकरणंतत्साम्यश्च ।

अथ दुष्टस्त्रीकृतध्वजापातोत्थानम्

भूमिचम्पकमूलं च सगुवाकं समं तथा ।
तद्भक्षणाद्भवेत्सद्योलिङ्गोत्थानं न संशयः ॥ १० ॥

भुइचम्पे की जड़ और सुपारी को बराबर लेकर भक्षण करने से ध्वजा शीघ्र उत्थित होती है ।

रक्तशाल्मलि मूलन्तु शिवं दुर्गां विनायकम् ।
सम्पूज्य विविधैर्द्रव्यैर्निमन्त्र्य निशिसंयुतम् ॥ ११ ॥
प्रातस्त्वचं हरेत्सम्यक् शुष्कं कुर्याच्च चूर्णकम् ।
घृतेन पेषितं कृत्वा सैन्धवेन सदारुचिः ॥ १२ ॥
प्रातर्भुक्त्वा च किञ्चित्तु भोक्तव्यं प्रहरावधि ।
पतितस्य भवेल्लिङ्गस्योत्थानं नात्रसंशयः ॥
अयोमयं भवेल्लिङ्गं कोद्रवान्नं विवर्जयेत् ॥ १३ ॥

लाल सेमल का मूल, शिव, दुर्गा तथा गणेश का विधिपूर्वक पूजन और रात्रि में निमन्त्रण कर प्रभातकाल को रक्तसेमल की छाल लाकर उसे सुखाकर चूर्ण करे । उसको पीसकर उसमें घी और सेंधानमक मिलाकर कुछ प्रभात के समय खाकर फिर पहर भर बाद पुनः खाने से पतित हुई ध्वजा उठकर लोहे के समान हो जायगी । इस प्रयोग में कोदों अन्न नहीं खाना चाहिये । इससे दुष्ट स्त्री का प्रयोग भी दूर होता है ।

अथ योनिबन्धनं मोक्षणं च

पूर्वोत्थं लाङ्गलीमूलं वामपादस्य पांशुकम् ।
एकत्रकारयेद्धीमान्द्वयेन शुक्ति सम्पुटे ॥ १४ ॥

लेपयेद्भगबन्धः स्यात्तक्रैः प्रक्षाल्यमुच्यते ।

पूर्व में उगी हुई लांगली की जड़ को और वामचरण की धूल को एकत्र कर बुद्धिमान् इन दोनों से दो सीपी को लेपित करे । इसका लेप करने से योनिबन्धन होता है । फिर मट्ठे से प्रक्षालन करने से योनि छूटती है ।

श्मशान चैलमादाय वामपादस्य पांशुकम् ॥ १५ ॥
सन्ध्यायां बन्धयेत्तेन पोटली भगबन्धनी ।
ॐअमुकीभगं बध्नामिविस्फुरय रन्ध्रशोणितम् ॥ १६ ॥
मयाकृतं भगबन्धं नास्तिलोके चिकित्सकाः ।
पतिर्वापतिमन्त्रोवाये चान्ये भगमर्दकाः ।
सर्वे वै विमुखं यान्तिवर्जयेत्कामुकैस्तथा ॥ १७ ॥

श्मशान से वस्त्र लाकर उसमें वामचरण के नीचे की धूल मिलाकर संध्या के समय पोटली बाँधने से योनि का बन्धन होता है । 'अमुकी भगंबध्नामि विस्फुरय विस्फुरय रन्ध्रशोणितम् । मयाकृतं भगबन्धनं नास्ति लोके चिकित्सकः' इत्यादि मन्त्र भी पढ़ना चाहिये । मन्त्र का अर्थ : मैंने अमुक स्त्री का योनिबन्धन किया है इससे रन्ध्र शोणित-स्फुरण रहित होगा । इस मेरे किये बन्धन का लोक में कोई चिकित्सा करने वाला नहीं है । पति या पति के मन्त्र या अन्य भगमर्दक चिकित्सक आदि सभी बिमुख हो जाँयगे, इस कारण कामुक इसे वर्जित रखते हैं ।

ॐचिठिचिठिखचिटि खचिटि ठः ठः प्रयोगद्वयस्यायं मन्त्रः ।

'ॐचि[१]ठिचिठि खचिटि खचिटि ठः ठः' यह उक्त दोनों प्रयोगों का मन्त्र है ।

वचैलाचन्दनं क्षीरैः प्रक्षाल्यामर्दयेद्भगम् ॥
यन्त्रमन्त्रादि तन्त्रेण यत्किंचिच्छत्रुणा कृतम् ॥ १८ ॥
तत्तस्यैव भवेद्येन सिद्धि मन्त्रः स उच्यते ।
सप्तभिर्मन्त्रितं तोयं शुद्धं पूतं पिबेत्तुयः ॥
तस्य शत्रुकृतो दोषः शत्रुवेश्म भविष्यति ॥ १९ ॥

वच, इलायची और चन्दन को पीसकर दूध में मिलाकर योनि का मर्दन करने से यन्त्र, मन्त्र, तन्त्र जो कुछ शत्रु ने किया है वह सब इस सिद्ध प्रयोग को मन्त्र सहित करने से दूर होता है । सात बार मन्त्र से अभिमन्त्रित कर जो जल पिये उसके शत्रु का किया दोष उस शत्रु के ही मन्दिर में रहेगा ।

१ ॐ चिटि चिटि खचिटि ठः ठः पाठः ।

ॐ वज्रमुष्टि वज्रकी बाडी वज्रबाँधौदश द्वार
वज्रपाणी पिबेच्चाङ्गे डाकिनी डापिनी रक्षोवसर्वांगे
मन्त्रजयो शत्रुभयो डाकिनी वावोंजानुवायौ कालिका
लिशामनते ब्रह्माकीधीशुसाशुडाकिनी मिलि
करिवरेयोमोरोजीडुभातेकरेतीपत्ने पानीकरेगुआ
करेयानेकरे सूतेकरे परिहासेकरे नयनकटाक्षिकरे
आपोनहाथेपरहाथे जियतिसञ्चारे किलनीपोतनो
अनिन्तुषवरीकरे एतेविज्ञान अहिननगेयोमोहि
करेत्साराकुठितित्स्केमसरूपद्रे ॥
ॐ मोसिद्धिगुरूरपाय स्वीलिगं महादेव को आज्ञा ।

'ॐ वज्रमुष्टि वज्रकी वाडी वज्रबान्धौं दश द्वार वज्र पाणी पिबेत् चांगे डाकिनी डापिनी रक्षोव सर्वांगे मन्त्रजयो शत्रु भयो डापिनी वावौं जानुवायो कालिका लिश मनते ब्रह्मा की धीशु साशु डाकिनी मिलि करिवरे योमा रोजी डुभातेकरेती पत्नेपानी करे गजकरे यानेकरे सूतेकरे परिहासेकरे नयन कटाक्षिकरे आपोन हाथेपर हाथे जयति संचारे किलनी पोतनी अनितु षवरी करे एते विज्ञान अहिननगे योमोहि करेत्साराकुठि तित्स्के मसरूपद्रे ॐ मोसिद्धि गरूरपाय' स्वीलिगं महादेव की आज्ञा ।

एलाफलं वासवगोपचूर्णं गुप्तं क्षिपेद्योषिदुपस्थमार्गे ।
तस्यैव लिंगस्यवरप्रवेशं स्यात्तत्रनान्यस्य कदाचिदेव ॥ २० ॥

पूर्वी इलायची, इन्द्रगोप और वीरबहूटी का चूर्ण यदि स्त्री के मदन-मन्दिर में गुप्त रूप से डाल दे तो उस स्त्री से वह डालने वाला पुरुष ही रति कर सकता है अन्य नहीं ।

गव्येन दध्नामथितं विधाय प्रक्षालयेत्तेन तदङ्गमुच्चैः ।
भवेद्वराङ्गं प्रकृतं युवत्या इत्याहकर्त्ता हरमेखलायाः ॥२१॥

फिर गाय के दही को मथकर उससे कामसदन का प्रक्षालन करने से स्त्री फिर पूर्ववत् हो जाती है । यह वचन हरमेखला के कर्ता ने कहा है ।

आकाशदेशे पतितं गृहीत्वा योषिन्नखन्दन्तमलं सुपिष्ट्वा ।
लिप्त्वाध्वजं तेन रमेत्ततोयां तस्याविनाशः पुरुषान्तरेण ॥२२॥

गिरे हुए स्त्री के नख और दाँत के मैल को आकाश देश में ग्रहण कर फिर पीसकर कामध्वजा पर लेप करने से उस स्त्री को पुरुषान्तर की इच्छा नहीं होती ।

निर्[1]घात लोहस्य जलेन भूयः प्रक्षालनं कामगृहस्य कुर्यात् ।
पुनः समासादयति प्रहृष्टं नारीतदङ्गं खलुपूर्वरूपम् ॥२३॥

---

१ निर्वान्तलोहस्येति वा पाठः ।

फिर बिना निर्घात लोह के जल से कामस्थान का प्रक्षालन करने से पति-सम्भोग में स्त्री पूर्ववत् प्राप्त होती है, इसमें सन्देह नहीं।

मुहुर्मुहुर्यामथितेन नारीप्रक्षालयेत्सप्तदिनानि यत्नात्।
तस्यास्तदंगं पुनरेव भूयात्पूर्वानुरूपं नहि संशयोऽस्ति ॥२४॥
इति भगबन्धनं तस्यमोक्षणं च।

यदि मथन किये इन प्रयोगों से स्त्री बारम्बार अपने गुप्तस्थान का सात दिन तक प्रक्षालन करे तो उसका गुह्यस्थान पूर्ववत् हो जाता है, इसमें सन्देह नहीं।

इति योनिबन्धन और उसका मोक्षण।

गृहकोदारक निवारणम्

वधूटनीयमूलन्तु तस्याहस्तेन बन्धनात्।
गृहकोदारकं नस्याद्यावद्धस्तेतु बन्धनम् ॥ २५ ॥

वधूटनी (गौरीसर) की जड़ हाथ में बाँधने से गृहकोदारक नहीं रहते।

अथ नष्टपुष्पायाः पुष्पकरणम्

ज्योतिष्मतीकोमलपत्रमग्नौ भृष्टं जपायाः कुसुमञ्च पिष्टम्।
गृहाम्बुनापीतमिदं युवत्याः करोति पुष्पं स्मरमन्दिरस्य ॥ २६ ॥

ज्योतिष्मती (मालकांगनी) और कमलपत्र को अग्नि में भूनकर तथा जपा कुसुम से पीसकर जो स्त्री पान करती है उसका नष्टरज फिर प्रवर्तित होता है।

लाङ्गलीकन्दचूर्णं वा मूलं वाऽपामार्गजम्।
इन्द्रवारुणिकामूलं योनिस्थं पुष्पबन्धनुत् ॥ २७ ॥

कलिहारी औषधी के कन्द का चूर्ण या चिरचिटे की जड़ या इन्द्रायण की जड़ योनि में रखने से रज का बन्धन छूट जाता है।

पारावतपुरीषं च मधुनासं पिबेत्तु यः।
रजस्वला भवेन्नारी मूलदेवेन भाषितम् ॥ २८ ॥

कबूतर की बीट को शहद में मिलाकर पीने से स्त्री अवश्य रजस्वला होती है ऐसा मूलदेव ने कहा है।

तिलमूलकषायन्तु ब्रह्मदण्डीय मूलकम्।
यष्टीत्रिकटुकं चूर्णं क्वाथयुक्तं च पाययेत् ॥ २९ ॥
पुष्परोधे रक्तगुल्मे स्त्रीणां सद्यः प्रशस्यते।

तिल के मूल का काढा या ब्रह्मदण्डी की जड़, मुलेठी तथा त्रिकुटा, इनका चूर्ण या क्वाथ करके पान करने से रक्त का रोध और योनि की ग्रन्थि यह शीघ्र नष्ट हो जाती है।

तिलक्वाथेगुडं त्र्यूषं तिलभागयुतं पिबेत् ॥
क्वाथं रक्तभवेगुल्मेनष्टपुष्पे च योजयेत् ॥ ३० ।

तिल के क्वाथ में गुड़, सोंठ, मिर्च और पीपल तिल के भाग के साथ पीने से अर्थात् क्वाथ बनाकर पीने से गुल्म तथा नष्टपुष्प सब दूर हो जाते हैं ।

दूर्वादलं तन्दुलतुल्यभागं निष्पिष्यपिष्टं परिपाचितञ्च ।
तद्भक्षयित्वा वनिताप्रनष्टं पुष्पं लभेतस्वबलानुरूपम् ॥ ३१ ॥
इतिनष्टपुष्पायाः पुष्पकरणम् ।

अथवा दूर्वादल और चावल बराबर पीसकर और भूनकर खाने से स्त्री रजोवती होती है ।

इति रजस्वलाकरणम् ।

अथ गर्भस्रावणम्

तत्रानभिनवगर्भस्रावणम्

कृते जारेक्षिपेद्योनौ तिलतैलाक्तसैन्धवम् ।
द्रवते तत्क्षणादेव शुक्रपुष्पं स्रवत्यपि ॥ ३२ ॥

यदि विधवा को जार से तत्काल का गर्भ हो तो तिल के तेल में सेंधा नमक को गीलाकर योनि में रखने से उसी समय शुक्रपुष्प का मेल पृथक् होकर गर्भस्राव हो जाता है ।

अथ गर्भपातनम्

काण्डमेरण्ड पत्रस्य योनावष्टांगुलं क्षिपेत् ।
चातुर्मास्योभवेद्गर्भः स्रवते तत्क्षणादपि ॥ ३३ ॥

अरण्ड के पत्तों का मूठा योनि में अष्ट अंगुल पर्यन्त रखने से चार महीने का गर्भ उसी समय पतित हो जाता है ।

देवदालीयचूर्णं तु कर्षैकं तोयपेषितम् ।
पिबेद्गर्भवती नारीगर्भं स्रवति तत्क्षणात् ॥ ३४ ॥

देवदाली का चूर्ण एक कर्ष (सोलहमाशे) गर्भवती स्त्री को पिलाने से उसी समय गर्भ पतित हो जाता है ।

धत्तूरमूलिका पुष्येगृहीत्वा कटिसंस्थिता ।
गर्भं निवारयत्येवरण्डावेश्यादि योषिताम् ॥ ३५ ॥

पुष्य नक्षत्र में लाई धतूरे की जड़ कमर में बांधने से रण्डी, वेश्यादि का गर्भ दूर होता है ।

राजिकां तिलतैलञ्च पिष्ट्वा नारी ऋतौ पिबेत् ।

त्रिदिनं तेनगर्भस्य सम्भवो नैव जायते ॥ ३६ ॥

राई और तिल का तेल पीसकर यदि स्त्री ऋतु समय में पान करे तो तीन दिन ऐसा करने से फिर गर्भ नहीं रहता ।

बबूलस्य तु पुष्पाणि गोदुग्धेन पिबेद्दतौ ।
या नारीगर्भसम्भूति. पुनस्तस्या न जायते ॥ ३७ ॥

बबूल के फूल को गाय के दूध से ऋतुकाल में पीने से गर्भ नहीं रहता ।

पिबेत्प्रसूतिसमये काञ्जिग्युक्तं जयाभवम् ।
पुष्पं न बिभर्ति सा प्रसूति धृतेपितस्यानगर्भः स्यात् ॥३८॥

प्रसूति समय में काञ्जी सहित नील दूर्वा पीने से गर्भ नहीं रहता ।

गृहीतं रेवती ऋक्षेपिप्पलस्य च वन्दकम् ।
गोदुग्धे सोऽपिभोक्तारं महागर्भं निवारयेत् ॥ ३९ ॥

रेवती नक्षत्र में पीपल का वन्दा लाकर गाय के दूध के साथ पीने से महागर्भ निवारण होता है ।

निर्गुण्डीद्रव संपिष्टं चित्रमूलं मधुप्लुतम् ।
कर्षं भुक्त्वापतत्याशु गर्भोरंडाकुलोद्भवम्: ॥ ४० ॥

निर्गुण्डी (सिन्धुवार) के रस में चीते की जड़ पीस शहद मिलाकर एक कर्ष मात्र खाने से उसी समय रण्डी का गर्भ गिर जाता है ।

इति गर्भस्रावणम् ।

अथ रक्तनिवारणम्

धात्रीं च पथ्यां च रसांजनं च कृत्वाविचूर्णं सजलं निपीतम् ।
अत्यन्तरक्तोत्थितमुग्रवेगं निवारयेत्सेतुमिवाम्बुपूरम् ॥ ४१ ॥

आमले, हरड और रसौत इनका चूर्ण करके जल के साथ पीने से जिसको अत्यन्त रक्तस्राव होता हो उसका निवारण हो जाता है ।

शेलुस्त्वचामिश्रित तंदुलेन विधायपिष्टं विनियोजनीयम् ।
कन्दर्पगेहे मृगलोचनाया रक्तं निहंत्याशु हठेनयोगः ॥ ४२ ॥

शेलु (लिसोड़ा) वृक्ष की त्वचा और साठी के चावल को पीसकर मृग-लोचनी की योनि में रखने से रक्त का वेग निवारण होता है ।

मूलं तु शरपुंखायाः पेषयेत्तन्दुलोदकैः ।
पाययेत्कर्षमात्रं तदसिरक्तप्रशान्तये ॥ ४३ ॥

सरफोके की जड़ को चावल के जल के साथ पीसकर कर्षमात्र पीने से अधिक रक्त शान्त हो जाता है ।

कुशस्यमूलं कदलीदलं वा बलासिफा वा बदरीफलं वा ।
गुडूचिकातण्डुलवारिपीता स्त्रीणामनेकं रुधिरं जयेच्च ॥४४॥

कुश की जड़, केले का पत्ता, खिरैटी, जटामांसी, गुडूची और बदरीफल यह चावल के जल के साथ पीने से रुधिर का अधिक निकलना बन्द होता है।

कुरंटकस्य मूलानि मधुकः श्वेतचन्दनम् ।
युक्त्यापिष्ट्वाक्षमात्राणि पाययेत्तन्दुलाम्बुना ॥ ४५ ॥
सकृत्पीत्वामाषयूषं प्रदरात्परिमुच्यते ।
घृतमृष्टं माषयूषभोजनं श्वेतचन्दनम् ॥ ४६ ॥

कुरण्ट (कुटज) की जड़, मुलेठी और श्वेत चन्दन इनको बारीक पीसकर चावल के जल के साथ [1]अक्षमात्र पीने अथवा एक वार ही उर्द का क्वाथ कर उसका रस पीने से स्त्री प्रदर से छूट जाती है। घी में भुना हुआ यह उर्द का यूष और श्वेत चन्दन लेना चाहिये।

चन्दनं क्षीरसंयुक्तं सघृतं पाययेद्भिषक् ।
शर्करामधुसंयुक्तम सृक्स्रवविनाशनम् ॥ ४७ ॥

क्षीर के साथ लालचन्दन और घृत पान करने से, अथवा शर्करा और मधुपान करने से रुधिर और पित्तविकार शान्त हो जाते हैं। इसमें जहाँ चन्दन है वहाँ लालचन्दन लेना चाहिये।

दार्वीरसांजनवृषाब्दकिरातबिल्वभल्लातकैरथ कृतोमधुनाकषायः ।
पीतोजयत्यतिबलं प्रदरं सशूलं पीतं शितारुणविलोहित नीलकृष्णम्॥४८

देवदारु, रसौत, चिरायता, बेल, भिलावा, अडूसा और नागरमोथा इनका क्वाथ कर घृत-मधु डालकर पीने से कठिन प्रदर शूल और पीत, श्वेत, अरुण, लाल, नील तथा कृष्ण सब प्रकार के उपद्रवों की शान्ति हो जाती है।

अशोकस्य त्वचासिद्धं क्षीरं रक्तहरं पिबेत् ।

अशोक की छाल और बच इनसे सिद्ध किया दूध पीने से रक्तनाश हो जाता है।

पेटारिकायाः पत्रं च माषचूर्णेन संयुतम् ॥ ४९ ॥
रम्भादलैर्वेष्टयित्वा दाहयेच्च प्रयत्नत ।
तस्य भक्षणमात्रेण ह्यतिरक्त निवारणम् ॥ ५० ॥

पेटारिका के पत्ते को उर्द के चूर्ण के साथ केले के दल से वेष्टन करके यत्नपूर्वक जलावे। इसके भक्षणमात्र से अतिरक्त की निवृत्ति होती है।

---

१ कर्षः ।

तन्मूलन्तन्दुलैः पिष्ट्वा पिष्टकम्भर्ज्जयेद्बुधः ।
तस्य भक्षणमात्रेण रक्तादि विकृतिं हरेत् ॥ ५१ ॥

और इसी की जड़ चावल के साथ पीसकर इस पिट्ठी को भूनकर खाते ही रक्तादि विकृति दूर हो जाती है ।

तस्य वल्कलचूर्णन्तु भृष्टतन्दुलचूर्णकम् ।
भक्षणादेव तद्रक्तं स्त्रीणां शमयति ध्रुवम् ॥ ५२ ॥

और इसी के छाल का चूर्ण तथा भूने चावलों का चूर्ण भक्षण करने से अवश्य ही स्त्रियों का अति रुधिर निकलना बन्द हो जाता है ।

शतावर्यास्तु मूलस्य निजद्रावं समाहरेत् ।
चत्वारिंशत्पलान्येवं वस्त्रपूतं प्रयत्नतः ॥ ५३ ॥
द्रवतुल्यं गवांक्षीरं क्षीरस्य द्विगुणं घृतम् ।
'जीवन्तिकोलमन्दारा अतसीक्षीरकाकुली ॥ ५४ ॥
मुद्गपर्णी माषपर्णी महामेदाशतावरी ।
द्राक्षापारशुकोयष्टिजीरकं प्रतिकार्षिकम् ॥ ५५ ॥
पलार्द्धं मधुकं पुष्पं सर्वमेकत्र पाचयेत् ।
घृतशेषं समुत्तार्य शीते जाते च निःक्षिपेत् ॥ ५६ ॥
पलाष्टकं कणाचूर्णं क्षौद्रं वा पिप्पलाष्टकम् ।
सितादशपलं योज्यमिदं शतावरी घृतम् ॥ ४७ ॥
लेह्यं कर्षं शमेदाशु दुःसाध्यमतिरक्तजम् ।
दोषं क्षयं च मन्दाग्नि हृद्रोगं ग्रहणीग्रहम् ॥
कामलां वातरोगांश्च अश्मरीं च शिरोग्रहम् ॥ ५८ ॥

इति रक्तनिवारणम् ।

शतावरी की जड़ का स्वच्छ द्रव लाकर चालीस पल उसकी छाल को पीसकर वस्त्र से छानकर और इस द्रव के तुल्य गाय का क्षीर ले, दूध से दूना घृत ले और जीवन्ती, कोलमन्दार, अलसी, क्षीरकाकोली, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, महामेदा, शतावरी, दाख, मुनक्का, मुलेठी और जीरा एक-एक कर्ष तथा आधापल महुए के फूल इन सबको एकत्र करके पकावे । जब घृतमात्र शेष रह जाय तब उतार ले । ठण्डा होने पर पात्र में रख छोड़े । पीपल का चूर्ण आठ पल अथवा शहद आठ पल तथा मिश्री दश पल इसमें डाल दे । यह शतावरी घृत है । एक कर्ष इसका सेवन करने से रक्तदोष दूर होता है ।

---

१ जीवन्ती शेलुमज्जाच धातकी क्षीरकाकुली वा पाठः ।

क्षतक्षय, मन्दाग्नि, हृद्रोग, ग्रहणी रोग, कामला, वात रोग, अश्मरी और शिरग्रह आदि सब रोग इससे दूर हो जाते हैं।

इति रक्तनिवारण।

अथ वंध्यानां गर्भधारणम्

जन्मवंध्या काकवंध्या मृतवत्सा क्वचित्स्त्रियः।
तासां पुत्रोदयार्थाय शम्भुना सूचितं पुरा ॥ ५९ ॥

वन्ध्या कई प्रकार की होती हैं, अर्थात् जन्मबन्ध्या, काकवन्ध्या और मृतवत्सा। जिसके बालक जीवित नहीं रहते उनके पुत्र होने के निमित्त शिवजी ने बिधान किया है।

तत्र प्रथमं जन्मवंध्या चिकित्सा।
समूलपत्रां सर्पाक्षीं रविवारे समुद्धरेत् ॥
एकवर्णगवांक्षीरे कन्याहस्तेन पेषयेत् ॥ ६० ॥
ऋतुकाले पिबेद्वंध्यापलार्द्धं तद्दिनेदिने।
क्षीरशाल्यन्नमुद्गं च लब्ध्वाहारं प्रदापयेत् ॥ ६१ ॥
एवं सप्तदिनं कुर्याद्वंध्याभवति गर्भिणी।
उद्वेगं भयशोकं च दिवानिद्रां विवर्ज्जयेत् ॥ ६२ ॥
न कर्मकारयेत्किंचिद्वर्ज्जयेच्छीतमातपम्।
नतयापरमां सेवां कारयेत्पूर्ववत्क्रियाम् ॥ ६३ ॥
पतिसंगाद्गर्भलाभोनात्र कार्याविचारणा।

पहले जन्मवन्ध्या की चिकित्सा कहते हैं : जड़-पत्ते सहित सुगन्ध रास्ना को रविवार के दिन उखाड़कर लाकर उसको एक रङ्ग वाली गाय के दूध में कन्या के हाथ से पिसवा ले। ऋतुकाल में वन्ध्या प्रतिदिन दो-दो पल इसको पान और दूध, शालिधान्य, मूंग, आदि का लघु आहार करे। इस प्रकार सात दिन करने से वन्ध्या स्त्री भी गर्भिणी हो जाती है। औषध सेवन के समय उद्वेग, भय, शोक और दिन में सोना त्याग दे। कोई काम न करे, शीत धूपादि को न सहे और न कोई सेवा करावे। पूर्ववत् फिर दूसरे महीने इसी क्रिया को करे। फिर पति के सङ्ग से वह गर्भ को प्राप्त होती है इसमें सन्देह नहीं।

एकमेव तु रुद्राक्षं सर्पाक्षीकर्ष मात्रकम् ॥ ६४ ॥
पूर्ववच्चगवां क्षीरैर्ऋतुकाले प्रदापयेत्।
महागणेशमन्त्रेण रक्षां तस्यानुबन्धयेत् ॥ ६५ ॥
एवं सप्तदिनं कुर्याद्वंध्याभवति पुत्रिणी।

ॐदन्महागणपते रक्षामृतं मत्सुतं देहि ॥ ६६ ॥
पत्रमेकं पलाशस्य गर्भिणी पयसान्वितम् ।
पीत्वा च लभतेपुत्रं रूपवन्तं न संशयः ॥ ६७ ॥

एक रुद्राक्ष और एक कर्ष सुगन्धरास्ना पूर्ववत् ऋतुकाल में गाय के दूध से पीसकर दे और महागणेश के मन्त्र से रक्षा करे। इस प्रकार सात दिन करने से वन्ध्या पुत्रिणी होती है। 'ॐ ददन्महागणपते रक्षामृतं मत्सुतं देहि' इस महागणपति मन्त्र के साथ एक कोमल ढाक के पत्र को गर्भिणी के दूध के साथ पीने से वन्ध्या रूपवान् पुत्र को प्राप्त करती है इसमें सन्देह नहीं।

पथ्यमुक्तं यथापूर्वं तद्वत्सप्तदिनावधि ।

और ऊपर जो पथ्यादि कहा है उसी का सात दिन पर्यन्त सेवन करे।

देवदालीयमूलं तु ग्राहयेत्पुष्य भास्करे ॥ ६८ ॥
निष्कत्रयं गवां क्षीरैः पूर्ववत्क्रमयोगतः ।
वंध्या च लभते पुत्रं देयं पथ्यं यथापुरा ॥ ६९ ॥

जब पुष्य नक्षत्र में सूर्य आवे तो देवदाली (बड़ी तोरई) का मूल ग्रहण करे और उसे गाय के दूध से तीन माशे पान करे। पूर्ववत् क्रिया के योग से पान करने से पूर्ववत् पुत्र को प्राप्त होती है। पूर्ववत् पथ्य दे।

शीततोयेन सम्पिष्टं शरपुङ्खीय मूलकम् ।
कर्षं पीत्वालभेद्गर्भं पूर्ववत्क्रमयोगतः ॥ ७० ॥

शरफोके की जड़ शीतल जल से पीसे और उसे पूर्व क्रम से एक कर्ष ले तो पुत्र होता है।

मुस्ताप्रियंगुसौवीरं लाक्षाक्षौद्रं समं पिबेत् ।
कर्षं तन्दुलतोयेन वंध्याभवति पुत्रिणी ॥ ७१ ॥

मोथा, प्रियंगु, सौवीर, लाख और शहद यह सब समान भाग लेकर चावल के जल से एक कर्ष पीने से वन्ध्या पुत्रवती होती है।

पथ्यमुक्तं यथापूर्वन्तद्वत्सप्तदिनं पिबेत् ।
समूलां सहदेवीं च संगृह्य पुष्यभास्करे ॥ ७२ ॥
छायाशुष्कं च तच्चूर्णमेकवर्णगवां पयः ।
पूर्ववत्पिबतेनारी वंध्याभवति गुर्विणी ॥ ७३ ॥

सात दिन पथ्य से रहे। जब सूर्य पुष्य नक्षत्र में हो तो जड़ सहित सहदेई को ग्रहण करके छाया में सुखाकर उसको ग्रहण कर चूर्ण कर गाय के दूध से स्त्री ग्रहण करे तो गर्भिणी होती है।

मूलं शिफावाकिललक्ष्मणाया ऋतौनिपीय त्रिदिनं पयोभिः ।
क्षीरान्नचर्या नियमेन भुंक्ते पुत्रं प्रसूते वनितान चित्रम् ॥ ७४ ॥

लक्ष्मणा (श्वेर कटेरी) की जड़ और जटामांसी के पत्ते ऋतुकाल में दूध से तीन दिन स्त्री पान करे और दिन में भी क्षीरादि लघु आहार करे तो उसके पुत्र होता है इसमें आश्चर्य नहीं है ।

सपिप्पलीकेशर शृंगवेरं क्षुद्रोषणं गव्यघृतेन पीतम् ।
वंध्यापि पुत्रं लभते हठेन योगस्तु सोऽयं मुनिभिः प्रदिष्टः ॥ ७५ ॥

पीपल, नागकेशर, अदरख, छोटी गोलमिर्च यह गाय के घी से पान करने से वन्ध्या भी पुत्र को प्राप्त करती है । यह योग मुनियों का कहा हुआ है ।

तुरंगगन्धा घृतवारिसिद्धमाज्यं पयः स्नानदिने च पीत्वा ।
प्राप्नोतिगर्भं नियमं चरन्ति वन्ध्या च नूनं पुरुष प्रसंगात् ॥ ७६ ॥

असगन्ध को औटाकर घृत से सिद्धकर घृत और दूध के साथ स्नान कर दिन में पान करने और नियम से रहने से वन्ध्या स्त्री अवश्य पुत्रवती होती है । इसे शयनकाल में पीना चाहिये ।

पुष्यार्कयोगोद्धृतलक्ष्मणायामूलं तथा वज्रतरोश्च पिष्ट्वा ।
अप्येकवर्णा पयसानिपीतं स्त्रियः स्मृतं पुत्रकरं मुनीन्द्रैः ॥ ७७ ॥

पुष्य और सूर्य के योग में लक्ष्मणा की जड़ उखाड़ कर लावे । इसे अथवा सेहुँड़ या थूहर की जड़ पीसकर एक रङ्ग की गाय के दूध के साथ पीने से अवश्य पुत्र होता है ।

कन्दमूलं घृतैः पिष्ट्वा ऋतौ सा गर्भिणीभवेत् ।
पुष्योद्धृतं लाक्ष्मणमेव चूर्णं पुंसानिपिष्टं स घृतं निपीतम् ॥
क्षीरोदनं प्राश्यपति प्रसंगाद्गर्भं विदध्यात्तरुणीन चित्रम् ॥

ऋतु में वाराहीकन्द की जड़ को पीसकर घी के साथ खाने से वह गर्भिणी होती है, अथवा पुष्य नक्षत्र में उखाड़ी लक्ष्मणा का चूर्णकर घी के साथ पान कर उसपर दूध पान करने से तरुणी अवश्य गर्भवती होती है इसमें सन्देह नहीं ।

कृष्णापराजितामूलं बस्तक्षीरेण संपिबेत् ।
ऋतुस्नाता त्रिधायातु वन्ध्या गर्भधराभवेत् ॥ ७९ ॥

श्यामविष्णुक्रान्ता की जड़ दूध से पीसकर ऋतु से स्नान कर तीन दिन पीने से वन्ध्या भी गर्भ धारण करती है ।

नागकेशरकं चूर्णं नूतनं गव्यदुग्धतः ।

पिबेत्सप्तदिनं दुग्धं घृतैर्भोजनमाचरेत् ॥ ८० ॥
तदृतौ लभते गर्भं सा नारी पतिसङ्गता ।

नागकेशर का चूर्ण ताजे गाय के दूध के साथ सात दिन पर्यन्त पीने और अधिक घृत युक्त भोजन करने से स्त्री पति का सङ्ग करके अवश्य पुत्र प्राप्त करती है।

पुत्रजीवकपत्रैकं पिबेत्क्षीरैर्ऋतौ च या ॥ ८१ ॥
पतिसङ्गाच्च सा नारीसत्यं पुत्रवतीभवेत् ।
तस्यमूलं चैकवर्णाक्षीरैः पीत्वा च पुत्रिणी ॥ ८२ ॥

जो स्त्री ऋतु में जियेपोते का एक पत्र दूध के साथ पान करती है वह स्त्री पति के सङ्ग में अवश्य पुत्रवती होती है; अथवा इसकी जड़ दूध के साथ बहुत महीन पीसकर पीने से भी पुत्रवती होती है।

काकोल्यौ लक्ष्मणामूलं षष्टिकस्य च तन्दुलम् ।
नार्यैकवर्णा पयसापीत्वा गर्भवती ऋतौ ॥ ८३ ॥

क्षीरकाकोली और काकोली, श्वेत कटेरी की जड़ तथा साठी के चावल ऋतुकाल में बहुत महीन पीसकर दूध के साथ पीने से स्त्री गर्भवती होती है।

अश्विन्यां बोधिवृक्षस्य वन्दाकं ग्राहयेद्बुधः ।
गोक्षीरैः पानमात्रेण वन्ध्यापुत्रवती भवेत् ॥ ८४ ॥

अश्विनीनक्षत्र में पीपल के वृक्ष का वन्दा ग्रहण कर गाय के दूध से उसका पानमात्र करने से स्त्री गर्भवती होती है।

तिलरसगुडकं वै गोपुरीषाग्नियोगात्त
रुणवृषभमूत्रं प्रस्थयुक्तं विपक्वम् ॥ ८५ ॥
ऋतु दिवसविमध्ये सप्तवारैश्च पीतं ।
जनयति सुतमेतं निश्चितं पुष्पितैव ॥ ८६ ॥

तिल, रस, गुड़ और तरुण बैल का मूत्र १ सेर इन्हें गाय के गोबर के उपलों की अग्नि पर पकावे। इसको ऋतु के दिनों में सात वार पीने से अवश्य पुत्र होता है इसमें सन्देह नहीं।

कदम्बपत्रं श्वेतं च बृहती मूलमेव च ।
एतानि समभागानि ह्यजाक्षीरेण पेषयेत् ॥ ८७ ॥
त्रिरात्रं पञ्चरात्रं वा पिबेदेतन्महौषधम् ।
ऋतौ निपीयमाने तु गर्भो भवति निश्चितम् ॥ ८८ ॥

कदम्बपत्र, श्वेत चन्दन और कटेरी की जड़ को बराबर लेकर बकरी के दूध से पीसे। तीन रात या पाँच रात ऋतु के अन्त में इस महौषधि को रात में पीने से स्त्री अवश्य गर्भवती होती है।

गोक्षुरस्य तु बीजं च पिबेन्निर्गुण्डिकारसैः ।
त्रिरात्रं सप्तरात्रं वा वन्ध्याभवति पुत्रिणी ॥ ८९ ॥

निर्गुण्डी के रसयुक्त गोखरू के बीज तीन या सात रात पीने से वन्ध्या पुत्रवती होती है ।

कर्कोटबीजचूर्णं तु एकवर्ण गवां पयः ।
ऋतौ निपीयमाने तु गर्भोभवति निश्चितम् ॥ ९० ॥

कर्कोटक के बीजों का चूर्ण बारीक कर एक रङ्ग की गाय के दूध सें रात्रि में पीने से स्त्री अवश्य गर्भवती होती है ।

गोक्षुरस्य तु बीजं च पिबेन्निर्गुण्डिकारसैः ।
त्रिरात्रं सप्तरात्रं वा वन्ध्या भवति पुत्रिणी ॥ ९१ ॥

गोखरू के बीज को निर्गुण्डी के रस के साथ तीन या सात दिन सेवन करने से वन्ध्या पुत्रवती होती है । चित्र १०१ से १०५ तक के यन्त्र लिखें ।

भगाख्ये चैव नक्षत्रेवटवृक्षस्य मूलकम् ।
हस्तेबद्ध्वा लभेत्पुत्रं सुन्दरं कुलवर्द्धनम् ॥ ९२ ॥

भग देवता वाले नक्षत्र पूर्वाफाल्गुनी में वट की जड़ हाथ में बाँधने से वन्ध्या पुत्र पाती है ।

अश्वत्थस्य तु वन्दाकं पूर्वेद्युः सुनिमन्त्रितम् ।
ऋतुस्नाते तु पीतं स्यादपि वन्ध्या लभेत्सुतम् ॥ ९३ ॥

पीपल के वन्दे को पहले दिन निमन्त्रण करे, फिर लाकर ऋतु में पीने से वन्ध्या पुत्रवती होती है ।

एकवर्ण सवत्साया गोःक्षीरेण सुपेषितम् ।
भावितं वटवन्दाकं पीतं वन्ध्या सुतं लभेत् ॥ ९४ ॥

एक वर्ण के बछड़े वाली गाय के दूध में बड़ के वन्दे को भावना देकर फिर पीने से वन्ध्या को पुत्र होता है ।

पूर्वं पुत्रवती या साक्वचिद्वंध्या भवेद्यदि ।
काकवन्ध्या तु सा ज्ञेया चिकित्सास्यास्तु कथ्यते ॥ ९५ ॥

जो पहले पुत्रवती होकर यदि फिर वन्ध्या हो जाय उसको काकवन्ध्या कहते हैं उसकी चिकित्सा इस प्रकार है :

विष्णुक्रान्तां समूलां तु पिष्ट्वा दुग्धैस्तु माहिषैः ।
महिषी नवनीतेन ऋतुकाले तु भक्षयेत् ॥ ९६ ॥
एवं सप्तदिनं कुर्यात्पथ्यमुक्तं च पूर्ववत् ।

गर्भं सा लभते नारी काकवन्ध्या सुशोभनम् ॥ ९७ ॥

विष्णुक्रान्ता को जड़ सहित भैंस के दूध में पीसकर और भैंस के मक्खन के साथ ऋतु में भक्षण करे। इस प्रकार सात दिन करने और पथ्य से रहने से काकवन्ध्या अवश्य गर्भवती होती है।

अश्वगन्धीय मूलन्तु ग्राहयेत्पुष्यभास्करे।
पेषयेन्महिषीक्षीरैः पलार्द्धम्भक्षयेत्सदा।
सप्ताहाल्लभते गर्भं काकवन्ध्या चिरायुषम् ॥ ९८ ॥

पुष्य नक्षत्र में सूर्य हो तो असगन्ध की जड़ को ग्रहण करके भैंस के दूध से पीसकर आधे पल भक्षण करने से सात दिन में काकवन्ध्या गर्भवती हो चिरायु पुत्र उत्पन्न करती है।

अथ मृतवत्साचिकित्सा

गर्भं सञ्जातमात्रेण पक्षान्मासाच्च वत्सरात्।
म्रियते द्वित्रिवर्षाद्वा यस्या सा मृतवत्सिका ॥ ९९ ॥

जिसके बालक उत्पन्न होते ही पक्ष, महीने, वर्ष, दो वर्ष या तीन वर्ष में मर जाते हैं वह मृतवत्सा कहलाती है।

तत्रयोगः प्रकर्त्तव्यो यथाशङ्कर भाषितम्।
मार्गशीर्षेऽथवा ज्येष्ठे पूर्णायां लेपितेगृहे ॥ १०० ॥
नूतनं कलशं पूर्णं गन्धतोयेन कारयेत्।
शाखाफल समायुक्तं नवरत्न समन्वितम् ॥ १०१ ॥
सुवर्ण सूत्रिका युक्तं षट्कोण मण्डले स्थितम्।
तन्मध्ये पूजयेद्देवीमेकांतींनाम विश्रुताम् ॥ १०२ ॥
गन्धपुष्पाक्षतैर्धूपैर्दीपैर्नैवेद्य संयुतैः।
अर्चयेद्भक्तिभावेन मद्यमांसैः समत्स्यकैः ॥ १०३ ॥
ब्राह्मी माहेश्वरी चैवकौमारी वैष्णवी तथा।
वाराही च तथेन्द्राणी षट्सु पत्रेषु मातरः ॥ १०४ ॥
पूजयेन्मन्त्रबीजश्च [1]फँकारैर्नाम विश्रुतः।
दधिभक्तैश्च पिण्डानि सप्तसंख्या निकारयेत् ॥ १०५ ॥
षट्संख्या षट्सु पत्रेषु मातृभ्यः कल्पयेत्पृथक्।
बिल्वाभं सप्तमं पिण्डं शुचिस्थाने बहिःक्षिपेत् ॥ १०६ ॥

१ 'ॐ कारणे विधिश्रुतः' इति वा पाठः।

तद्भुक्त्वा गृहमागच्छेच्चक्राग्रेयागमाचरेत् ।
कन्यका योगिनी वामा भोजयेत्सकुटुम्बकैः ॥ १०७ ॥
दक्षिणां दापयेत्तासां देवताग्रे च नान्यथा ।
विसृज्य देवतां चाथ नद्यां तत्कलशोदकम् ॥ १०८ ॥
सकुलं वीक्षयेद्धीमांच्छुभेन शुभमादिशेत् ।
विपरीते पुनःकार्यं यावत्तावत्सुसिद्धिदम् ॥ १०९ ॥
प्रतिवर्षमिदं कुर्याद्दीर्घजीवि सुतं लभेत् ॥ ११० ॥

'ॐ ह्रींफैंएकान्तीदेवतायै नमः' अनेन मन्त्रेण पूजाजपश्च कार्यः ।

इसमें शङ्कर का कहा योग करना चाहिये । मार्गशीर्ष अथवा ज्येष्ठ की पूर्णिमा को अपना घर लीपकर नये कलश में जल भरकर उसमें सुगन्धित द्रव्य, आम्रशाखा और नवरत्न डाले । सुवर्ण सूत्रिका सहित षट्कोण मण्डल की रचना करे और उसके मध्य में एकान्ती नामक देवी की पूजा करे । गन्ध, पुष्प, अक्षत, धूप, दीप तथा नैवेद्य से संयुक्त कर भक्तिभाव से अर्चन करे तथा मद्य, मांस, मत्स्य भी दे । ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही और इन्द्राणी यह छः मातायें हैं । इनको बीजमन्त्र से छः पत्रों में पूजन करके फैंकार का उच्चारण करे और दधि के सात पिण्डों का निर्माण करे । छः तो छहों माताओं को पत्रों में प्रदान करे और बेल के समान सातवाँ पिण्ड पवित्र स्थान में बाहर रक्खे, उसको भक्षण कर घर में आवे और उस चक्र के आगे योग करे । कन्या, योगिनी तथा वामा स्त्रियों को सकुटुम्ब भोजन (चक्रांगयावदाचरेत् भी पाठ है) और देवता के आगे उनको दक्षिणा दे । फिर देवता का विसर्जन कर उस कलश के जल को नदी में डाल दे और कुटुम्ब सहित बुद्धिमान उसको देखे । शुभ दिन में कृत्य करे । जब तक सिद्धि न मिले तब तक यह कर्म करे । प्रति वर्ष ऐसा करने से दीर्घजीवी पुत्र की प्राप्ति होती है । कहीं प्रत्येक महीने करना भी लिखा है । 'ॐ ह्रीं फैं एकान्तीदेवतायै नमः' इस मन्त्र से पूजा तथा जप करे ।

प्राङ्मुखःकृत्तिका ऋक्षेवन्ध्या कर्कोटकीं हरेत् ।
तत्कन्दं पेषयेत्तौयैः कर्षमात्रं सदा पिबेत् ।
ऋतुकाले तु सप्ताहं दीर्घजीवी सुतो भवेत् ॥ १११ ॥

कृत्तिका नक्षत्र में पूर्व दिशा की ओर मुख कर वन्ध्या स्त्री कर्कोटकी को लाकर उसकी जड़ को जल से पीसकर एक कर्ष सदा पान करे । इस प्रकार सात दिन ऋतुकाल में करने से दीर्घजीवी पुत्र की प्राप्ति होती है ।

याबीजपूरद्रुममूलमेकं क्षीरेण सिद्धं हविषाविमिश्रम् ।

ऋतौ तु पीत्वा सुपतिम्प्रयाति दीर्घायुषं सा तनयं प्रसूते ।११२

जो बीजपूर की एक कर्ष जड़ को दूध में सिद्धकर हविष्यान्न मिलाकर ऋतु-काल में पान कर पति के निकट जाती है वह दीर्घायु पुत्र को उत्पन्न करती है ।

मञ्जिष्ठा मधुकं कुष्ठं त्रिफला शर्कराबला ।
मेदा पयस्या काकोलीमूलं चैवाश्वगन्धजम् ॥
अजमोदा हरिद्रे द्वे हिंगुः कुटुकरोहिणी ॥ ११३ ॥
उत्पलं कुमुदं द्राक्षा काकोल्यौ चन्दनद्वयम् ।
एतेषां कार्षिकैर्भागैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥ ११४ ॥
शतावरीरसं क्षीरं घृतं देयं चतुर्गुणम् ।
सर्पिरेतन्नरः पीत्वा नित्यं स्त्रीषु वृषायते ॥ ११५ ॥
पुत्राञ्जनयते नारी मेधावि प्रियदर्शनान् ।
याचैवास्थिरगर्भा स्याद्यानारी जनयेन्मृतम् ॥ ११६ ॥
अल्पायुषं वा जनयेद्या च कन्यां प्रसूयते ।
योनिदोषे रजोदोषे गर्भस्रावे च शस्यते ॥ ११७ ॥
प्रजावर्द्धनमायुष्यं सर्वग्रहनिवारणम् ।
नाम्नाफलं घृतं ह्येतद्रहस्यं परिकीर्तितम् ॥ ११८ ॥
जीवद्वत्सैकवर्णाया घृतमत्र तु दीयते ।
आरण्य गोमयेनात्र वह्नेज्वाला प्रदीयते ॥ ११९ ॥
(अत्रपयस्याक्षीरयुक्ता भूमिकूष्माण्डा उत्पलं नीलम्)

इति फलघृतम् ।

मजीठ, मुलेठी, कूठ, त्रिफला, मिश्री, खिरैंटी, महामेदा, क्षीरकाकोली, असगन्ध की मूली, अजमोदा, दोनों हलदी, हिंगु, कुटकी, नीलकमल, कुमुद, काकोली, दाख, क्षीरकाकोली, दोनों चन्दन यह सब एक-एक कर्ष लेकर एक सेर घी में पकावे और शतावरी का रस, दूध तथा घी चौगुना डाले । यह घृत पान करके मनुष्य रति में स्त्री से प्रबल होता है और स्त्री इसके सेवन से बुद्धिमान् पुत्रों को उत्पन्न करती है जो प्रिय दर्शन होते हैं । जिस स्त्री का गर्भ स्थिर हो गया हो, या जिसके मृतक सन्तान हो, या जिसके अल्पायु सन्तान होती हो, या जिसके कन्या ही होती हो, या जिसके योनि और रज में दोष हो, या जिसके गर्भस्राव होता हो उन सबके निमित्त यह प्रयोग उत्तम है । वैद्य इसमें लक्ष्मणा की जड़ भी डालते हैं । यह प्रजा को बढ़ाने वाला, आयुदाता और सब ग्रह का निवारण करने वाला फलघृत अश्विनीकुमारों ने कहा है । जीते बछड़े वाली और एक वर्ण वाली गाय का घी इसमें लेना

चाहिये। इसको अरण्य उपलों की आंच से बनाना और घृतमात्र शेष रहने पर उतार कर सेवन करना चाहिये।

इति फलघृत।

अथ गर्भस्रावरक्षा

अकस्मात्प्रथमेमासि गर्भे भवति वेदना।
गोक्षीरैः पेषयेत्तल्यं पद्मकोशीर चन्दनम् ॥ १२० ॥
पलमात्रं पिबेन्नारी त्र्यहाद्गर्भः स्थिरो भवेत्।
अथवा मधुकं दारु शाकवृक्षस्य बीजकम् ॥
सम्पिष्य क्षीरकाकोलीं पिबेत्क्षीरैस्तु गोभवैः ॥ १२१ ॥

कभी-कभी अकस्मात् पहले महीने में गर्भ में वेदना होती है, उस समय गाय के दूध में पद्माख, खस तथा लाल चन्दन एक पलमात्र तीन दिन पान करने से गर्भ स्थिर हो जाता है। अथवा मुलेठी, देवदारु, शाकवृक्ष के बीज और क्षीरकाकोली को पीसकर गाय के दूध से पान करना चाहिये।

द्वितीये। नीलोत्पलं मृणालं च यष्टीकर्कटशृंगिका।
गोक्षीरैस्तु द्वितीये च पीत्वा शाम्यन्ति वेदनाः ॥ १२२ ॥
अथवाश्वत्थवल्कं च तिलं कृष्णं शतावरीम्।
मञ्जिष्ठा सहितां पिष्ट्वा पिबेत्क्षीरैश्चतुर्गुणं ॥ १२३ ॥

दूसरे महीने में : नीलकमल की जड़, मुलेठी तथा काकड़ासींगी को बराबर लेकर गाय के दूध के साथ पीने से दूसरे महीने की वेदना शान्त हो जाती है। अथवा पीपल की छाल, काले तिल, शतावरी तथा मजीठ इनको बराबर लेकर पीसकर चौगुने दूध के साथ पीना चाहिये।

तृतीये। श्रीखण्डं तगरं कुष्ठं मृणालं पद्मकेशरम्।
पिबेच्छीतोदकैः पिष्टं तृतीये वेदनावती ॥ १२४ ॥
अथवाक्षीरकाकोलीं बलां पिष्ट्वा पयःपिबेत् ॥ १२५ ॥

तीसरे महीने में : चन्दन, तगर, कूट, मृणाल (कमल की जड़) तथा कमलकेशर यह ठण्ढे जल के साथ पीने से तीसरे महीने की वेदना शान्त हो जाती है। अथवा क्षीरकाकोली और सुगन्धवाला जल से पीना चाहिये।

चतुर्थे। नीलोत्पलं मृणालानि गोक्षुरं च कोरुकम्।
तुर्यमासे गवां क्षीरैः पिबेच्छाम्यति वेदना ॥ १२६ ॥
अथवा मधुकं रास्ना श्यामा ब्राह्मणयष्टिकाः।
अनन्तां पेषयित्वा तु गव्यक्षीरैश्च सम्पिबेत् ॥ १२७ ॥

चौथे महीने में : नीलोत्पल, कमल की जड़, गोखरू और कसेरू पीसकर दूध के साथ पीने से चौथे महीने की वेदना शान्त हो जाती है; अथवा मुलेठी, रास्ना, श्यामाक, ब्राह्मणयष्टि और अनन्तमूल इनको पीसकर गाय के दूध के साथ सेवन करने से चतुर्थ मास की वेदना शान्त हो जाती है।

पञ्चमे। पुनर्नवां सकाकोलीं तगरं नीलमुत्पलम्।
गोक्षुरं पञ्चमेमासे गर्भक्लेशहरं पिबेत्॥ १२८॥

पञ्चम मास में : पुनर्नवा, काकोली, तगर और नीलोत्पल यह लेकर गाय के दूध से पीने से पञ्चम मास की वेदना दूर होती है।

अथवा वृहतीयुग्मं यज्ञांगं कुङ्मलं वरम्।
गोघृतं क्षीरसंयुक्तं पिबेत्पिष्ट्वा च पञ्चमे॥ १२९॥

अथवा दोनों कटेरी, ब्राह्मणयष्टि और कमलनाल गाय के घी और दूध के साथ पञ्चम मास में सेवन करना चाहिये। 'कटुकत्वचं' भी पाठ है अर्थात् कुटकी और तज।

षष्ठे। सितां कपित्थमज्जां च शीततोयेन पेषयेत्।
षष्ठे मासिगवां क्षीरैः पिबेत्क्लेश निवृत्तये॥ १३०॥
अथवा गोक्षुरं शिग्रुमधुकं पृष्टिपर्णिकाम्।
बलायुक्तं पिबेत्पिष्ट्वा गोदुग्धैः षष्ठमासके॥ १३१॥

छठे महीने में मिश्री तथा कैथ का गूदा ठण्ढे जल के साथ पीसकर पीने या गाय के दूध के साथ पीने से वेदना शान्त होती है; अथवा गोखरू, सहिजना, मुलेठी, पृष्टिपर्णी और खिरैंटी इनको गाय के दूध से पीसकर छठे महीने में सेवना करना चाहिये।

सप्तमे कशेरुं पौष्करं मूलं शृङ्गाटं नीलमुत्पलम्।
पिष्ट्वा च सप्तमेमासि क्षीरैः पीत्वा प्रशाम्यति॥ १३२॥
अथवा मधुकं द्राक्षा शृङ्गाटश्च कशेरुकम्।
मृणालं शर्करायुक्तं क्षीरैः पेयं तु सप्तमे॥ १३३॥

कसेरू, पुष्करमूल, सिंघाड़ा तथा नीलोफर पीसकर दूध के साथ पीने से सातवें मास की व्यथा शान्त हो जाती है; अथवा मुलेठी, दाख, सिंघाड़ा, कशेरू और कमल की जड़ को मिश्री के साथ दूध में मिलाकर पान करना चाहिये।

अष्टमे। यष्टीपद्माक्षकं मुस्तं केशरं गजपिप्पलीम्।
नीलोत्पलं गवां क्षीरैः पिबेदष्टमासके॥ १३४॥
अथवा बिल्वमूलन्तु कपित्थं वृहतीफलम्।

इक्षुपटोलयोर्मूलमेभिः क्षीरं प्रसाधयेत् ॥ १३५ ॥
तत्क्षीरमम्भसा पीत्वा गर्भं शाम्यति वेदना ॥ १३६ ॥

आठवें महीने में मुलेठी पद्माख, मोथा, नागकेशर, गजपीपल और नीलोत्पल को गाय के दूध में पीना चाहिये। अथवा बेल की जड़, कैथ, दोनों कटेरी अर्थात् छोटी-बड़ी कटेरी, गन्ने का रस और पटोल की जड़ इन्हें दूध में सिद्ध करे। यह दूध जल से पीने से आठवें मास के गर्भ की पीड़ा शान्त हो जाती है।

नवमे। विशालाबीजकंकोलं मधुनासहपेषयेत्।
वेदना नवमेमासि शान्तिमाप्नोति नान्यथा ॥ १३७ ॥
अथवा मधुकं श्यामाह्यनन्ता क्षीरकाकुली।
एभि सिद्धं पिबेत्क्षीरं नवमे वेदनावती ॥ १३८ ॥

नौवें महीने में : इन्द्रायण के बीज तथा क्षीरकाकोली (शीतल चीनी) शहद के साथ पीने से नौवें महीने की व्यथा शान्त हो जाती है; अथवा मुलेठी गुडूची, अनन्तमूल तथा प्रियंगु इनसे सिद्धकर नौवें महीने में दूध पीने से वेदना शान्त होती है।

दशमे। शर्करागोस्तनीद्राक्षा सक्षौद्रं नीलमुत्पलम्।
पाययेद्दशमेमासि गवा क्षीरैः प्रशान्तये ॥ १३९ ॥
अथवा शुण्ठि संसिद्धं गोक्षीरं दशमेपिबेत्।
अथवा मधुकं दारुशुण्ठी क्षीरेण संपिबेत् ॥ १४० ॥

दसवें महीने में : मिश्री, मुनक्का, शहद तथा नीलकमल यह गाय के दूध से दसवें महीने में पान करने से वेदना शान्त होती है; अथवा सोंठ से सिद्धकर गाय का दूध दसवें महीने में पान करने से; अथवा मुलेठी, देवदारु तथा सोंठ गाय के दूध से पीने से वेदना शान्त होती है।

सामान्ये। धात्र्यंजनं सावरयष्टिकाख्यं त्र्यहं निपीतं प्रमदाहठेन।
सप्ताहमात्रं विनियोज्यनारी स्तभ्नाति गर्भं चलितं न चित्रम् ॥१४१॥

सामान्यतया जो नारी लोध (या अमला), सौवीराञ्जन तथा मुलेठी सात दिन सावधान होकर पीती है उसका गर्भ स्तम्भित होता है, फिर चलायमान नहीं होता; अथवा धनियां, रसौत, लोध और मुलेठी पीना चाहिये।

क्षौद्रं वृषं चन्दनसिन्धुजातं महेन्द्रमाज्यं पयसा सुपिष्टम्।
गर्भं क्षरंतं प्रतिहन्ति शीघ्रं योगोयमुक्तः किलमूलदेवैः॥१४२॥

शहद, अडूसा, चन्दन, सेंधानमक, इन्द्रजौ और घृत यह जल से पीसकर देने से क्षरित होता हुआ गर्भ शीघ्र थम जाता है। यह योग मूलदेव ने कहा है।

कुलालहस्तोद्भवकर्दमस्यवत्सीपयः क्षौद्रयुतस्य मात्रम् ।
गर्भच्युतिं शूलमयीं निवार्यकरोतिगर्भं प्रकृतं हठेन ॥ १४३ ॥

कुम्हार के चाक पर बर्तन बनाते समय जो पतली मिट्टी हाथ में लगती है उसको लेकर बकरी के दूध में डालकर शहद के साथ पीने से वह शूलयुक्त गर्भ के गिरने का निवारण करती है और उसे स्थापित करती है।

कशेरु शृङ्गाटकजीरकाणि पयोधनैरंड शतावरीभिः ।
सिद्धंपयः शर्करयाविमिश्रं संस्थापयेद्गर्भमुदीत्य शूलम् ॥१४४॥

कशेरु, सिंघाड़ा, जीरा, नागरमोथा, एरण्ड और शतावरी इनसे सिद्ध किया जल मिश्री डालने से शूल निवारण करता है और गर्भ को गिरने से रोकता है।

कन्दः कौमुदकस्य माक्षिकयुतं क्षीराज्यमिश्रं
पिबेत्सप्ताहं सितयासुपक्वं सबला शीतीकृतं वायुना ।
गर्भस्रावमरोचकं सपवनं शोफं त्रिदोषं वमिं शूल
सर्वविधं निहन्ति नियमादेवं च यत्तत्स्मृतम् ॥ १४५ ॥

कुमुद का कन्द, शहद, घी और दूध मिलाकर पीने से अर्थात् इसमें मिश्री डालकर ठण्डाकर सात दिन नियम से पीने से गर्भस्राव, अरोचकता, वातरोग, सूजन, त्रिदोष, चमचमाहट और शूल यह सब नष्ट हो जाते हैं।

ह्रीबेरातिविषामुस्ता[1]मरिचं संभृतं जलम् ।
दद्याद्गर्भे प्रचलिते प्रदरे कुक्षिरूग्यपि ॥ १४६ ॥

ह्रीबेर, अतीस, मोथा, मोचरस, कुटज और जौ इनका क्वाथ बनाकर गिरते हुए गर्भ में देने से प्रदर तथा कोखरोग में देने से शूलादि नष्ट हो जाते है।

कुवलयकन्दं सतिलं पीत्वा क्षीरेण मधुसितायुक्तम् ।
गुरुतर दोषैश्चलितं गर्भं संस्थापयेदाशु ॥ १४७ ॥

कमल का कन्द और काले तिल को शहद-मिश्रीयुक्त दूध के साथ पीने से यह गुरुदोष से गिरते हुए गर्भ का भी शीघ्र स्तम्भन करता है।

नीलोत्पल मृणालानि मधुकं शर्करातिलाः ।
द्रवमानेषु गर्भेषु गर्भेस्थापनमुत्तमम् ॥ १४८ ॥

नील कमल की नाल, मुलेठी, मिश्री और बड़ी कटेरी यह गर्भस्राव का स्थापन करता है।

इति गर्भस्रावरक्षा ।

---

१ 'मोषशक्रैः श्रृतंजलम्' यह भी पाठ है। कदली कुटजवृक्ष।

अथ गर्भशुष्के

गोक्षीरं शर्करायुक्तं गर्भशुष्क प्रशान्तये ।
पिबेद्वा मधुकं चूर्णं गम्भारीफल चूर्णकम् ॥
समांश गव्यदुग्धेन गुर्विणी तत्प्रशान्तये ॥ १४९ ॥
इति गर्भशुष्क निवारणम् ।

गर्भशुष्क शान्ति : शर्करा के साथ गाय का दूध सेवन करने स शुष्कगर्भ की शान्ति होती है; अथवा गम्भारी के फल का चूर्ण या मुलेठी का चूर्ण शहद के साथ पान करने से; अथवा जिसका गर्भ सूखता हो ऐसी गर्भिणी स्त्री द्वारा गाय का दूध सेवन करने से लाभ होता है ।

इति गर्भशुष्कनिवारण ।

अथ सूतिकानिरोध सुखप्रसवमाह

श्वेत पुनर्नवा मूलचूर्णं योनौप्रवेशयेत् ।
क्षणात्प्रसूयते नारीगर्भेणाति प्रपीडिता ॥ १५० ॥

सुख से प्रसव होने की विधि : श्वेत पुनर्नवा की जड़ का चूर्ण स्त्री की योनि में प्रवेश करने से तत्काल प्रसव होता है और गर्भ की पीड़ा नहीं होती ।

उत्तराभिमुखं ग्राह्यं श्वेतगुञ्जीय मूलकम् ।
कट्यां बद्ध्वा विमुक्तश्च गर्भपुत्रं तु तत्क्षणात् ॥ १५१ ॥
वासकस्य तु मूलन्तु चोत्तरस्थः समुद्धरेत् ।
कट्यां बद्ध्वा सप्तसूत्रैः सुखं नारीप्रसूयते ॥ १५२ ॥

उत्तर को ओर मुख कर श्वेत चोटली की जड़ ग्रहण करके कमर में बाँधने से सन्तान सुख से प्रसव होती है । अडूसे की जड़ को उत्तर मुख ग्रहण कर उसे कच्चे सात सूत से कमर में बाँधने से भी स्त्री सुख से प्रसववती होती है । यहाँ उत्तर मुखी जड़ लेनी चाहिये ।

उत्तरे च समालोड्यं श्वेतगुञ्जाफलं कियत् ।
सुखप्रसवमाप्नोति तत्क्षणान्नात्र संशयः ॥ १५३ ॥

अथवा उत्तर की ओर का श्वेत चौंटली का फल केशों में बाँधने से सुख से प्रसव होता है इसमें सन्देह नहीं ।

योनिं वा लेपयेत्तेन सा सुखेन प्रसूयते ।
सहदेव्याश्वमूलं वा कटिस्थं प्रसवेत्सुखम् ॥ १५४ ।

अथवा उक्त योग को योनि में लेप करने से सुख से सन्तान उत्पन्न होती

है। अथवा सहदेई तथा खिरैंटी की जड़ कमर में बाँधने से स्त्री को सुख से बालक उत्पन्न होता है।

अपामार्गस्य मूलन्तु ग्राहयेच्चतुरंगुलम्।
नारीप्रवेशयेद्योनौ तत्क्षणात्साप्रसूयते ॥ १५५ ॥

चिरचिटे की जड़ चार अंगुल की ग्रहण कर योनि में रखने से स्त्री सुख से बालक उत्पन्न करती है।

तोयेन लाङ्गली कन्दं घृष्ट्वा योनिं प्रलेपयेत्।
नाभिं च लेपयेत्तेन तत्क्षणात्सूयते ध्रुवम् ॥ १५६ ॥

अथवा नारियल या कलिहारी की जड़ घिसकर योनि में अथवा नाभि में प्रलेप करने से बहुत शीघ्र सन्तान होती है।

गुञ्जाफलार्द्धखण्डं च तोययुगं तथार्द्धकम्।
पिबेद्वा तोयपिष्टं च सासुखेन प्रसूयते ॥ १५७ ॥

चौंटली आधे पल, खाण्ड आधे पल और सुपारी इनको जल के साथ पीसकर पीने से सुख से स्त्री प्रसव करती है।

गुञ्जातरोर्मूलयुगं विधानादुत्पाट्य पुष्ये च रवौ निबद्धम्।
कटीतले मूर्द्धनि नीलसूत्रैः शीघ्रं प्रसूति कुरुतेऽङ्गनाया॥१५८॥

चौंटली की जड़ और चौंटली यह विधिपूर्वक रविवार के दिन पुष्य नक्षत्र में लाकर उसे कमर के नीचे या शिर में नीलसूत्र में बाँधने से स्त्री शीघ्र प्रसव करती है।

आगारधूमं गृहवारिणा वा पीत्वा बालाशीघ्रतरं प्रसूते।
अलम्बुषामूलमथोनिबद्धं योगद्वयं भूपतिरित्यवादीत् ॥१५९॥
समातुलुङ्गं मधुकस्य चूर्णं मद्ध्वाज्यमिश्रं प्रमदानिपीय।
व्यथाविहीनं प्रसवं हठेन प्राप्नोति नैवात्र विकल्पबुद्धि ॥१६०॥
(अत्रमातुलुङ्गस्यमूलं योज्यं न तु फलं क्वाथयित्वा पेयम्)

गृह का धूम जल के साथ पीने से स्त्री शीघ्र प्रसव करती है; अथवा लज्जालू की जड़ कमर में बाँधने से शीघ्र प्रसव होता है ऐसा राजा ने कहा है। मातुलुङ्ग (नींबू) और मुलेठी का चूर्ण शहद तथा घी से मिलाकर स्त्री पान करे तो उसे व्यथा के बिना ही सुख से सन्तान होती है इसमें सन्देह नहीं। मातुलिङ्गी की जड़ ग्रणह करनी चाहिये फल नहीं और क्वाथ करके पीना चाहिये।

दशमूलीघृतं तोयं घृतसैन्धव संयुतम्।
शूलातुरा पिबेन्नारी सासुखेन प्रसूयते ॥ १६१ ॥

दलमूल का काढा, घृत और सैंधव के साथ पिलाने से शूल से व्याकुल. स्त्री सुख से प्रसववती होती है।

'ॐमन्मथ ॐमन्मथ ॐमन्मथ मन्मथवाहिनि लम्बोदरमुञ्च मुञ्च स्वाहा'।
अनेन मन्त्रेणजलं सुतप्तं पातुं प्रदेयं शुचिनानरेण।
तोयाभि पानात्खलु गर्भवत्या प्रसूयते शीघ्रतरं सुखेन ॥ १६२ ॥

ॐ मन्मथ ॐ मन्मथ ॐ मन्मथ मन्मथवाहिनि लम्बोदर मुञ्च मुञ्च स्वाहा' इस मन्त्र से पवित्र होकर गरम कर स्त्री को जल पिलाना चाहिये। इस जल के पान करने से स्त्री सुखप्रसूति होती है।

ॐ कारं च हकारं च अकारेण सुपूजितम्।
ॐ कारे शिरसंकृत्वा अन्तेनमस्त्रिमूर्तये।
ॐ अं हांनमस्त्रिमूर्तये ॥ १६३ ॥

ॐ कार हकार अकार से युक्त कर अंकार शिर पर कर अन्त में त्रिमूर्तये-नमः लगावे। 'अं ॐ हां नमस्त्रिमूर्तये' यह मन्त्र है।

अनेनैव तु मन्त्रेण जप्तव्यं सूतिकागृहे।
सुखं प्रसवमाप्नोति सापुत्रं लभते ध्रुवम् ॥ १६४ ॥

इति सुखप्रसवविधि।

इस मन्त्र को प्रसूतिका के घर में जपने से वह सुख से प्रसववती होती है और सुपुत्र को प्राप्त करती है

इति सुखप्रसवविधि।

अथ बालानां सूतिकायाश्च भूतग्रह निवारणम्

बिल्वमूलं देवदारुं गोशृङ्गं[1] च प्रियंगु च।
मार्जारस्यमलं कुष्ठं वंशत्वगाजमूत्रकैः ॥ १६५ ॥
पिष्ट्वा धूपोनिहन्त्याशु ग्रहभूतज्वरादयः।
डाकिनी राक्षसाः प्रेताः पिशाचाः ब्रह्मराक्षसाः ॥ १६६ ॥
ऐकाहिकोद्व्याहिकश्च ज्वरो नश्यति तत्क्षणात्।

बालाओं के सूतिका ग्रह का निवारण : बेल की जड़, देवदारु, बबूल, प्रियंगु के फूल, रक्तचीते की जड़, बिल्ली का मल, कूठ और बांस की छाल यह सब वस्तु बकरे के मूत्र में पीसकर धूप देने से ग्रह, भूतज्वर, डाकिनी, राक्षस, प्रेत, पिशाच तथा ब्रह्मराक्षस तथा एकांतरा और तिजारी दूर होते हैं।

---

१ गोःशृङ्गमिति वा पाठः।

'ॐ द्रावितं तापे ठं ठः स्वाहा' अनेन धूपं दद्यात् ।

श्रीवासं सर्षपं कुष्ठं वचा तैलं घृतं वसा ॥

धूपो बालग्रहे देयो बालानां ग्रहशान्तये ॥ १६७ ॥

'ॐ द्रावितं तापे ठंठः स्वाहा' इस मन्त्र से धूप देना चाहिये । चन्दन, सरसों, कूठ, वच, तेल, घी और चरबी इनकी धूप बालकों को ग्रहशान्ति के निमित्त देना चाहिये ।

शिरीषनिम्बयोः पत्रं गोभृङ्गस्य त्वचावचः ।

वंशत्वक्शिखिपिच्छं च कंगुना च समं घृतम् ॥ १६८ ॥

धूपो बालग्रहान्हन्ति स्वयं मन्त्रेण मन्त्रयेत् ॥ १६९ ॥

शिरस, नीम के पत्ते, गाय के सींग की त्वचा, वच, वंश की छाल, मोरपङ्ख, मालकांगनी और उसी के समान भाग घृत यह सब एकत्र कर मन्त्र पढ़कर इनकी धूप देने से बालग्रह दूर होते हैं ।

ॐ द्रुतं मुञ्च मुञ्च उड्डामरेश्वर आज्ञापयति स्वाहा ।

धूपत्रयाणामेषमन्त्रः ।

'ॐ द्रुतं मुञ्च मुञ्च उड्डामरेश्वर आज्ञापयति स्वाहा' यह उक्त तीनों धूप देने के मन्त्र हैं ।

पुनर्नवा निम्बपत्र सर्षपघृतविरचितो धूपः ।

गर्भिण्या बालानां सततं रक्षाकरः कथितः ॥ १७० ॥

पुनर्नवा, नीम के पत्ते, सरसों और घी इनकी धूप मन्त्र पढ़कर देने से गर्भिणी और बालकों की रक्षा होती है ।

दाडिमस्य तु वन्दाकं ज्येष्ठा ऋक्षेसमुद्धरेत् ।

द्वारे बद्धं तु बालानां सर्वग्रह निवारणम् ॥ १७१ ॥

ज्येष्ठा नक्षत्र में दाडिम का वन्दा लाकर उसे बालकों के घर के द्वार पर बाँधने से सब ग्रहों का निवारण होता है ।

पुष्यार्के श्वेतगुञ्जायामूलमुद्धृत्य धारयेत् ।

बालानां कण्ठदेशे च डाकिनी भयनाशनम् ॥ १७२ ॥

रविवार को पुष्यनक्षत्र में श्वेत चौंटली की जड़ धारण कराने से अर्थात् बालकों के कण्ठ में बांधने से डाकिनी के भय का नाश हो जाता है ।

श्वेतापराजितापत्रं जयापत्रं द्वयोरसम् ।

नस्यं कुर्यात्पलायन्ते डाकिनी दानवादयः ॥ १७३ ॥

श्वेत विष्णुक्रान्ता के पत्ते और गुडहल (जयन्ती) के पत्ते इन दोनों के रस का हुलास देने से डाकिनी, दानवादि पलायन कर जाते हैं ।

सर्पत्वकशिखिजारिष्ट पल्लवं रजनीवचा ।
रसोनं हिंगुगोलोम शृङ्गीमरिच माक्षिकैः ॥ १७४ ॥
धूपः सर्वज्वरघ्नोऽयं कुमाराणां ज्वरापहः ।

साँप की कैंचली, सीसम और नीम के पत्ते, हलदी, वच, लहसुन, हींग, गाय के लोम (बाल), काकड़ासिंगी, काली मिर्च, और शहद इनकी धूप सम्पूर्ण ज्वर तथा कुमारों का ज्वर हरने वाली है ।

छुन्छुन्दरीमलं मांसं हरिद्राबिल्वपत्रकम् ॥ १७५ ॥
इन्द्रजं सर्षपं पत्रं धूपेन तत्प्रयोजितम् ।
निहन्तिरोदनं रात्रौ बालस्याशु न संशयः ॥ १७६ ॥

छछुन्दर का मल और मांस, हलदी, बेलपत्र, इन्द्रजौ, सरसों तथा तेजपात इनकी धूप देने से रात में बालक का रोना थम जाता है । इसमें सन्देह नहीं ।

मत्स्यराजस्य पित्तेन मरिचं भावयेद्बुधः ।
रविवारे रौद्रशुष्कमज्ञनात्सर्वभूतहृत् ॥ १७७ ॥

मत्स्यराज के पित्त में काली मिर्च की भावना देकर रविवार के दिन उसको सुखाकर धूप देने से ग्रह दूर होते हैं ।

नरसिंहस्य मन्त्रेण स कृदुच्चरितं हरेत् ।
डाकिनी ग्रहभूतानितमः सूर्योदये यथा ॥ १७८ ॥

नृसिंह का मन्त्र पढ़कर यह कर्म करने से डाकिनी, ग्रह और भूतादि ऐसे भाग जाते हैं जैसे सूर्य के उदय से अन्धकार भाग जाता है :

'ॐ नरसिंहाय हिरण्यकशिपु वक्षःस्थल विदारणायत्रिभुवनव्यापकाय-भूतप्रेतपिशाचडाकिनी कुलोन्मूलनायस्तम्भोद्भवाय समस्तदोषान्हर-हरविसर विसर पच पच हन हन कम्पय कम्पय मथ मथ ह्रीं ह्रीं ह्रीं फट् फट ठः ठः ठः एहि एहि रुद्रआज्ञापयति स्वाहा' ।

'ॐ नरसिंहाय हिरण्यकशिपुवक्षःस्थलविदारणाय त्रिभुवनव्यापकाय भूतप्रेत पिशाचडाकिनीकुलोन्मूलनाय स्तम्भोद्भवाय समस्तदोषान् हर हर विसर विसर पच पच हन हन कम्पय कम्पय मथ मथ ह्रीं ह्रीं ह्रीं फट् फट् ठः ठः ठः एहि एहि रुद्र आज्ञापयति स्वाहा' । यह नृसिंह मन्त्र है ।

अथ नरसिंहमन्त्रः

'ॐ ह्रीं ह्रीं ह्रीं हूं हूं हूं फट् स्वाहा' । अनेन सर्षपमभिमन्त्रितं कृत्वा रोगिणं प्रहारयेत् ॥ तदासर्वे ग्रहाः पलायन्ते बालग्रहाभिभूतानां बलिं यत्नेन कल्पयेत् ।

शुचिपक्त्वा तु सप्ताहं मत्स्यं मांसं सुरां फलम् ॥ १७९ ॥
पुष्पधूपाक्षतं गन्धं दीपं च दक्षिणादिकम् ।
चतुष्पथे क्षिपेद्रात्रौ शुद्धे नूतन खर्परे ।
शनौवाकुजवारेवा बाल दोषोपशान्तये ॥ १८० ॥
'ॐ सर्वभूतोभ्यो बलिगृह्ण गृह्ण स्वाहा' ।
इति बलिदानमन्त्रः ।
इति बालकानां सर्वग्रह निवारणम् ।

नरसिंह मन्त्र : 'ॐ ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रूं ह्रूं ह्रूं फट् स्वाहा' इस मन्त्र से सरसों पढ़कर मारने और ताली बजाने से सम्पूर्ण ग्रह भाग जाते हैं। जब बालकों को ग्रह आकर्षित कर ले तो यत्न से उसकी बलि कल्पित करे। सात दिन पर्यन्त पवित्र होकर मत्स्य, मांस, सुरा, फल, पुष्प, धूप, अक्षत, गन्ध, दीप और दक्षिणा यह सब वस्तु रात्रि में शुद्ध और नई लेकर सकोरे में शनिवार या मङ्गल को चौराहे पर रख आवे और यह मन्त्र पढ़ दे, 'ॐ सर्वभूतेभ्यो बलि गृह्ण गृह्ण स्वाहा'। यहाँ चित्र ११२, ११३ का यन्त्र बाँधे।

इति बलिदानमन्त्रः ।
इति बालानांसर्वग्रहनिवारणम् ।

अथ गर्भस्थ बालस्याहितुण्डिकादि निवारणम्

चन्द्रग्रस्ते शिखीमूलं विधानेनोद्धरेद्बुधः ।
बद्धं गले च जघने बालोहितुण्डिकां जयेत् ॥ १८१ ॥

गर्भवती के बालक का अहितुण्डिकादि निवारण करना : चन्द्रग्रहण में कलिहारी की जड़ विधिपूर्वक लाकर उसको बालक के गले में बाँधने से अहितुण्डिका दूर होती है।

श्वेतार्कमूलं संगृह्य गृहस्तम्भे च बन्धयेत् ।
पुष्यार्के वा रवेर्वारे बालोहितुण्डिकां जयेत् ॥ १८२ ॥

पुष्यनक्षत्रयुक्त रविवार में या रविवार के दिन श्वेत आक की जड़ लाकर बाँधने से बालक का अहितुण्डकारोग दूर होता है।

उदुम्बरभवं मूलं शिशुकट्यां च बन्धयेत् ।
बृहत्कूष्माण्डवृत्तंवा तेनाहितुण्डिकां जयेत् ॥ १८३ ॥
इति बालकानामहितुण्डिकानाशनम् ।

गूलर की जड़ लाकर बालक की कमर में बाँधने अथवा बड़े पेठे की डण्ठल बाँधने से अहितुण्डिका रोग दूर होता है।

इति बालकानामहितुण्डिकानाशनम् ।

अथ स्त्रीणां पुष्परक्षा

पलाशराजादनयोः फलानि पुष्पाण्यथो शाल्मलिपादपस्य ।
आज्येन मासार्द्धदिनं पिबन्ति रक्षाभवेन्निश्चितमेव पुष्पे ॥ १८४ ॥

स्त्रियों के पुष्प की रक्षा : ढाक और क्षीरी वृक्ष के फल और सेमल के फूल इन्हें घी के साथ पन्द्रह दिन पान करने से निश्चय ही स्त्री के पुष्प की रक्षा होती है ।

तुषाम्बुना पावकवृक्षमूलं निक्वाथयित्वा नियमं चरन्ती ।
ऋत्वन्तकाले त्रिदिनं पुरंध्री रक्षाभवेदामरणान्तमेव ॥ १८५ ॥

तुष के जल से चीते की जड़ लेकर नियम से काढा कर पीने, नियम से रहने और ऋतु के अन्त में तीन दिन पान करने से जन्मपर्यन्त स्त्री के आर्तव की रक्षा होती है । कहीं ऋतु समय में भी पीना कहा है ।

फलं कदम्बस्य च माक्षिकानि तुषोदकेन त्रिदिनं सकृद्वा ।
स्नानावसाने नियमेन पीत्वा रक्षामवश्यं कुरुते हठेन ॥ १८६ ॥

कदम्ब के फल और सोनामाखी यह तीन दिन तुष के जल से पीसकर स्नान के अन्त में नियम से सेवन करने से ऋतु की रक्षा होती है ।

त्रैहायनं वा गुडमत्ति नित्यं पलप्रमाणं वनिताऽर्द्धमासम् ।
जीवान्तिकं निश्चितमेव नश्येत् वन्ध्यात्वमुक्तं कविपुङ्गवेन ॥

अथवा जो स्त्री पन्द्रह दिन नित्य तीन वर्ष के गुड़ का चार तोला प्रमाण सेवन करती है वह वन्ध्यत्वा से मुक्त हो जाती है। कविपुङ्गवों ने ऐसा कहा है ।

कर्षद्वयं राक्षसवृक्षबीजं सप्ताहमात्रं सितशालिधान्यम् ।
ऋतौ निपीतं मृगशावकाक्ष्या रक्षार्थमेतन्नियतं प्रदिष्टम् ॥

इति स्त्रीपुष्परक्षा ।

दो कर्ष राक्षस वृक्ष के बीज तथा शालिधान्य को ऋतु के अन्त में सात दिन तक पान करने से अवश्य पुष्प की रक्षा होती है ।

इति स्त्रीपुष्परक्षा ।

अथ दुर्भगाकरणम्

ज्येष्ठानक्षत्रे निम्बवन्दाकं यस्य अङ्गे दीयते सा दुर्भगा भवति ।
इतिदुर्भगाकरणम् ॥ १८९ ॥

दुर्भगाकरणम् : ज्येष्ठानक्षत्र में नीम का वन्दा जिसके अङ्ग पर डाला जाय वह दुर्भगा होती है ।

इति दुर्भगाकरम् ।

अथ कलहकरणम्

विशाखानक्षत्रे निम्ववृक्षस्योत्तरमूलं विवस्त्रो विमुखीभूय
उत्पाट्य मुखेन यस्य चाले प्रक्षिपेत्तस्य गृहे प्रत्यहं कलहो भवति
शाखोटमूलं पत्रं च एकीकृत्य स्थापयेत्तथा ॥ १९० ॥
दूरे कृते तु तद्वृक्षेभद्रं भवति ।

विशाखा नक्षत्र में नीम के पेड़ की उत्तर गामी जड़ को नग्न होकर मुख से उखाड़े। जिसके यहाँ उसे फेंक दे प्रतिदिन उसके यहाँ कलह होता है। सिहोरे की जड़ और पत्ते मिलाकर रखने से भी कलह होता है और उसे दूर करने से कलह दूर होता है।

तन्नक्षत्रे शाखोट बदरीबीजद्वयमेकीकृत्य यस्य
गृहे स्थापयेत्तस्य नित्यं कलहो भवति ।

विशाखानक्षत्र में शाखोट और बेर की दो गुठली एकत्र कर जिस घर में डाले वहाँ नित्य क्लेश होता है।

ब्रह्मदण्डीं समूला च काकमाची समन्विताम् ।
जाती पुष्परसैः पिष्ट्वा सप्तरात्रं पुनः पुनः ॥ १९१ ॥
एषधूपः प्रदातव्यः शत्रुगोत्रस्य मध्यतः ।
यथागोत्रं समाघ्राति पितापुत्रैः समं कलिः ॥ १९२ ॥

जल सहित ब्रह्मदण्डी, काकमाची (मकोय) को जाती के फूलों के रस में सात रात तक बारम्बार पीसे। यह धूप शत्रु के गोत्र में देनेसे सूंघते ही पिता-पुत्र में क्लेश होता है।

इति कलहकरणम् ।

इति श्रीनित्यनाथविरचिते कामरत्ने भाषाटीकायां षण्ढीकरणादि
कलहकरणान्तं नामाष्टमोपदेशः ॥ ८ ॥

अथोच्चाटनम्

मङ्गलवारे रात्रौ श्मशानाङ्गारं कृष्णवस्त्रेण कृत्वा रक्तसूत्रेण संवेष्ट्य यस्य गृहे परिक्षिपेत्सप्ताहाभ्यन्तरे तस्योच्चाटनं भवति। पञ्चांगुलं चित्रकस्य कीलं ग्राह्यं पुनर्वसौ। सप्ताभिमन्त्रितं गेहे खनेदुच्चाटनं भवेत्। 'ॐ लोहितमुखे स्वाहा' ॥ अस्य अष्टोत्तर सहस्र जपेन पुरश्चरणम्। भरण्यामंगुलैकन्तु उलूकस्यास्थि कीलकम्॥ सप्ताभिमन्त्रितं यस्य निखनेदुच्चाटनं भवेत्। ॐ दहदह हलहल स्वाहा' ॥ काकोलूकस्य पक्षांस्तु हुत्वा ह्यष्टोत्तरं शतम्। यन्नाम्ना मन्त्रयोगेन समस्तोच्चाटनं भवेत् ॥ 'ॐ नमो भगवते रुद्राय दंष्ट्रा करालाय अमुकं सपुत्रबान्धवैः सह हन हन दह दह पच पच शीघ्रं उच्चाटय उच्चाटय हुं फट् स्वाहा ठः ठः' लेपयेत्काकपित्तेन कीलमंगुलसम्भवम्। निखनेद्यस्य भवने तस्योच्चाटनं भवेत् ॥ 'ॐ ह्रीं दण्डिन् दण्डिन् महादण्डिन्नमोस्तु ते ठः ठः'।

उच्चाटन : मंगल के दिन रात को श्मशान से काले वस्त्र में अङ्गार लाकर लाल सूत में लपेट कर जिसके घर में डाले उसका सात दिन में उच्चाटन हो जायगा।

पुनर्वसु नक्षत्र में चित्रक (अण्ड) की पाँच अंगुल की कील ग्रहण करे। सात बार मन्त्र पढ़कर घर में डाल देने से उच्चाटन हो जायगा। 'ॐ लोहित मुखे स्वाहा' इस मन्त्र का १००८ जप का पुरश्चरण करे।

भरणी नक्षत्र में एक अंगुल उल्लू की अस्थि लेकर सात बार मन्त्र पढ़कर जिसके यहाँ गाड़ दे उसका उच्चाटन हो जाता है। यह मन्त्र पढ़े : 'ॐ दह दह हन हन'।

कौए और उल्लू के एक सौ आठ पंख लेकर जिसके नाम से मन्त्र पढ़कर हवन करे उसका अवश्य उच्चाटन होगा। मन्त्र यह है 'ॐ नमो भगवते रुद्राय दंष्ट्राकरालाय अमुकं सपुत्र बाँधवैः सह हन हन दह दह पच पच शीघ्रं उच्चाटय उच्चाटय हूं फट् स्वाहा ठः ठः'।

कौए के पित्त से एक अंगुल कील को लिप्त करे और उसे लिखकर जिसके द्वार पर डाल दे उसका उच्चाटन हो जाता है। मन्त्र यह है : 'ॐ ह्रीं दण्डिन् दण्डिन् महादण्डिन् नमोऽस्तु ते ठः ठः'।

उच्चारण करे। मन्त्र यह है : 'ॐ ह्रीं छ्रीं ठ्रीं थ्रीं फ्रीं ह्रीं (शुद्ध)। हे मुने ! इस मन्त्र का माहात्म्य जो सदा उच्चारण करते हैं उनके सब अरिष्ट नष्ट हो जाते हैं। जो हाथ में लाल फूल की माला लेकर इसका उच्चारण करते हैं और सौ बार अभिमन्त्रित कर देवी को चढ़ाते हैं उनको जन्मपर्यन्त शुभ होता है, अर्थात् दिन-दिन अर्थलाभ होता है। इसे लिखकर स्थापन करने से घर में अरिष्ट नहीं होता है।

अक्षराणामन्त्यवर्णं लिखित्वा पञ्चधाऽनघे।
अधोरेफसमायुक्तमोंकार शिरसं तथा ॥ ८ ॥
हकारेण च सम्पूज्यमन्ते फडक्षरं स्मृतम्।
ईकारेण च सम्पूज्य अन्ते फडक्षरान्वितम् ॥
'ॐ क्ष्रीं ५ फट्'। मन्त्रोऽयं ममरूपस्य ध्यानं जापं तथैव च ॥
ममैव हृदय तस्य सदातद्गतमानसः ॥ ९ ॥
सदास्यात्तद्गृहे क्षेमं सहस्रार्द्धस्य जापनात्।
त्रैलोक्ये तत्समो नास्ति नित्यं फलमवाप्नुयात् ॥ १० ॥
नित्यं सम्पद्यते राज्ञा पत्न्या पुत्रेण बान्धवैः।
ज्ञातिभिः सज्जनैश्चापि शत्रुभिश्च विशेषतः ॥ ११ ॥

अक्षरों के अन्त्य वर्णों को पञ्चविधि से करके नीचे रेफ लगाकर ईकार युक्तकर अन्त में फट् लगावे और ॐकार सहित उच्चारण करे। 'क्ष्रीं ५ फट्' यह मन्त्र है। मेरे ही रूप का ध्यान और जप करे और तद्गतमन होकर मुझ में ही अपना मन लगावे। इस मन्त्र का पाँच सौ जप करने से साधक के घर में सदा आरोग्यता रहती है। इसके समान त्रिलोकी में कुछ नहीं है। यह नित्य फल का देने वाला है। इससे राजा, स्त्री, पुत्र, बान्धवों के सहित नित्य सम्पत्तिवान् होता है तथा ज्ञाति, सज्जन और शत्रु सब की दृष्टि में विशेष हो जाता है।

जन्मान्तरे सुखीप्राणी शृणुदेवि महाफलम्।
अन्तद्वयं समागृह्य अधोरेफसमन्वितम् ॥ १२ ॥
ॐ कार संयुतं कृत्वा रेखाबिन्दु समायुतम् ॥ १३ ॥

जन्मान्तर में भी प्राणी जिससे सुखी होता है हे देवि ! उसका महाफल सुनो। दो अन्त के अक्षर ग्रहण कर उसमें रेफ लगावे। ॐकार संयुक्त करके रेखाबिन्दु के सहित मन्त्रोद्धार करे। मन्त्र यह है : ॐ क्ष्रीं क्ष्रीं।

अनेनैव तु मन्त्रेण ये जपन्ति महाजनाः।
ते सर्वे शान्तिमायान्ति सततं तस्य जापनात् ॥ १४ ॥

'ॐ क्ष्रौं क्ष्रौं' इस मन्त्र को जो महाजन जप करते हैं वे निरन्तर इसके जप के फल से शान्ति को प्राप्त होते हैं।

श्वेतार्कमूलं पुष्यार्के समुद्धृत्य विधारयेत् ।
बाहुभ्यां व्याधयोनस्युस्त्वरिष्टानि विशेषत ॥ १५ ॥
तद्दर्शनेन नश्यन्ति डाकिनी प्रेतदानवादयः ।
तद्धूपेन पलायन्ते प्रेताद्या दूरतो ध्रुवम् ॥ १६ ॥

रविवार को पुष्यनक्षत्र में श्वेत आक की जड़ लाकर उसको भुजा में बाँधने से व्याधि और अरिष्ट नहीं होता है। उसके दर्शन से ही डाकिनी अथवा दानव आदि नष्ट होते हैं और उसकी धूप से प्रेतादि दूर से भाग जाते हैं।

पूर्वाभाद्रपदे ऋक्षे वन्दाकन्तु शिरीषजम् ।
संगृह्य शिरसि क्षिप्रेह्यभयं भवति ध्रुवम् ॥ १७ ॥

पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र में शिरस का वन्दा लाकर उसको शिर पर रखने से निश्चय ही अभय प्राप्त होता है।

विष्णुक्रान्ताभवं मूलं हस्तस्थं चौरभीतिजित् ।

विष्णुक्रान्ता की जड़ हाथ में स्थित रखने से चोर का भय नहीं होता।

नरसिंहस्य मन्त्रेण सकृदुच्चरिते हरेत् ॥ १८ ॥
'डाकिनीग्रहभूतानि तमः सूर्योदये यथा ।
नरसिंह मन्त्रः पुराबलाधिकारे लिखितः' ॥
भूतप्रेत पिशाचादि भये स्मृत्वा नरोऽभयः ।
भैरवीं तु महापूर्वी भवेदेव न संशयः ॥ १९ ॥

नृसिंह के मन्त्र से सब दुःख हर जाते है। इससे डाकिनी, ग्रह और भूत ऐसे नष्ट हो जाते हैं जैसे सूर्य के सम्मुख अन्धकार नष्ट हो जाता है। उसे ही नृसिंह मन्त्र कहते हैं जिसे पहले बलि के अधिकार में कहा है। प्रेत पिशाचादि के भय में इसको स्मरण कर मनुष्य अभय हो जाता है और इसमें सन्देह नहीं कि वह महाभैरवी का भक्त कहा जाता है। यहाँ ११४ से १२० तक के यन्त्र भी लिखकर बाँधे।

अथ निद्राकरणम्

निगडे चौरिकायां च पठेद्वारत्रयं यदि ।
सर्वे प्रहरिका यान्ति निद्राया वशमेव च ॥ २० ॥
ॐ कालकालिका महिषासुरनाशिनी योगनिद्राणी
अमुकारपुरियादेवी कालिकामालायोगनिद्राणी उदयपाना ॥
नदीकाल मायाधरी नागनिद्राणी अमुकारपुरी दण्डपहरि भूपै लोटै
कालिकार आज्ञा गडागडी पीठे कालिकार आज्ञा ।
इति लौकिकमन्त्रः ।

यदि चोर बेड़ी को तीन बार इस मन्त्र से अभिमन्त्रित करे तो सब पहरा देने वाले सो जायेंगे। मन्त्र : ॐ काल कालिका महिषासुरनाशिनी योग-निद्राणी अमुकारपुरियादेवी कालिकामालायोगनिद्राणी उदयपाना नदीकाल मायाधरी नागनिद्राणी या अमुकारपुरी दण्डपहरि भूपै लौटै कालिकार आज्ञा गडागडी पीठे कालिकार आज्ञा।

इति लौकिकमन्त्र।

अथ निगमोक्तम्।

ॐ ह्रीं चण्डाण्ड उग्रचण्डारिका कालिका निद्रय निद्रय।
इति मन्त्रेण महानिद्राभवति।
एतन्मन्त्रं पठित्वातस्य गृहे वाद्यवालो पठित्वा धूलिं कृत्वा क्षिपेत्।
कालिका विद्याकाल मोहै देवासुर नरकहो स्थिर लहे॥ २१॥
त्रिभुवन जगत कालिकारदा सीपहरि।
जागन्तालि निद्र गेल महिमद्र भेयशी॥
कालिकार आज्ञा निद्राली लागे उदय देषि। आनिन्द्रभागे।

शास्त्र मन्त्र : 'ॐ ह्रीं चण्डाण्ड उग्र चण्डारिका कालिका निद्रय निद्रय' इस मन्त्र से महानिद्रा होती है। यह मन्त्र पढ़कर उसके घर में विद्या का निक्षेप करे। विद्या यह है 'कालिका विद्या काल मोहै देवासुर नरतकहो स्थित लहै, त्रिभुवन जगत कालिकारदा सीपहरीजागन्तालि निद्र गेल महि मद्रमे यशी कालिकार आज्ञा निद्राली लागे उदय देखि आनिन्द्र भागे'।

गुवाकं खादित्वा तस्यावशिष्टं विवरं कृत्वा संयोज्य तत्र प्रस्रावयेत्॥
तस्य वाटिकायामायाति तस्यानेन मन्त्रेण निद्रां करोति।

सुपारी खाकर उसके अवशिष्ट में विवर करके संयुक्त कर उस पर प्रस्रावकर वाटिका में रख दे। जो उस वाटिका में जायगा उसको निद्रा होगी।

काकजङ्घा जटानिद्रां जनयेच्छिरसि स्थिता।
मूलं वा काकमाच्याश्च कृष्णायास्तद्गुणं स्मृतम्॥ २२॥

घुंघची और रुद्रजटा शिरपर डालने से निद्रित कर देती है। काकमाची (मकोय) की जड़ और पीपल शिरपर डालने का भी यही गुण है।

मुनिखण्डकशाकं वा शय्यास्थाने खनेदथ।
करञ्जमूलं शिरसि बन्धनात्कुरुते तथा॥

बकवृक्ष इक्षु विशेष का शाक शय्यास्थान में खोदकर गाड़ देने से अथवा करंजुए की जड़ शिरपर बाँधने से नींद आ जाती है। 'ॐ शुद्धे शुद्धे महायोगिनी

महानिद्रे स्वाहा' इस मन्त्र से महानिद्रायणी देवी का ३०० जप करे। इसे पढ़कर श्मशान की गाय के मूत्र से प्लावित मृत्तिका घर में डालने से निद्रा होती है। यह निद्रा की विद्या संक्षेप से कही गई।

नीलोत्पलं समरिचं नागकेशरमूलकम्।
पिष्ट्वा तद्रंजयेच्चक्षुर्निद्रामाप्नोत्यसंशयः ॥ २४ ॥

नीलोफर, कालीमिर्च और नागकेशर यह सब बारीक पीसकर नेत्रों में आँजने से नींद आती है।

कूष्माण्डं महिषीशृङ्गं पिष्ट्वा तत्समभागकम्।
लेपयेद्दक्षिणे पृष्ठे तस्य निद्राक्षयो भवेत् ॥ २५ ॥

पेठा और महिषशृङ्ग इन दोनों को बराबर भाग लेकर दाहिनी ओर लेप करने से निद्रा का क्षय होती है।

सौभाञ्जनस्य बीजानि नीलोत्पलस्य पुष्पकम्।
समनागेश्वरं पिष्ट्वा निद्रां मुञ्चति चाञ्जनात् ॥ २६ ॥
बृहती पक्वफलकं पिष्ट्वा च मधुयष्टिभिः।
यस्य नेत्रेऽञ्जनं दद्यान्निद्रा तस्य विनश्यति ॥ २७ ॥

सहिजने के बीज, नीलकमल का पुष्प और समान भाग नागकेशर पीसकर आँजने से निद्रा का क्षय होता है। कटेरी के पक्के फल, मधु, गहद या मुलेठी से पीसकर जिसके नेत्र में आँज दिया जाय उसकी निद्रा का क्षय होता है।

[1]कनकधत्तूरमूलं मृताभ्र केतकीपुष्परजः।
एतानि पिष्ट्वा कपटवेषेन खादयेन्निद्रा भञ्जनं भवति ॥ २८ ॥

इति निद्राकरणम्।

कृष्णधतूरे की जड़, शोधा अभ्रक और केतकी के फूलों का रस यह सब पीसकर श्वेत कटेरी के रस में खाने से नींद नहीं आती।

इति निद्राभङ्ग।

अथ बन्धनमोचनम्

मार्गशीर्षस्य पूर्णायां शिखीमूलं समुद्धरेत्।
बन्धनान्मुच्यते तेन शिखाबद्धो न संशयः ॥ २९ ॥

बन्धमोचन : मार्गशीर्ष महीने की पूर्णिमा को शिखी (चित्रक) की जड़ी उखाड़ कर लाकर उसे शिखा में बाँधने से अवश्य बन्धन से छूट जायगा इसमें सन्देह नहीं।

---

१ कृष्णधतूरे मूलमिति वा पाठः।

'ॐ नमः कनकपिंगले रुद्रहृदयांशे रौद्रास्थिधारिणी तिष्ठतिष्ठसरसर-
सर्वान्मोहय मोहय भगवति शिखिजे तिमिरे महामाये स्वाहा॥ अथवा
ॐ नमः कमलपिंगले रुद्रहृदयाङ्गे वेताल अस्थिधारिणी तिष्ठ तिष्ठ
सर सर सर्वान्मोहय मोहय भगवति शिखिजे तिमिरे महामाये स्वाहा।'
अष्टोत्तरशतं जप्त्वा शिखायां पूर्वौषधं बन्धयेत्ततः सिद्धिः।
[1]प्लक्षांशेन ककारां तं लिखेद्बन्धनमोचनम् ॥ ३० ॥

मन्त्र यह है 'ॐ नमः कनकपिङ्गले रुद्रहृयांशे रौद्रास्थिधारिणी तिष्ठ तिष्ठ रस रस सर्वान्मोहय मोहय भगवति शिखिजे तिमिरे महामाये स्वाहा'। यह मन्त्र एक सौ आठ बार जप कर शिखा मे औषधि बांधने से सिद्धि होती है। प्लक्षांश से ककार पर्यन्त मन्त्र लिखने से बन्धमोचन होता है अथवा कवर्ण एक लाख लिखने से बन्धनमुक्त होता है। यहाँ चित्र १२२, १२४, १२६, १२८ के यन्त्र लिखे।

अथ निगडादिभंजनम्

हस्तार्के सेन्दुवारस्य मूलं चोत्तरगं हरेत्।
स्पर्शनं बन्धविच्छेदं कुरुते शीघ्रमारुतः॥ ३१ ॥

निगडादिभञ्जन: हस्तनक्षत्र में रविवार को उत्तर दिशा में जाकर सिन्धुवार (सिम्हालू) की जड़ लावे। उसके स्पर्शमात्र से निगडभङ्ग हो जाता है इसमें सन्देह नहीं।

मांसीरक्तोत्पलं तुल्यं कृकलासे च भोजयेत्।
तन्मलैर्गुटिकास्पर्शात्तालयन्त्रे भिनत्त्यलम् ॥ ३२ ॥

जटामांसी (बालछड) और लालकमल यह बराबर लेकर कृकलास (गिरगिट) को भोजन करावे। उसकी बीट की गुटिका स्पर्श करके लगाने से तालयन्त्र टूट जाता है।

सुपक्व मिष्टिकां कृष्णवज्रीं ग्राह्यस्तु योगिभिः।
सूक्ष्मचूर्णन्तु तां कृत्वा लोह किट्टमथापि वा॥ ३३ ॥
सूत्रैः रज्जुदृढीकृत्य तिलं तैलेन लेपितम्।
तच्चूर्णं लोडितं कृत्वा महालौहं भिनत्त्यलम् ॥ ३४ ॥

सुपक्वइष्टि और थूहर को ग्रहण करके लावे। ऐसा योगिराजों ने कहा है कि उसका सूक्ष्म चूर्ण करके अथवा लोहकीटकों के लेकर सूत की रस्सी दृढ़ करके तिल के तेल से लिप्त करे और उसमें चूर्ण को लगावे तो यह महालोहे को क्षण में तोड़ देता है।

---

१ लक्षवर्णं ककारंचेत्यपि पाठः।

'ॐ नमो भगवते रुद्राय उड्डामरेश्वराय बहुरूपाय नानारूपधराय हस हस नृत्य नृत्य तुद तुद नानाकौतुकेन्द्रजालदर्शकाय ठः ठः स्वाहा'।

अनेन सर्वयोगाभिमन्त्र्य सिद्धि ।

'ॐ वाघवाहिनी सिद्धे या कालि कालि कत्वात्मिका आर्यादेवी मन्त्रितोरदास रणे रणे नाहिथिलशतो इदवी त्रिभुवनमातु चौसष्ठि मिनि बन्धनभागि आपला चण्डा चण्ड चामुण्डी चामुण्ड विकट कालिका मादशन आगे अमुका बन्धन भाँगि या आपलां बांधव बांधव थायापाये निश्चल चौसष्ठी बन्धन विरकालिका मा छांडे हूंकार चौसष्ठी बन्धन का चारं भागी भइल ल्याइ खमकालिकार आज्ञा ॥ अथवा आ आजा देवि मै चिन्तोवदासर सेवान नाहि विना संतोम्बीदेवी ॥ त्रिभुवन रणरमाया चौसृष्टि बन्धन भागी अम्बेला ॥ चण्डाचण्डचामुण्डा विकट्टकालिका मादन आगे अमुकार बन्धन भागी आं फेलाव बाधवाध थायात्रनितन ॥ चौसठी बन्धन मैलविरला कालिका मा छडे हूंकार चौशठि बन्धनकाटार भाद्रिभरल क्षार स्वार कालिकार आज्ञा ॥ अथवा ॥ ॐ अग्निमुखी पिशाची अमुकं हन हन पच पच शीघ्रं मे वशमानय स्वाहा' एतन्मन्त्रद्वयं पूर्वमष्टोत्तरशतं जप्त्वा सप्तवारं जपे नाना विधिबन्धनछेदो भवति ॥ इति मन्त्रं पठित्वा करांगुल्यां प्रहारयेत् द्वारि दत्ते द्वारमुक्तं भवति ॥ दं हुं ॐ ॥ आय आय चिं चिठि चिठि हांला वज्रनन्दिकां कालिका ॥ अनेन मन्त्रेण श्वेतसर्षपंश्वेतोदुम्बरपुष्पत्रयं त्रिः पठित्वा प्रथम द्वारेक्षिपत्सर्वद्वाराणि भञ्जन्ति ॥

इति निगडानां भञ्जनम् ।

'ॐ नमो भगवते रुद्राय उड्डामरेश्वराय बहुरूपाय नानारूपधराय हस हस नृत्य नृत्य तुद तुद नाना कौतुकेन्द्रजाल दर्शकाय ठः ठः स्वाहा' इस मन्त्र से अभिमन्त्रि करने से सिद्धि होती है। 'ॐवाध वाहिनि सिद्धे पाकादि लिका लायि आआ जा देवी में चिन्तो वदा सरसे वान नाहि विनाशं तोम्बिदेवी त्रिभुवन रणरमा पाचौ सृष्टि बन्धन भागी आम्पेला चण्डा चण्ड चामुण्डा विकन्द कालिका मादन आगे अमुकार वन धन भायी आफेला व वाध वाध पायात्रनि पन चौसट बन्धनमल विरला कालिका माछडे हूंकार चौसठि बन्धनका ठार भाद्रि भाल क्षार स्वार कालिकार आज्ञा।' यह दोनों मन्त्र पहले एक सौ आठ बार जपे फिर सात बार जपे तो अनेक प्रकार के बन्धनों का छेदन हो जाता है। यह मन्त्र पढ़कर हाथ की अंगुली के प्रहारमात्र से द्वारमुक्त होता

है। 'दं हं ॐ आए आए चि चिठ चिठ हाथ वज्र नन्दिका कालिका' इस मन्त्र से श्वेत सरसों श्वेत उदुम्बर के फूल तीन बार पढ़कर पहले द्वार पर फेंके तो सब द्वार भग्न हो जाते हैं। यहाँ चित्र १३० का यन्त्र लिखें।

इति निगडभंजन।

बिभीतकन्तु शाखोटमूलपत्रेण संयुतम्।
स्थापयेद्यद्गृहद्वारे तस्य वै कलहो भवेत् ॥ ३५ ॥

बहेड़ा, सिंघोरा और उसकी जड़ पत्ते सहित जिसके घर के द्वार में स्थापित करे उसके यहाँ सदा क्लेश होता है।

मार्जार मूषिक द्विज दिगम्बराणां लोमभिः धूपात्।
आर्द्रा यां यत्रगृहे तत्र वै जायते वैरम् ॥ ३६ ॥

मार्जार, चूहा, द्विज और दिगम्बर इनके लोम की आर्द्रा नक्षत्र में धूप देने से वैर हो जाता है।

अथ गृहक्लेशनिवारणम्

तक्रपिष्टे तालेन् लेपयेत्पुत्रिकाकृतिम्।
तामाघ्राय गृहाद्यान्ति मक्षिका नात्र संशयः ॥ ३७ ॥

हरताल को छाछ के साथ पीसकर एक कल्पित पुतली के शरीर में लेपकर रक्खे। उसको सूंघने से मक्खी नहीं आती इसमें सन्देह नहीं।

श्वेतार्क दुग्धकुल्माषं तिलचूर्णसमन्वितम्।
अर्कपत्रेषु विन्यस्तं मूषकान्तकरं गृहे ॥ ३८ ॥

सफेद आक का दूध, कुल्माष (कुल्थी), उर्द या काँजी और तिल इनका चूर्ण कर आक के पत्ते पर रखने से चूहे नष्ट हो जाते हैं।

तालकं छागविण्मूत्रं पलाण्डुं सहपेषयेत्।
आलिप्य मूषिकं तेन जीवितं च विसर्जयेत् ॥ ३९ ॥
तं दृष्ट्वा च गृहं त्यक्त्वा पलायन्ते हि कौतुकम्।

हरताल, छाग की विष्ठा और मूत्र इनको प्याज के साथ पीसे। इससे मूषिक को आलेपन करके जीता हुआ ही छोड़ दे। उसको देखकर घर से और चूहे कौतुकपूर्वक पलायन कर जाते हैं।

मार्जारस्य मलं तालं पिष्ट्वा मूषिकमालिपेत् ॥ ४० ॥
तमाघ्राय गृहं त्यक्त्वा सद्योनिर्यान्ति मूषिकाः।

मार्जार के मल और हरताल को पीसकर मूषक पर लपेटे। उसको सूंघकर चूहे घर छोड़ अन्यत्र चले जाते हैं।

गन्धकं हरितालं च ब्राह्मी त्रिकटु संयुतम् ॥ ४१ ॥
छागलीमूत्रतः पिष्ट्वा पूर्ववन्मूषिकं लिपेत् ।

गन्धक, हरताल, ब्राह्मी और त्रिकुटा इन्हें छागली के मूत्र से पीसकर मूषकपर लपेटे तो चूहे भाग जाते हैं ।

मघाया ब्रध्नकं क्षेत्रे स्थापयेन्मधुकोद्भवम् ॥ ४२ ॥
मक्षिका मूषकानां च जायते तुण्डबन्धनम् ।

मघा नक्षत्र में श्वेत आक की जड़ को मुलेठी के साथ शुभ क्षेत्र में स्थापन करने से मूषक और मधुमक्खी का तुण्डबन्धन हो जाता है ।

मूषकाकर्षको दीपः सावरी गुडतैलजः ॥ ४३ ॥

गुड, तेल सावरी पढ़ा हुआ हो तो उसका दीपक मूषक निवारण करता है ।

'पूर्वे'ब्रह्मामेबद्धः पश्चिमे विष्णुर्मेबद्धउत्तरे
रुद्रोमेबद्ध दक्षिणे यमोमेबद्धः पाताले वासुको
मेबद्धः फणिसहस्रेबद्धः ह्रूं अंगुष्ठाभ्यां नमः' ॥
करसम्पुटं कृत्वा तालत्रयं दद्यात् ।
मूषिकमशक निवारणं भवति ॥ ४४ ॥

'पूर्वे ब्रह्मा मे बद्धः पश्चिमे विष्णुर्मे बद्धः उत्तरे रुद्र दक्षिणे यमबद्धः पाताले वासुकी मेबद्धः फणीसहस्रे बद्धं ह्रूं अंगुष्ठाभ्यां नमः' । इस मन्त्र से सम्पुट कर तीन ताल दे तो चूहों मच्छरों का निवारण होता है ।

रोहिषतृणपुष्पन्तु वर्तिमध्ये निवेशयेत् ।
तद्दीप दर्शनादेव क्षिप्रं नश्यन्ति मत्कुणाः ॥ ४५ ॥

बहेडे का तृण और फूल बत्ती के बीच में रक्खे । उसके द्वारा दीपक जलाने से उस दीपक के दर्शनमात्र से तत्काल खटमल नष्ट हो जाते हैं ।

अर्कतूलमयी वर्तिर्भावयेत्तावकेन च ।
दीपं तत्कटु तैलेन निःशेषा यान्ति मत्कुणाः ॥ ४६ ॥

आक के तूल की बत्ती को कड़वा तेल से संयुक्त कर दीपक में जलाने से सब प्रकार खटमल नष्ट हो जाते हैं । जहाँ 'भावयेद्यावके नच' पाठ है वहाँ महावर की भावना भी दे ।

अर्जुनस्य फलं पुष्पं लाक्षा श्रीवासगुग्गुलुम् ।
श्वेतापराजितामूलं भल्लातकविडङ्गकम् ॥ ४७ ॥
धूपं सर्जरसोपेतं प्रदेयं गृहमध्यतः ।

---

१ कहीं 'सबमेके स्थानमें' यह पाठ है ।

सर्पाश्च मत्कुणा मूषा गन्धाद्यान्ति दिशो दश ॥ ४८ ॥

अर्जुन वृक्ष के फल और पुष्प, लाख, श्वेत चन्दन, गूगल, श्वेत अपराजिता की जड़, भिलावा, वायविडंग, सर्जरस (राल) और धूप इनको चूर्णकर यह धूप घर में देने से इसकी गन्ध से सर्प, चूहे, खटमल सब नष्ट हो जाते हैं।

गुड श्रीवासभल्लात विडङ्गं त्रिफलायुतम्।
लाक्षारसोऽर्कपुष्पं च धूपो वृश्चिकसर्पहृत् ॥ ४९ ॥

गुड़, श्वेत चन्दन या चावल, भिलावा, वायविडंग, त्रिफला, लाख का रस और आक का फूल इनकी धूप देने से घर में सर्प और बिच्छू नहीं रहते।

मुस्तासिद्धार्थं भल्लात कपिकच्छफलं गुडम्।
चूर्णं भानुफलोपेतं दहेत्सर्जरसैः समम् ॥ ५० ॥
मत्कुणा मशकाः सर्पा मूषिका विषकीटकाः।
पलायन्ते गृहं त्यक्त्वा यथायुद्धेषु कातराः ॥ ५१ ॥

मोथा, सरसों, भिलावा, करंज, कौंछ के फल और गुड़ इनका चूर्ण कर आक के फल से संयुक्त करे। उसके साथ राल को भस्म करने से खटमल, मच्छर, सर्प, मूषक, विष के कीट ये सब युद्ध में कतार हुए मनुष्य के समान घर को छोड़कर भाग जाते हैं।

सर्जरसः शक्रमेदोऽर्जुनमूलमरुबकं केतकनखबद्धः।
एतैर्धूपो रचितः कीटभुजगमशकमक्षिकादिहरः ॥ ५२ ॥

राल, कुड़ा, मेदा, अर्जुन की जड़, मरुआ, केतकी मूल और नखी इनकी धूप देने से कीट, सर्प, मशक, मच्छर, तथा शहद की मक्खी भाग जाती हैं। जहाँ 'कलकमेदः' पाठ है वहाँ मास रोहिणी अर्थ है।

राज वृक्षफलं बद्धं खट्वा यां मत्कुणापहम्।
लाक्षासर्जरसोशीरं सर्षपाः पत्रकं परम् ॥ ५३ ॥

खाट में कर्णीकार या अमलतास का फल बाँधने से खटमल रह नहीं पाते। लाख, राल, खस, सरसों यह सब (दुःख) दूर करते हैं।

सोमराजस्य वृक्षस्य पल्लवाग्रेण वर्तिकाम्।
कृत्वा दीपं प्रकुर्वीत मत्कुणश्च विनश्यति ॥ ५४ ॥

सोमराज वृक्ष के पत्ते के अग्रभाग की द्वारावती बनाकर उसका दीपक जलाने से खटमलों का नाश हो जाता है।

भल्लातक विडङ्गानि विश्वकं पुष्करं तथा।
जम्बुलोमशकं हन्ति धूपाद्वा गृहमध्यतः ॥ ५५ ॥

इति गृहक्लेशनिवारणम्।

बहेडा, वायविडङ्ग, सोंठ, पुष्करमूल और जम्बू इनकी धूप देने से मशक दूर होते हैं।

इति गृहक्लेशनिवारण।

अथ क्षेत्रोपद्रवनाशनम्

क्षेत्रस्य शस्यानां सर्वोपद्रव नाशनम्।
वालुका श्वेतसिद्धार्थान् प्रक्षिपेत्क्षेत्रमध्यतः ॥ ५६ ॥
शलभाः सर्पकीटाश्च वराहामृगमूषिकाः।
मशकास्तत्र नो यान्ति मन्त्रविद्या प्रभावतः ॥ ५७ ॥

खेती के सम्पूर्ण उपद्रव नाश करने वाला विधान : बालू और श्वेत सरसों यह खेत के बीच में डाल देने से शलभ, सर्प, कीड़े, वराह, मृग, मूषक और खरगोश सब मन्त्र विद्या के प्रभाव से वहाँ नहीं आते।

'ॐ नमः सुरेभ्यः वलजः उपरि परि परि मिलि स्वाहा।
ॐ सुरेभ्यो नमः। नमस्कृत्य इमां विद्यां प्रयोजयेत् ॥
विद्यां प्रयोजयामीति विद्या मे सिद्धयतु स्वाहा।
अखिल जम्बूकानां मृगाणां शशकानामन्येषां प्राणिनां शलभादीनामन्येषां प्राणिनां तुण्डबन्धनं करोमीत्यत्र प्राणेकृतघ्नस्य तेन पापेन लिप्यते यत्रमन्त्र व्यतिक्रमति स्वाहा।
एतन्मन्त्र द्वयेन वालुकाभिः सहश्वेतसर्षपान्सप्तवाराभिमन्त्र्यक्षेत्रमध्ये क्षिपेत्सर्वोपद्रवो नश्यति। मूषजम्बूक कीटानां कुरुते तुण्डवेधनम् ॥
विद्यामंकुशनाथस्य मन्त्रं वा भैरवस्य च। ॐ नमो नगरनाथाय हय हर हर शिलि शिलि सर्वेषां प्राणिनां तुण्डबन्धनं कुरु कुरु ह्रूं फट् स्वाहा उज्जयनी नगरी भैरव बोले महादेव भण्डार फूल बोले हनुमन्त साक्षी अस्ति अस्तु' ॥ ५८ ॥

'ॐ नमः सुरेभ्यः वलजः जप पारि पारि पारि रज परि परि मिलि स्वाहा ॐ सुरेभ्यो नमः' इस प्रकार देवताओं को नमस्कार कर इस विद्या का प्रयोग करे, 'विद्यां प्रयोजयामीति'। इन दो मन्त्रों से बालू के साथ श्वेत सरसों को सातबार अभिमन्त्रित कर क्षेत्र के मध्य में डालने से सब उपद्रव शान्त हो जाते हैं। मूषक, गीदड़, कीटादि जीवों का तुण्डबन्ध हो जाता है। अंकुशनाथ की विद्या या भैरव का मन्त्र पढ़े। ॐ नमो नगरनाथाय यथा यह हरहर शिलशिल सर्वेषां प्राणिनां तुण्डबन्धनं कुरु कुरु ह्रूं फट् स्वाहा उज्जयनीनगरी भैरव बोले महादेव भण्डार फूल बोले हनुमन्त साक्षी साक्षी साक्षी अस्ति अस्तु'।

अनेन मन्त्रेण सप्ताभिमन्त्रितं चन्दनं वाटिका
मध्येनिःक्षिप्य पुष्पफलं समस्तं निरुपद्रवं भवति ।

इस मन्त्र से सात बार अभिमन्त्रित कर चन्दन को बगीचे के मध्य में डालने से पुष्प फल सब निरुपद्रव होते हैं ।

देवदालीं च सिद्धार्थं गुटिकां कारयेद्बुधः ॥
क्षेत्रमध्ये तु निक्षिप्य सर्वपक्षि भयं हरेत् ॥ ५९ ॥

देवदाली और सरसों इन दो वस्तुओं को बुद्धिमान् द्वारा गुटिका करके खेत के मध्य में डाल देने से सब पक्षियों का भय दूर होता है । फुलवाड़ी में भी इसे डालने से सब उपद्रव शान्त हो जाते हैं ।

पूर्वाषाढाख्य ऋक्षे तु वन्दां विभीतवृक्षजम् ।
शस्यमध्ये क्षिपेत्तेन शस्यवृद्धिर्भवेद् ध्रुवम् ॥ ६० ॥
इति शस्यादीनां सर्वोपद्रव नाशनम् ।

पूर्वाषाढा नक्षत्र में बहेड़े का वन्दा लेकर खेती के मध्य में डालने से शस्य की वृद्धि होती है ।

इति शस्यों का सर्वउपद्रवनाशन ।

अथ गोमहिष्यादि दुग्धवर्द्धनम्

'ॐ हुंकारिणी प्रसव ॐ शीतलम्' अनेन सप्तवारं तृणादिकमभिन्त्र्य भोक्तुं दद्यात्तदा बहुलं दुग्धं प्रसवति ॥ ६१ ॥

गोमहिषी आदि के दूध बढ़ाने की विधि : 'ॐ हुंकारिणी प्रसव ॐ शीतलम्' इस मन्त्र से तृण आदि को सात बार अभिमन्त्रित कर गाय आदि को खाने को देने से गाय-भैंस आदि बहुत दूध देंगी ।

इति गोमहिषी आदि दुग्धवर्द्धन ।

इति श्रीनित्यनाथविरचितेकामरत्ने भाषाटीकायामरिष्टनाशादिशस्योपद्रवनाशनं गोमहिष्यादिदुग्धवर्द्धनं नाम नवमोपदेशः ॥ ९ ॥

अथ सर्वारिष्टनाशार्थं रक्षाविधिः

ईश्वरेण पुरादेव्यै यद्यत्तत्कथितं मया ।
कादिद्विरवसानं च ह्यक्षरं स्वरभूषितम् ॥ १ ॥
ईकारेणाऽपि संपूज्य अधोरेफत्रयान्वितम् ।
ॐ कार शिरसं कृत्वा जप्तव्यं सिद्धिमिच्छता ॥ २ ॥

सम्पूर्ण अरिष्टनाशक रक्षाविधि : ईश्वर ने पार्वती के प्रति कहा है कि आदि हकार अक्षर और दीर्घ ईकार स्वर के सहित उस हकार को नीचे रेफ से संयुक्त कर तथा आदि में ॐकार लगाकर सिद्धि की इच्छा करने वाले को जपना चाहिये ।

मन्त्रोयम् 'ह्रीं ह्रीं ह्रीं ॐ ह्रीं क्रीं ख्रीं वा
ॐ क्री ख्रीं क्ष्रीं ॐ ठ्रीं श्रीं फ्रीं ह्रीं' ।
स्वसंयमनमन्त्रोयं शताद्धं जपमात्रतः ।
अशेषारिष्टनाशः स्यादित्याह पुरसूदनः ॥ ३ ॥

ह्रीं ह्रीं ह्रीं अथवा (ॐ ह्रीं क्रीं ख्रीं) या (ॐ क्रीं ख्रीं क्ष्रीं) यह मन्त्र है । ५० बार जपने से ही यह मन्त्र सिद्ध हो जाता है और सम्पूर्ण अरिष्टों का नाश करता है ऐसा शङ्कर ने कहा है ।

कपरं चपरं चैव ठपरं तपरन्तथा ।
पपरं वर्णमाकृष्य ईकारेण सुपूजितम् ।
अधोरेफसमायुक्तमोंकारैः शिरसं तथा ॥ ४ ॥
मन्त्रोयम् । ॐ ह्रं ख्रं छ्रं ठ्रं थ्रं फ्रं ह्रम् ।
वा ॐ ह्रीं ख्रीं छ्रीं ठ्रीं थ्रीं फ्रीं ह्रीं शुद्धम् ।
श्रद्धया तु महामन्त्रं ये जपन्ति सदामुने ।
सर्वथा तस्य पुंसः स्यात्सर्वारिष्ट विनाशनम् ॥ ५ ॥
हस्तेन रक्तपुष्पेण ग्रथितां च मालया ।
अभिमन्त्र्य शतेनापि दद्याद्देव्यै सदाऽनघे ॥ ६ ॥
यावज्जीवं शुभं तस्य सर्वलाभो दिने दिने ।
न गृहेऽनिष्टपातः स्याल्लिखित्वा स्थापनेऽपि च ॥ ७ ॥

ककार चकार ठकार तकार पकार इनसे पर (द्वितीय) जो खादि वर्ण हैं उनको और हकार को ईकार या उसके नीचे रेफ लगाकर प्रथम ॐकार

नरास्थि कीलकं द्वारे निखन्याच्चतुरंगुलम् ।
मन्त्रयुक्तमरेद्वारि सत्यमुच्चाटनं भवेत् ॥ १ ॥
'ॐ नमो भगवते रुद्राय अमुकं गृह्ण गृह्ण पच पच त्रासय त्रासय त्रोटय त्रोटय नाशय नाशय पशुपतिराज्ञापयति ठः ठः' ।

मनुष्य की चार अंगुलकी अस्थि (हड्डी) को मन्त्र पढ़कर जिस शत्रु के द्वार पर गाड़ दे उसका अवश्य उच्चाटन हो जायगा । मन्त्र यह है : 'ॐ नमो भगवते रुद्राय अमुकं गृह्ण गृह्ण पच पच त्रासय त्रासय त्रोटय त्रोटय नाशय नाशय पशुपतिराज्ञापयति ठः ठः' ।

मृतस्य पुरुषस्य निर्माल्यं चैलमेव च ॥
प्रेतालयात् समागृह्य यस्य गेहे निधापयेत् ॥ २ ॥
अष्टम्यां च चतुर्दश्यां तस्यैवोच्चाटनं भवेत् ।
एषयोगोमयाख्यातो विनामन्त्रेण सिद्धयति ॥ उद्धृतेन शान्तिः ॥३॥

मृतक पुरुष का निर्माल्य और चैलवस्त्र मरघट से ग्रहण करके घर में दबा दे या डाल दे । अष्टमी और चतुर्दशी के दिन यह कृत्य करने से उसका उच्चाटन हो जाता है और उखाड़ने से शान्ति होती है । यह योग विना मन्त्र के ही सिद्ध होता है । यहाँ चित्र १२१, १२३, १२४, १२७, १२९, १३१, १३२, १३३, १३४, १३५, १३६, १३७, १३९ के यन्त्र लिखें ।

श्वेत लागलिकामूलं स्थापयेद्यस्य वेश्मनि ।
निखनेत्तु भवेत्तस्य सद्य उच्चाटनं ध्रुवम् ॥ ४ ॥

श्वेतकलहारी की जड़ को किसी के घर में डाल या गाड़ देने से उसके सब कुटुम्ब में शीघ्र ही उच्चाटन होता है ।

सिद्धार्थं शिवनिर्माल्यं यद्गेहे निखनेद्बुधः ।
उच्चाटनं भवेत्तस्यह्युद्धृते तु पुनः सुखी ।

सरसों और शिव का निर्माल्य जिसके घर में गाड़ दे उसका उच्चाटन हो जाता है और उखाड़ने से सुख होता है ।

संगृह्य वृक्षात्काकस्य निलयं प्रदहेच्च तम् ॥ ५ ॥
चिताग्नौ भस्मतः शत्रोर्दत्तं शिरसि सुन्दरी ।
तमुच्चाटयते देवि शृणु योगमनुत्तमम् ।
भवेत्तस्य उद्धृते च पुनः सुखी ॥ ६ ॥

वृक्ष पर से कौए का घोसला लेकर उसे जला दे । उसके चिता की भस्म शत्रु के सिर पर डालने से अवश्य उच्चाटन हो जाता है । हे देवी ! यह उत्तम योग है फिर उसके वहाँ से अलग करने से सुख होता है ।

ख्यातमौदुम्बरं कीलं मन्त्रितं चतुरंगुलम् ।
तं यस्य निखनेद्गेहे खनेदुच्चाटनं भवेत् ॥ ७ ॥

मन्त्र 'ॐ शिनी शिनी स्वाहा' । उदुम्बर की चार अंगल की कील इस मन्त्र को पढ़कर जिसके घर में गाड़ दे उसका उच्चाटन होता है ।

अथ उच्चाटन प्रकारान्तरमाह

उच्चाटनविधिं वक्ष्ये यथोक्तं श्रीमतोत्तरे ।
निम्बपत्रे लिखेन्नाम महिषाश्वपुरीषकैः ।
काकपक्ष लेखन्या च लेखनीयमनन्तरम् ॥ ८ ॥
मन्त्रस्तु : ॐ काकतुण्डि धवलामुखि देवि अमुकमुच्चाटय
उच्चाटय हुं फट् स्वाहा ।
एतन्मन्त्रं महादेवी लिखित्वा पूर्ववस्तुभिः ।
निम्बवृक्ष स्थितं सर्वं काकालयं हरेदथ ॥ ९ ॥
श्मशान वह्निमानीय धत्तूरकाष्ठदीपितम् ।
वह्निं कृत्वा महातैलैरथवा कटु वस्तुभिः ॥ १० ॥
पूर्वोक्त मनुना तस्य होमयेद्विधिपूर्वकम् ।
सम्पूज्य धवलामुखीं पञ्चोपचार योगतः ॥ ११ ॥
तस्माद्भस्म प्रक्षिपेच्च शत्रोश्च मन्दिरोपरि ।
उच्चाटनं भवेत्तस्य सपुत्रपशुबान्धवैः ॥ १२ ॥
धूम्रवर्णा महादेवी त्रिनेत्रां शशिशेखराम् ।
जटाजूट समायुक्तां व्याघ्रचर्म परिच्छदाम् ॥ १३ ॥
कृशाङ्गीमस्थिमालाश्च कर्तृकाश्च तथाम्बुजम् ।
कोटराक्षीं भीमदंष्ट्रां पातालसदृशोदरीम् ॥ १४ ॥
स्वान्ते ध्यात्वा पूजयेद्वै योगध्यान परोजनः ।
एष योगविधिः ख्यातो वीरतन्त्रे महेश्वरि ॥ १५ ॥

अब दूसरी उच्चाटन बिधि कहते हैं : भैंसे और घोड़े की लीद से कौए के पङ्ख की कलम से नीम के पत्ते पर शत्रु का नाम लिखे और यह मन्त्र पढ़कर पूर्व वस्तुओं से लिखकर नीम के पेड़पर स्थित कौए का घोसला लाकर धतूरे की लकड़ियों में उसको श्मशान की अग्नि से भस्म करे। महातेल अथवा कटु वस्तुओं से ऊपर लिखे मन्त्र से विधिपूर्वक होम करे और धवलामुखी देवी का पञ्चोपचार योग से पूजन करे । फिर उसमें से भस्म लेकर शत्रु के मन्दिर

पर डालने से पुत्र, पशु, बान्धव सहित उसका उच्चाट होगा। देवी का ध्यान यह है : 'धूम्रवर्णा महादेवी, तीन नेत्र, मस्तकपर चन्द्रमा, जटाजूट से युक्त, व्याघ्रचर्म धारण किये, कृशशरीर, अस्थिमाला पहने, कतरनी कमल लिये, कोटर के समान नेत्रवाली भयङ्कर डाढें, और पातालवत् गम्भीर उदर।' ऐसा ध्यान कर पूजे। हे महेश्वरि यह योग वीर तन्त्र में लिखा है। इत्युच्चाटनम्।

अथ विद्वेषणम्

एकहस्ते काकवक्षमुलूकस्य तथाऽपरे।
मन्त्रयित्वा मिलित्वाग्रं कृष्णसूत्रेण बन्धयेत् ॥ १६ ॥
अञ्जलिञ्च जले चैव तर्पयेद्धस्तपक्षकैः।
एवं सप्तदिनं कुर्यादष्टोत्तरशतं जपेत्।
विद्वेषो जायते तत्र महाकौतुकमद्भुतम् ॥ १७ ॥

विद्वेषण : एक हाथ में काकपक्ष और दूसरे में उल्लू का पङ्ख लेकर मन्त्र से इनको मिलाकर काले सूत्र से बाँधे और जल से पक्ष को सात दिन तर्पण करे। १०८ बार मन्त्र जपने से विद्वेषण होगा।

मर्जारमूषिकाविष्ठा साध्यपुत्तलिका कृता।
नीलवस्त्रेण संवेष्ट्य मन्त्रयित्वा शतेन च।
विद्वेषो जायते तत्र भ्रातरौ तातपुत्रकौ ॥ १८ ॥
मन्त्रस्तु। 'ॐ नमो महाभैरवाय श्मशानवासिन्यै
अमुकामुकयोर्विद्वेषं कुरु कुरु क्रूं फट्'।

बिलाव और मूष की विष्ठा से साध्य की पुतली बनाकर नीले वस्त्र से लपेटकर सौ बार मन्त्र पढ़े तो भ्राता, पिता और पुत्र में विद्वेष हो। मन्त्र यह है : 'ॐ नमो महाभैरवाय श्मशानवासिन्यै अमुकामुकयोर्विद्वेषं कुरु कुरु क्रूं फट्'।

एकहस्ते काकपक्षामुलूकस्य तथाऽपरे।
दर्भेण धारयेद्यत्नात्त्रिसप्ताहं जलाञ्जलिम् ॥ १९ ॥
रक्ताश्वमारपुष्पैकं मन्त्रयुक्तं जलाञ्जलिम्।
नित्यं नित्यं प्रदातव्यमष्टोत्तरसहस्रकम्।
परस्परं भवेद्द्वेषः सिद्धयोगः उदाहृतः ॥ २० ॥

एक हाथ में काक और दूसरे में उल्लू का पङ्ख लेकर कुश के साथ तीन सप्ताह तक जल की अंजली धारण करे। एक लाल कनेर का फूल लेकर मन्त्र पढ़कर हाथ में जल की अंजली धारण करे और नित्य एक हजार आठ अंजली दे तो परस्पर द्वेष हो जाता है, यह सिद्ध योग कहा है।

ॐ नमः कटीटनी प्रमोटनीकी गौरी अमुकस्यामुकेन
सह काकोलूकादि वत् कुरु कुरु स्वाहा ॥

'ॐ नमः कटीटनी प्रमोटनीकी गौरी अमुकस्यामुकेन सह काकोलूकादि-वत्कुरु कुरु स्वाहा'। यह जलाञ्जालि का मन्त्र है। चित्र १३६, १३७, १३८, १३९ के यन्त्र लिखें।

अथ व्याधिकरणम्

'ॐ अमुकं हन हन स्वाहा'। अनेन मन्त्रेण कटुतैलाक्तं
त्रिकटुं जुहुयात्तदा शत्रुर्बधिरो भवति ॥

व्याधिकरण : 'ॐ अमुकं हन हन स्वाहा' इस मन्त्र से कड़ुवे तेल के साथ त्रिकुटे का हवन करने से शत्रु बहरा हो जाता है।

भल्लातकरसे गुञ्जां कुर्यादतिसुचूर्णिताम्।
क्षिपेद्गात्रे भवेत्कुष्ठं सिताक्षीरै पिबेत्सुखी ॥ २१ ॥

भिलावे का रस और गुञ्जा इनका महीन चूर्ण करके जिसके शरीर पर फेंके वह कुष्ठी होता है। फिर मिश्री और दूध पीने से वह सुखी होता है।

वानरीफलरोमाणि विषं भल्लातचूर्णकम्।
गुञ्जायुतं क्षिपेद्गात्रे स्याल्लूता वेदनान्विता ॥ २२ ॥

कौंच की फली के रोम, विष और भिलावे के चूर्ण में चौंटली मिलाकर जिसके शरीर पर डाल दे उसके महापीड़ा युक्त मकरी के फैलने के समान वेदना होती है।

उशीरश्चन्दनं चैव प्रियंगुं रक्तचन्दनम्।
तगरं पेषयेत्तोयैर्लेपाल्लूतादि नाशनम् ॥ २३ ॥

खस, चन्दन, प्रियंगु, लालचन्दन और तगर यह जल से पीसकर लगाने से लूता की वेदना शान्त हो जाती है।

अथज्वरानयनम्। ॐ चामुण्डे हन हन दह दह
पच पच मथ मथ चल्ह चल्ह अमुकं गृह्ण गृह्ण स्वाहा' ॥
अनेन कटुतैलेनाक्त निम्बपत्राणि यस्य
नाम्नाहूयन्ते तस्य शीघ्रं ज्वरो भवति ॥

ज्वरानयन : 'चामुण्डे हन हन दह दह पच पच मथ मथ चल्ह चल्ह अमुकं गृह्ण गृह्ण स्वाहा' यह मन्त्र पढ़कर कड़ुवे तेल के साथ नीम के पत्तों से जिसका नाम लेकर हवन किया जाय उसको तत्काल ज्वर होता है।

चित्रकपुष्प सहस्रं हुनेच्चातुर्थिक ज्वरो भवति।
लवणमष्टाधिक सहस्रं हुनेद्दाह ज्वरो भवति ॥ २४ ॥

चीते के फूल का शत्रु का नाम लेकर १ हजार हवन करने से चातुर्थिक ज्वर होता है; एक हजार आठ बार लवण हवन करने से दाहज्वर होता है।

इति ज्वरानयन।

अथाक्षिरोगजननम्

करवीरपुष्पमष्टसहस्रमुक्त मत्रं हुनेत् अक्षिरोगो भवति।
स्नुक्षपयो लेपनेनैव पानेन श्वेतकुष्ठजित्॥
ताम्बूले इन्द्रगोपञ्च दत्त्वाऽसौ श्वेतकुष्ठकृत्।
पीत्वा यत्ने यथापूर्वम्भक्षेद्वा सोमराजिकाम्॥ २५॥
'ॐ नमो भगवते रुद्राय उड्डामरेश्वराय अमुकं रोगेण गृह्ण गृह्ण पच पच ताडय ताडय क्लेदय क्लेदय ह्रूं फट् स्वाहा ठः ठः'।
उक्त योगानामग्र्यं मन्त्रः॥

नेत्ररोग उत्पन्न करना : आठ सहस्र कनेर के फूल उक्त मन्त्र से शत्रु का नाम लेकर हवन करने से नेत्ररोग होता है। थूहर के दूध के लेप या पान से श्वेत कुष्ठ दूर होता है; अथवा ताम्बूल में वीरबहूटी खाने से कुष्ठ होता है फिर सोमराजी के पीने से श्वेत कुष्ठ दूर होता है। मन्त्र यह है : 'ॐ नमो भगवते रुद्राय उड्डामरेश्वराय अमुकं रोगेण गृह्ण गृह्ण पच पच ताडय ताडय क्लेदय क्लेदय ह्रूं फट् स्वाहा ठः ठः' उपरोक्त रोग का यह मन्त्र है।

ऋक्षे मृगशिरे क्षिप्तेन्त्विकाष्ठस्य कीलकम्।
पञ्चागुलं रिपोर्गेहे वह्निमांद्यं प्रजायते॥ २६॥

मृगशिरा नक्षत्र में पाँच अंगुल तेंदू वृक्ष के काठ की कील शत्रु के घर में डालने से अग्नि मन्द होती है।

समुन्द्रलवणं वह्निः केवलं वा समुद्रजम्।
बन्धक्या उदरं न्यस्तं सर्वमन्तः पुटे पचेत्॥ २७॥
करवीरार्द्रकाष्ठेन तमादय सुचूर्णयेत्।
खानेपानेपयेद्यस्य तस्य चक्षुः प्रणश्यति॥ २८॥

समुद्रलवण, चीता अथवा केवल सेंधा नमक बन्धकी में रखकर सब अन्तरपुट से जला दे और कनेर के गीले काष्ठ द्वार उसको लेकर चूर्ण करे; फिर जिसके खान-पान में डाल दे उसके नेत्र नष्ट हो जाते हैं।

---

१ 'सूकरस्य पयस्तैललेपेन' वा पाठः। अर्थात् सूकरी का दूध और तेल यह एकत्र कर शरीर में लगाने और पीने से श्वेत कुष्ठ समाप्त हो जाता है।

उलूक मस्तकं ग्राह्यं लवणेन प्रपूरयेत् ।
सप्ताहं मृत्पात्रस्थमक्षकाष्ठेन चालयेत् ॥ २९ ॥

उल्लू का मस्तक लेकर लवण से पूर्ण करे । सात दिन तक मिट्टी के पात्र में रखकर बहेड़े की माला से जप करे । इससे दृष्टि स्तम्भित होती है ।

दृष्टिस्तम्भयितुं तस्य मरिचाक्षफलं वचा ।
'ॐ चामुण्डे हन हन दह दह पच पच अमुकं गृह्ण गृह्ण स्वाहा'
अनेन मन्त्रेण निम्बपत्र कटुतैल साध्यनाम गृहीत्वा जुहुयात्सज्वरेण गृह्यते । अनेन लवणाहुतीरष्टसहस्रं जुहुयात्सशूलेन गृह्यते ॥ ३० ॥

काली मिर्च, बहेड़े का फल और वच से भी दृष्टि स्तम्भित होती है । 'ॐ चामुण्डे हन हन दह दह पच पच अमुकं गृह्ण गृह्ण स्वाहा' इस मन्त्र से नीम के पत्ते लेकर कड़ुवा तेल द्वारा साध्य का नाम लेकर हवन करने से वह ज्वर से ग्रसित होता है । इसी मन्त्र से लवण की आहुति से अष्टोत्तर सहस्र हवन करने से शूल सहित ज्वर से ग्रसित होता है ।

तेनैव वेत्रपत्रमष्टसहस्रं जुहुयात्स चतुर्थ ज्वरेण गृह्यते ।
रक्तपुष्प चित्रक रसेन यस्य नामाभिलिख्य भूर्जे ॥
अर्कलतिकायां स्थापयेत्सदाह ज्वरेण गृह्यते ।
ॐ नमः श्रीनृसिंहाय देवायदनुगारयै नमः कृष्णाय' ॥ ३१ ॥

बेत्रपत्र से आठ सहस्र हवन करने से चातुर्थिक ज्वर से ग्रसित होता है । लाल फूल और चीते के रस से जिसका नाम लिखकर भोजपत्र को आक के बेलपर स्थापन कर दे उसे दाहज्वर होगा । मन्त्र यह है : 'ॐ नमः श्रीनृसिंहाय देवाय दनुगारयै नमः कृष्णाय' । यहाँ चित्र १४०, १४१, १४२, १४५ के यन्त्र लिखें ।

अथ शत्रुभ्रामणम्

अश्वत्थकीलमश्विन्यां यस्य गेहे दशांगुलम् ।
स्थापपेद्दीर्घयात्रा स्यात्तस्यापि न हि संशयः ॥ ३२ ॥

शत्रु भ्रामण : जिसके घर में अश्विनी नक्षत्र में पीपल की दस अंगुल की कील स्थापन कर दे उसको दीर्घ यात्रा करनी होगी और द्रावित भी होगा इसमें सन्देह नहीं ।

शृगालस्यास्थिकीलकं स्थाप्यं स्याच्चतुरंगुलम् ।
रिपोर्गेहे सोम ऋक्षे दीर्घयात्रा च तस्य वै ॥ ३३ ॥

गीदड की अस्थि चार अंगुल की स्थापन करे । अर्थात् सोमदेवता के नक्षत्र मृगशिरा में शत्रु के घर में स्थापन करने से दीर्घयात्रा हो जायगी इसमें सन्देह नहीं । यहाँ १४३, १४४ का यन्त्र लिखे ।

अथ उन्मत्तीकरणम्

तालकं धूर्तबीजञ्च घनचूर्णन्तु भक्षयेत् ।
दत्तेमत्तो भवेच्छत्रुः सिताक्षीरैः पुनः सुखी ॥ ३४ ॥

उन्मत्तीकरण : हरताल धतूरे के बीज और मोथे का चूर्ण देते ही शत्रु उन्मत्त हो जाता है। फिर मिश्री और दूध पीने से सुखी होता है।

तालकं लशुनं मूर्ध्नि क्षिप्तं यस्य पिशाचकृत् ।
सुरामांससिताक्षीरं भक्षणाच्च सुखावहम् ॥ ३५ ॥

हरताल और लहसन जिसके ऊपर डाला जाय वह पिशाच तुल्य हो जाता है। सुरा, मांस, सिता (मिश्री) तथा दूध पान करने से उसी समय सुखी होता है।

मध्वाज्याभ्यां स्वर्णमाक्षीं पिष्ट्वा तत्कृत कज्जलम् ।
दत्तं यस्यांजनं नेत्रे उन्मत्तोसौ प्रजायते ॥ ३६ ॥

मधु, घृत तथा सोनामक्खी को पीसकर इसका काजल कर अञ्जन करने को जिसे दे वह उन्मत्त हो जाता है।

गोघृतं सैन्धवं तुल्यं वराहस्य तु पित्तकम् ।
अजाक्षीरेण संयोज्यं पानेनोन्मत्त नाशनम् ॥ ३७ ॥

गाय का घी और सेंधानमक बराबर लेकर बाराह के पित्त तथा बकरी के दूध के साथ सेवन करने से उन्मत्तता का नाश हो जाता है।

मयूर पारावत कुक्कुटानां ग्राह्यं पुरीषं कनकं च तालम् ।
तन्मूर्ध्नि दत्तं कुरुते पिशाचवन्निवर्तते मुण्डित मस्तकेन ॥ ३८ ॥

मोर, कुक्कुट (मुरगा) और कबूतर की बीट ग्रहण कर धतूरे और हरताल के साथ शिरपर डालने से वह प्राणी पिशाचवत् हो जाता है। फिर शिर मुण्डाने से सुखी होता।

गुडं करञ्जबीजं च घनचूर्णं समं समम् ।
फलस्यान्ते प्रदातव्यमुन्मत्तो भक्षणाद्भवेत् ॥ ३९ ॥
शर्कराशतपुष्पाज्यक्षीरपाने सुखावहम् ॥ ४० ॥

गुड़, करंजुए के बीज तथा मोथे का चूर्ण यह समान भाग लेकर फल में देने से भक्षण करते ही उन्मत्त हो जाता है। फिर शक्कर, सौंफ, घृत तथा दूध इनका पान करने से सुखी होता है।

'ॐ नमः उन्मत्ताकारिणि विद्ये ठः ठः' ।
उक्तयोगानामयमेव मन्त्रः ॥ ४१ ॥

इत्युन्मत्तीकरणम् ।

'ॐ नमः उन्मत्तकारिणी विद्ये ठः ठः' पूर्वोक्त योगों का यही मन्त्र है। यहाँ चि १४७ का यन्त्र लिखें।

इति उन्मत्तीकरण।

अथ मारणम्

नरास्थिकीलकं पुष्ये गृह्णीयाच्चतुरंगुलम्।
निखनेद्यस्य गेहे तु भवेत्तस्य कुलक्षयः॥ ४२॥
'ॐ ह्रूं ह्रीं फट् स्वाहा'।

पुष्यनक्षत्र में मनुष्य की चार अंगुली की अस्थि ग्रहण कर कीलकर जिसके घर में गाड़ दे उसके कुल का क्षय हो जाता है। 'ॐ ह्रूं ह्रीं फट् स्वाहा' इसके १००० जप से सिद्धि होती है।

अश्वास्थिकीलमश्विन्यां निखनेच्चतुरंगुलम्।
शत्रु गेहे निहन्त्याशु कुटुम्बं वैरिणां कुलम्॥ ४३॥
हुं हुं फट् स्वाहा सप्ताभिमन्त्रितं शत्रुगेहे निखनेत्कुलक्षयं याति।

घोड़े की अस्थिकील चार अंगुल की अश्विनी नक्षत्र में ग्रहण कर शत्रु के घर में गाड़ने से बैरी के कुटुम्ब और कुल का नाश हो जाता है। 'हुं हुं फट् स्वाहा'। इससे सात बार मन्त्र पढ़कर गाड़ना चाहिये।

ॐ डं डां डिं डीं डुं डूं डें डैं डों डौं डं डः अमुकं गृह्ण गृह्ण हुं हुं ठः ठः अनेन नरास्थि कीलकं सहस्राभिमन्त्रितं चितामध्ये निखनेत् सज्वरेण नश्यति।

'ॐ डं डां डिं डीं डुं डूं डें डैं डों डौं डं डः अमुकं गृह्ण गृह्ण हुं हुं ठः ठः'। इस मन्त्र से मनुष्य की हड्डी की कील सहस्र बार अभिमन्त्रित कर चित्ता में गाड़ने से शत्रु ज्वर से नष्ट होता है। या जिसका नाम लेकर जिसके घर या श्मशान में गाड़े उसका नाश होगा।

ॐ णं णां णिं णीं णुं णूं णें णैं णों णौं णं णः ठः ठः अनेन नरास्थि षडंगुलकीलकं सहस्राभिमन्त्रितं यस्य नाम्ना गृहेश्मशाने वा निखनेत्तस्य सर्वनाशो भवति॥

'ॐ णं णां णिं णीं णुं णूं णें णैं णों णौं णं णः ठः ठः'। इस मन्त्र से छः अंगुल नरास्थि कील लेकर हजार बार मन्त्र पढ़कर जिसके नाम से घर या श्मशान में गाड़े उसका नाश होगा।

'ॐ सुरेश्वराय स्वाहा'।
सर्पास्थ्यंगुलमेकन्तु चाश्लेषायां रिपोर्गृहे।
निखनेत्सप्तधा सप्तं मारयेद्रिपुसन्ततिम्॥ ४४॥

'ॐ सुरेश्वराय स्वाहा' इस मन्त्र से आश्लेषा नक्षत्र में साँप की हड्डी एक अंगुल की लेकर शत्रु के घर में गाड़ने से शत्रु के सन्तान का नाश हो जाता है। सात बार मन्त्र जप कर खनन करे।

'ॐ सीं शोषणे स्वाहा'।

निम्ब षड्बिन्दुकौ ग्राह्यौ विषं त्वग्वानरीफले।
एतच्चूर्णं प्रदातव्यं शत्रुशय्यासनादिषु ॥ ४५ ॥
जायन्तेस्फोटकास्तीव्रा दशाहान्मरणं भवेत्।

'ॐ सीं शोषणे स्वाहा' इस मन्त्र से नीम, षड्बिन्दु विष, कौंच के फल और छाल इनका चूर्ण शत्रु की शय्या-आसनादि में प्रदान करे तो तीव्र स्फोटक हो जाते हैं, जिससे दस ही दिन में मरण हो जाता है।

स्नानभू भूत्र भूमृत्स्ना सर्पवक्त्रे विनिःक्षिपेत् ॥ ४६ ॥
वेष्टयेत्कृष्णसूत्रेण मार्गमध्ये ह्यधीमुखम्।
निखनेन्म्रियते शत्रुः समुत्थाने सुखीभवेत् ॥ ४७ ॥

जिसके स्नानस्थान और मूत्रस्थान की मिट्टी सर्प के मुख में डाल दे और उसे काले सूत्र से वेष्टित करके मार्ग के मध्य में नीचे को मुखकर लटका दे तो वह शत्रु मरने लगता है और उखाड़ने से सुखी होता।

वामदन्तं कुलीरस्य ह्यधोभागस्य चाहरेत्।
शराग्रे फलकं कुर्य्याद्धनुश्च चित्रकेन्धनैः ॥ ४८ ॥
गवाशिरागुणं कृत्वा शत्रुं कुर्य्याच्च मृन्मयम्।
तद्वज्जातेन बाणेन म्रियते तत्क्षणाद्रिपुः ॥ ४९ ॥

केकड़े के नीचे के भाग का बायाँ दाँत लावे, उसको बाण के आगे फल में लगावे और सावधानी से रक्षा करे। चित्रक का धनुष बनावे, धेनु की शिरा का डोरा डाले, मिट्टी की शत्रु की मूर्ति बनावे और उसपर इस बाण का प्रहार करे तो उस बाण से प्रहार करते ही उसी समय शत्रु मर जाता है।

आर्द्रायां निम्बवन्दाकं शत्रोः शयनमन्दिरे।
निखनेन्म्रियते शत्रुरुद्धृते च पुनः सुखी ॥ ५० ॥
तथा शिरीषवन्दाकं पूर्वोक्तेनोद्धृनाहरेत्।
शत्रोर्गेहे स्थापयित्वा रिपोर्नाशो भविष्यति ॥ ५१ ॥

आर्द्रा नक्षत्र में नीम का वन्दा लाकर शत्रु के शयनस्थान में गाड़ने से शत्रु मर जाता है। उखाड़ने से सुखी होता है। इसी प्रकार सिरस का वन्दा लाकर शत्रु के घर में स्थापन करने से शत्रु का नाश हो जाता है।

कृष्णवृषभ रक्तेन गङ्गामृत्तिकया सह ।
तिलकं भालदेशे च कृत्वा सम्भावयेत्तुयम् ॥ ५२ ॥
विद्धः स्यात्तत्क्षणादेव प्रोञ्छिते च शुभं भवेत् ।

काले वृषभ के रक्त और गङ्गा की मृत्तिका का तिलक माथे पर कर जिसको सम्भावित करे वह विद्ध होता है; फिर तिलक दूर करनेसे शुभ होता है।

कृष्णछागाश्वपादस्य खुरस्थं रोमकं हरेत् ॥ ५३ ॥
कृष्णकुक्कुट काकस्य ग्राह्यं पक्ष चतुष्टयम् ।
सर्वं दग्धवा तु भांडान्तस्तद्भस्म जलसंयुतम् ॥ ५४ ॥
ललाटेतिलकं कृत्वा वामहस्त कनिष्ठया ।
यं शिरोनम्यते तस्य वेधोभवति निश्चितम् ॥ ५५ ॥

काले बकरे और घोड़े के पैरों के खुर के बाल और काले मुरगे तथा कौए के चार पङ्ख लेकर इन्हें जलाकर इसकी भस्म बरतन में रखे। पानी में मिलाकर वाम हाथ की कानी अंगुली से माथे पर तिलक कर जिसके सामने झुके उसका अवश्य वेध होगा।

ऊर्णनाभिश्च षड्बिन्दः समांसं कृष्णवृश्चिकम् ।
यस्यांगे तत्क्षिपेच्चूर्णं सप्ताहात्स्फोटकं भवेत् ॥ ५६ ॥
मयूरपुच्छं नीलाब्जं पिष्ट्वा लेपैः सुखावहम् ।

ऊर्णनाभि षड्बिन्दुकीट और उसके बराबर काले वृश्चिक का चूर्ण कर जिसके शरीर पर डाले उसके सात दिन में फोडे हो जाते हैं। फिर वह मोरपिच्छ तथा नीलकमल का लेप करने से सुखी होता है।

रिपुविष्ठां वृश्चिकं च खनित्वा भुवि निःक्षिपेत् ॥ ५७ ॥
आच्छाद्य प्रावरेणाथ तत्पृष्ठे मृत्तिकां क्षिपेत् ।
म्रियते मलरोधेन उद्धृते च पुनः सुखी ॥ ५८ ॥

वृश्चिक और शत्रु की विष्ठा पृथ्वी में खोदकर डाल देने से शत्रु का मल रुक जायगा और वह मृत्यु को प्राप्त होगा। उखाड़ने से सुखी होगा।

ॐ ह्रींक्षः अमुकंक्षम् । अनेन मन्त्रेण राजिका लवणेन शिवनिर्माल्यानि कटुतैलेन सहस्रहोमात् शत्रोर्वधः ॥ ५९ ॥

'ॐ ह्रीं क्षः अमुकं क्षम्' इस मन्त्र से राई, नमक और शिवनिर्माल्य की कटु तेल के साथ सहस्र आहुती देने से शत्रु का वध होता है। यहाँ चित्र १४६, १४८, १५० के यन्त्र लिखें।

इति मारण।

अथ अश्वनाशनम्

कृष्णजीरचूर्णेन अञ्जिताश्वोन पश्यति ।
तक्रेण क्षालयेच्चक्षुः सुस्थो भवति घोटकः ॥ ६० ॥

काले जीरे का चूर्ण आँख में डालने से घोड़ा अन्धा हो जाता है, फिर मुठ्ठे से आखें धोने से स्वस्थ हो जाता है ।

घ्राणे छुछुन्दरीचूर्णं दत्तो पतति घोटकः ।
सुस्थश्चन्दन पानेन नस्यं प्राप्य न संशयः ॥ ६१ ॥

मरे छछुन्दर को सुखाकर उसका चूर्ण सुंघाते ही घोड़ा गिर जाता है । फिर चन्दन की नस्य देने से या पान कराने से स्वस्थ हो जाता है इसमें सन्देह नहीं ।

अश्वास्थिकीलमश्विन्यां कुर्य्यात्सप्तांगुलं पुनः ।
निखनेदश्वशालायां मारयत्येव घोटकान् ॥ ६२ ॥
भरण्यामुक्तमन्त्रेण चितिकाष्ठस्य कीलकम् ।
अष्टांगुलन्तु निखनेदश्वशाला विनश्यति ॥ ६३ ॥
'ॐ नमो भगवते रुद्राय ॐ अश्वान्हन हन स्वाहा ॐ पच पच स्वाहा' ।

इत्यश्वनाशनम् ।

अश्विनी नक्षत्र में घोड़े की अस्थि की कील सात अंगुल की बनावे । उसे अश्वशाला में गाड़ने से घोड़े मर जाते हैं । यही भरणी का फल है । चितिकाष्ठ की अष्टांगुल कीलक अश्वशाला में गाड़ने से घुड़साल नष्ट होती है । मन्त्र यह है : 'ॐ नमो भगवते रुद्राय ॐ अश्वान् हन हन स्वाहा ॐ पच पच स्वाहा' ।

इति अश्वनाशन ।

अथ शस्यनाशनम्

पुनर्वसौ चितिकाष्ठ कीलकं त्र्यंगुलं क्षिपेत् ।
शताभिमन्त्रितं क्षेत्रे शस्यं तत्र विनश्यति ॥ ६४ ॥
'ॐ लोहितमुखे स्वाहा ।

पुनर्वसु नक्षत्र में चिति के काष्ठ की कील तीन अंगुल के प्रमाण की सौ बार अभिमन्त्रित कर खेत में डालने से खेती नष्ट हो जाती । 'ॐ लोहितमुखे स्वाहा' यह मन्त्र है ।

आर्द्रायां निः क्षिपेत्कीलं भल्लूकस्यास्थि सम्भवम् ।
क्षेत्रमध्ये तदा शत्रो. शस्यं सर्वं विनश्यति ॥ ६५ ॥

आर्द्रा नक्षत्र में भालू की अस्थि की कील शत्रु की खेती में डाल देने से सब खेती नष्ट हो जाती है ।

विशाखायां कालिकाष्ठ कीलमष्टांगुलं क्षिपेत् ।
कदलीवाटिका मध्ये नाशयेत्कदलीफलम् ॥ ६६ ॥

विशाखा नक्षत्र में बेरी के काष्ठ की आठ अंगुल कील कदली की वाटिका में डालने से केले की फली नष्ट हो जाती है। इति शस्यनाशन ।

अथ रजकस्य वस्त्रनाशनम्

पूर्वाफाल्गुनि नक्षत्रे जातिकाष्ठस्य कीलकम् ।
अष्टांगुलप्रमाणं तु निखनेद्रजक गृहे ।
शताभिमन्त्रितं तेन तस्यवस्त्राणि नाशयेत् ॥ ६७ ॥
'ॐ कुम्भं स्वाहा' ।
इति रजकस्य वस्त्रनाशनम् ।

धोबी के वस्त्र नष्ट करना : पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में जातीफल के काठ की आठ अंगुल प्रमाण की कील सौ बार अभिमन्त्रित कर धोबी के घर में गाड़ने से रजक के वस्त्र नष्ट हो जाते हैं। 'ॐ कुम्भं स्वाहा' यह यन्त्र है।
इति रजकवस्त्रनाशन ।

अथ धीवरस्य मत्स्यनाशनम्

संग्राह्यं पूर्वफाल्गुन्यां बदरीकाष्ठकीलकम् ।
अष्टांगुलं च निखनेन्नाशयेद्धीवरे गृहे ॥ ६८ ॥
'ॐ जले स्वाहा । ॐ मत्स्यिका स्वाहा' ॥
मन्त्रद्वयस्य तुल्यं फलम् ।
सप्तांगुलं मघाऋक्षे भल्लातं काष्ठकीलकम् ।
गृहीत्वा दासगेहे तु देयं मत्स्यान्विनाशयेत् ॥ ६९ ॥

पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में बेरी के लकड़ी की आठ अंगुल की कील ग्रहण कर धीवर के घर में गाड़ने से मछलियों का नाश हो जाता है। मन्त्र ये हैं : 'ॐ ज्वल ज्वल स्वाहा' अथवा 'ॐ जले स्वाहा', 'ॐ मत्स्यिका स्वाहा' तीनों मन्त्र समान रूप से फलदायक हैं। अथवा मघा नक्षत्र में सात अंगुल का भिलावे का काष्ठ धीवर के घर में गाड़ने से मछलियों का नाश हो जाता है।

कृत्तिकायामर्कंकाष्ठं कीलकं त्र्यंगुलं क्षिपेत् ।
शत्रोर्वापीह्रदादौ च मत्स्यस्तत्र विनश्यति ॥ ७० ॥

कृत्तिका नक्षत्र में आक की लकड़ी तीन अंगुल की लेकर धीवर शत्रु की बावड़ी या ह्रदादि में डालने से उसमें की मछलियाँ नष्ट हो जाती हैं।
इति कैवर्त्तमत्स्यनाशन ।

अथ कुम्भकारस्य भाण्डनाशनम्

हस्ते वै चांगुलं कीलं करवीरस्य काष्ठजम् ।
निखनेत्कुम्भकारस्य शालायां भाण्डनाशकृत् ॥ ७१ ॥

कुम्भकार के बरतनों का नाश करना : हस्तनक्षत्र में तीन अंगुल कनेर की लकड़ी लेकर कुम्हार के घर में गाड़ने से उसके बरतन टूट जाते हैं ।

पञ्चागुलं निम्बकीलं तद्दक्षे पूर्ववत्फलम् ।

अथवा पूर्वोक्त नक्षत्र में पाँच अंगुल नीम की कील गाड़ने से पूर्ववत् फल होता है ।

गोक्षुरं मेषशृङ्गं च बीजं वा कोकिलाक्षकम् ॥ ७२ ॥
शूकरस्य मलं वाथ मूलं वा श्वेतगुञ्जकम् ।
पाकस्थाने तु भाण्डानां क्षिप्रं स्फोटयते ध्रुवम् ॥ ७३ ॥

गोखरू, मेढासींगी, तालमखाने, शूकर का मल अथवा श्वेत चौंटली की जड़ डालने से अवश्य बरतन फूट जाते हैं ।

तालं करञ्जबीजं च टंकणेन समन्वितम् ।
कृत्वा भाण्डाः स्फुटंत्येवमुक्तानां मन्त्र उच्यते ॥ ७४ ॥

हरताल और करञ्ज के बीज, सुहागा यह सब वस्तु डालने से आंवे के बरतन टूट जाते हैं ।

'ॐ मद मद स्वाहा । ॐ गुरु हर स्वाहा' ॥

अथवा 'ॐ दमन्य दमन्य स्वाहा' मन्त्रत्रयस्य तुल्यं फलम् ।

उक्त योगों में 'ॐ मद मद स्वाहा', 'ॐ गुरु हर स्वाहा' अथवा 'ॐ दमन्य दमन्य स्वाहा' इन तीनों मन्त्रों का बराबर फल है ।

इति कुम्भकारभाण्डनाशन ।

अथ तैलिकस्य तैलनाशनम्

मधुमस्य तु कीलन्तु चित्रायां चतुरंगुलम् ।
निखनेत्तैलशालायां तैलं तत्र विनश्यति ॥ ७५ ॥

तेली का तेल नष्ट करना : चित्रा नक्षत्र में चार अंगुल मुलेठी की कील तेलशाला में डालने से तेल नष्ट हो जाता है ।

'ॐ दह दह स्वाहा' सहस्रजपः ।
भल्लातकाष्ठं चित्रायां निखनेत्तैलिके गृहे ।
अष्टांगुलं तदा तत्र ग्राहको न हि गच्छति ॥ ७६ ॥

'ॐ दह दह स्वाहा' । इस मन्त्र का सहस्र जप करके भिलावे की लकड़ी

चित्रा नक्षत्र में आठ अंगुल की तेली के घर गाड़ देने से उसके यहाँ कोई ग्राहक नहीं जाता।

अथ गोपानां गवां क्षीरनाशनम्

निक्षिपेदनुराधायां जम्बूकाष्ठस्य कीलकम्।
अष्टांगुलं गोपगेहे गोदुग्धं च विनश्यति ॥ ७७ ॥

ग्वालों की गायों का दूध नष्ट करना : अनुराधा नक्षत्र में जामुन की कील आठ अंगुल की घोसी के घर में डालने से उसका दूध नष्ट हो जाता है।

अथ वारिजस्य पर्णनाशनम्

नवांगुलं पूगकाष्ठकीलकं निक्षिपेद्गृहे।
ताम्बूलिकस्य क्षेत्रे वा ऋक्षे शतभिषाह्वये।
तदा तस्य च ताम्बूलं नाशमायाति निश्चितम् ॥ ७८ ॥

तम्बोली के पत्ते नाश करना : नौ अंगुल की सुपारी के काठ की कील शतभिषा नक्षत्र में तम्बोली के घर में डालने से अवश्य ताम्बूलों का नाश हो जाता है।

अथ शाकनाशनम्

गन्धकं चूर्णकं तत्र क्षिपेज्जलयुतेनवै।
नश्यन्ति सर्वशाकानि शेषान्यल्पबलानि च ॥ ७९ ॥

गन्धक का चूर्ण जल के साथ डालने से खेत में से सर्व शाक नष्ट हो जाते हैं और शेष शाक निस्तेज हो क्रमशः सूख जाते हैं।

तन्तुवायस्य सूत्रनाशनम्

अश्विन्यां जाम्बिरं काष्ठं तन्तुवाय गृहे क्षिपेत्।
द्वादशांगुलमानन्तु सूत्रं तत्र विनश्यति ॥ ८० ॥

तन्तुवाय का सूत्रनाशन : अश्विनी नक्षत्र में बारह अंगुल जम्बीरी की कील जुलाहे के घर में डालने से उसके तागे नष्ट हो जाते हैं।

अथ शौंडिकस्य मदिरानाशनम्

कृत्तिकायामर्ककाष्ठं षोडशांगुलकं क्षिपेत्।
शौण्डिकस्य च गेहे च मदिरा तत्र नश्यति ॥ ८१ ॥

कृत्तिका नक्षत्र में आक की लकड़ी सोलह अंगुल कलाल के घर में डालने से उसकी मदिरा नष्ट हो जाती है।

अथ कर्मकारस्य लोहनाशनम्

रोहिण्यां बदरीकाष्ठं कीलमेकादशांगुलम् ।
कर्मकार गृहे क्षिप्तं लोहं तप्तं भवेन्नहि ॥ ८२ ॥

लोहार का लोहनाशन : रोहिणी नक्षत्र में बेरी के काष्ठ की ग्यारह अंगुल की कील लोहार के दूकान में गाड़ने से लोहा तप्त नहीं होता ।

इति कर्मकार लोहनाशन ।

अत्र[1] पारीश सम्भ्रम कायवेधच्छेदक ज्ञानविज्ञानना फूटै। अमुकार-कायं हूँकलिकाचण्डी तुं इमोरमाशिल पाथरंपड़े अमुकार गामे मारे ससमारै पुत्रीमारौं तारक उलटा वेधे विरूपाक्षं रिवानी उलटावेधे पित्रपानी जेमोरपिडे करे घाउ लटावेधे ताक ताक जुरी खाफोट फोट दण्डी विरूपाक्षेर आज्ञावारत्रयं पठित्वा प्रतिप्रातः। त्रिगण्डूषजलं पेयं यदि केनापिविद्धं स्यात् । शरारन्तदैवतेन कार्यमिति ॥ ८३ ॥

मन्त्र : 'अमु पानीरा शम्भुकाय वेष छेदक ज्ञान विज्ञाननाफूटै अमुकार-कायं हूं कलिका चण्डीतु इमोरमा शिल पाथरपडे अमुकार गामै मारै ससमारै पुत्री मारौं तारक उलगैं वेधे विरूपाक्ष रिवानी उलटावेधे पित्र पानी जो मोर पिण्डे करै वा उलटा वेध ताक ताकतुजी खा फोट फोट दण्डी विरूपाक्षेर आज्ञा' । इसे तीन बार प्रति प्रातःकाल पढ़ने और तीन घूंट जल पीने से किसी से विद्ध हो तो शशीर का वेध छूट जाता है ।

इति श्रीकामरत्ने नित्यनाथविरचिते भाषाटीकायांउच्चाटनादि कर्मकारलोहनाशनं नाम दशमोपदेशः ॥ १० ॥

---

१ दूसरी लिपि में इस प्रकार है : अब पारीस संभ्रम कायवेध छेद का ज्ञान विज्ञान फुटै अमुकारगाय हूंकाचण्डीतो इमोरमाशिल पाथरपरै अमुकार गासे मारैससमारै मुमारै रौडांब उलटावेधे विरूपाक्ष विराली उलटावेधे पिण्डोमानीपै । मोरे पिडेकरे घाउलटावेधे डांकतुलखाः फोड़ फोड़ दण्डी विरूपाक्षरे आज्ञा वारत्रय पडिआ प्रातःकाल तीन गण्डूस पानी पिय ।

अथ नानाकौतुकम्

शिखिनस्तु शिखाचूर्णं भोजयेद्दिनसप्तकम् ।
तद्विष्ठालिप्तहस्तस्य द्रव्यं शक्नोति तत्क्षणात् ॥ १ ॥

मोर को मोर की शिखा (कलिहारी) का चूर्ण सात दिन तक भोजन करावे। फिर उसकी विष्ठा से हाथ लपेटने से तत्काल द्रव्य लुप्तरूप हो जाता है।

सप्ताहं तिलतैलेन भावयेदातपेखरे ।
अङ्कोलिबीजचूर्णन्तु योज्यं पेष्यं पुनः पुनः ॥ २ ॥
तत्तैलं ग्राहयेद्यत्नात्तैलकारस्य यन्त्रतः ।
अथवा कांस्यपात्रे द्वे तेन कल्केन लेपयेत् ॥ ३ ॥
उत्थाप्य स्थापयेद्धर्मे सम्मुखन्तु परस्परम् ।
तयोरधः कांस्य पात्रे पतितं तैलमाहरेत् ॥ ४ ॥
इदमेवांगुली तैलं सिद्धं सर्वत्र योजयेत् ।
लिप्तमंगुलि तैलेन मण्डितं तत्क्षणाद्दिशेत् ॥ ५ ॥
सफलो जायते वृक्षस्तत्क्षणान्नात्र संशयः ।
पद्मिनी बीजचूर्णन्तु भाव्यमंगुलितैलतः ॥ ६ ॥
न्यस्तं जले महाश्चर्यः तत्क्षणात्पद्मं सम्भवः ।
यानि कानि च बीजानि जलस्थलजानि च ॥ ७ ॥
अंगुलीतैललिप्तानि तानितान्युद्भवन्ति च ।
यत्किञ्चित्काण्डमूलोत्थं पत्रपुष्पफलादिकम् ॥ ८ ॥
अंगुली तैललिप्तन्तु तुल्य रूपं भवेद्ध्रुवम् ॥ ९ ॥

सात दिन तक तिल के तेल से अंकोल के बीजों के चूर्ण को भावना देकर धूप में सुखावे और बारम्बार सुखाकर पीसे। उसके तेल को कोल्हू में पेरवा ले अथवा कांसे के दो पात्र उसके कल्क से लेप करे। फिर उसको उठाकर धूप में सामने रक्खे और उसके नीचे कांसे का बर्तन रख दे, उसमें जो तेल गिरे उसे ग्रहण कर ले। यह अंगुली-तेल सिद्ध और सब कर्मयोगों में प्रयोग करे। अंगुली में तेल लगाकर फेरने से उसी समय मण्डन होता है। वृक्ष पर लगाने से उसी समय वृक्ष फलयुक्त हो जाता है इसमें सन्देह नहीं। एक अंगुली तेल में कमलगट्टे की भावना देने से जल में रखने से उसी समय कमल की उत्पत्ति

हो जाती है। जितने जलस्थल के वृक्षों के बीज हैं एक अंगुली मात्र तेल लगाने से उसी समय जम जाते हैं। जो कुछ काण्डमूल से उठे हुए पत्र, पुष्प, फल आदिक हैं अंगुली से तेल मात्र लगा देने से मुण्डितरूप तुल्यरूप निश्चय हो जाते हैं।

गुञ्जाफलाम्बु पिष्टं च लेपयेत्पादुकाद्वयम्।
विनाक्लेशं नरोगच्छेत्क्रोशमेकं न संशयः॥ १०॥

जल में चौंटली पीसकर उसका लेप खड़ाउओं पर करने से पैर धोकर उसके ऊपर मनुष्य चढ़कर एक कोश तक जा सकता है इसमें सन्देह नहीं।

लघुदारुमयं पीठं गुञ्जापिष्टेन लेपयेत्।
शुष्कमन्तर्जलैः सार्द्धमुपविष्टं न मज्जति॥ ११॥

चौंटली पीसकर छोटी काठ की चौकी को लेपित करे। सुखाकर जल में चौकी पर बैठने मे चौकी उससे पृथक् नहीं होती।

गुञ्जाबीजं त्वचोन्मुक्तं चूर्णं भाव्यं नृमूत्रकैः।
सप्तवारं तत. काष्ठं लिप्तमंगुलसम्भवम्॥ १२॥

चौंटली के बीजों की छाल अलग कर मनुष्य के मूत्र में चूर्ण कर सात बार काष्ठी पर लेप करने से अंगुलवत् हो जाती है।

तैलमादाय तल्लिप्तं पूर्ववत्पादुका गतिः।

तेल लेकर पूर्ववत् दोनों खड़ाउओं को लिप्त करे तो पूर्ववत् विना खूंटी के खड़ाऊँ पर जा सकता है।

वर्तिसर्ज्जरसैः पूर्णातैल लिप्ता जलेस्थिता॥ १३॥
ज्वालितादीपवर्तिस्तु ज्वलत्येव न संशयः।

राल की बत्ती करके तेल से लिप्त करके जल में स्थित रखने से वह बत्ती बराबर जलती रहेगी इसमें सन्देह नहीं।

कटु तुंब्युत्थतैलेन पारावत चटोद्भवम्॥ १४॥
मलं च शिखिमूलं च पेषितं गर्दभास्थिजम्।
ललाटे तिलकं तेन कृत्वा संदृश्यते पुनः॥ १५॥
दशास्यो नात्र सन्देहो यथालंकेश्वरो नृपः।

कडवी तुम्बी के तेल से कबूतर और चटक की वीट और मूलशिखा की जड़, गदर्भ की हड्डी के साथ पीसकर माथे पर तिलक लगाने से वह पुरुष दश शिर वाले रावण के समान दिखाई पड़ता है इसमें सन्देह नहीं।

शिग्रुबीजोत्थितं तैलं पारावतपुरीषकम्॥ १६॥
बराहस्य वसायुक्तं शिखिमूल समं समम्।

ललाटे तिलकं तेन यः करोति स वै जनैः ॥ १७ ॥
दृश्यते पञ्चवक्त्रोऽसौ यथा साक्षान्महेश्वरः ।

सहिजने के बीजों का तेल, कबूतर की वीट, वाराह की चरबी और शिखिमूल यह सब समान भाग लेकर जो मनुष्य माथेपर तिलक करे वह पाँच मुखवाला साक्षात् महेश्वर के समान दिखाई पड़ता है।

रात्रौ कृष्णचतुर्दश्यां मयूरास्ये विनिःक्षिपेत् ॥ १८ ॥
भृङ्गीबीजं मदःकृष्णां कृष्णभूमौ निवापयेत् ।
तज्जात भार्ङ्गीसंगृह्य तया कुर्यात्तु रज्जुकम् ।
तद्रज्जुबद्धः पुरुषो मयूरो दृश्यते जनैः ॥ १९ ॥

कृष्ण चतुर्दशी की रात्रि में मोर के मुख में अतिविष के बीज, सोमराजी और भारङ्गी डालकर काली मिट्टी में बोवे। जब वह उत्पन्न हो जाय तब उसकी रस्सी बटकर जिस मनुष्य को उससे बाँधे वह अन्य मनुष्यों को मोर जैसा दिखाई पड़ेगा।

तद्योगे कृष्णमार्जार वक्त्रे चैरण्डबीजकम् ।
तज्जातैरण्डबीजानामेकवक्त्रेण धारयेत् ॥ २० ॥
तं प्रपश्यन्ति मार्जारं मनुष्या नात्र संशयः ।

इस योग में कृष्ण बिलाव के मुख में अरण्ड के बीज बोवे। उससे उत्पन्न हुए अरण्ड के बीजों को एकत्रित करके मुख में धारण करने से साधक को अन्य लोग बिलाव की सूरत वाला देखते हैं इसमें सन्देह नहीं।

शृगालश्वानमेषांश्च यद्दिने वापयेत्पृथक ॥ २१ ॥
मयूरास्ये यथा भार्ङ्गी याति सिद्धिश्च तादृशी ।

गीदड़, कुत्ता, मेढा इनके मुख में पृथक्-पृथक् यही डालने से मोर के मुख में जैसे भृङ्गी सिद्ध होती है वैसी सिद्धि होती है।

रक्तगुञ्जाफलं वाप्यं स्त्री कपालेऽथ सेचयेत् ॥ २२ ॥
जातंफलं क्षिपेद्वक्त्रे स्त्रीरूपो दृश्यते पुमान् ।

लाल चौंटली के फल को धोकर स्त्री के कपाल में बोकर उसका सिंचन करे। उससे जो फल उत्पन्न हो उसे मुख में रखने से स्त्रीरूप दिखाई पड़ेगा।

नरादिसर्वजन्तूनां ग्राह्यं सद्योहृतं शिरः ॥ २३ ॥
तच्च कृष्णचतुर्दश्यां सर्वबीजान्वितं वपेत् ।

भृङ्गी धत्तूरबीजानि गुञ्जा[1]नीवैक संयुतम् ॥ २४ ॥
निखनेत्कृष्णभूम्यां तु बलिपूजा समन्वितम् ।
सेचयेत्फलपर्यन्तं यावद्बीजानि चाहरेत् ॥ २५ ॥
तत्तद्बीजे कृते वक्त्रे तत्तद्रूपं भवेद्ध्रुवम् ।
इत्येवं कौतुकं लोके नानारूपस्य दर्शनम् ॥ २६ ॥
मुक्तबीजो भवेत्स्वस्थो नात्रकार्याविचारणा ।

मनुष्यादि सम्पूर्ण जन्तुओं का तत्काल हत हुआ शिर ग्रहण कर कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को उसमें सब प्रकार के बीज बोवे । भाँगरा, धतूरा, एरण्ड, चौंटली यह सब एकत्र कर कृष्णभूमि में बलिपूजा के सहित उसको गाड़ दे और फलपर्यन्त सींचता रहे । उसी के समान बीजों को लेकर जैसा-जैसा बीज मुख में रखता जाय वैसा-वैसा रूप दिखाई पड़ता है, इस प्रकार लोक में अनेक रूपों का दर्शन होता है । बीजों को त्यागने से स्वस्थ हो जाता है इसमें सन्देह नहीं ।

हरितालं शिलाचूर्णमंगुलीतैल भावितम् ॥ २७ ॥
तल्लिप्तवस्त्रं शिरसिस्थितं पश्यति वह्निवत् ।
तथैवांकोलतैलेन स्फुरत्येव न संशय ॥ २८ ॥

हरिताल और मैनशिल का चूर्ण मालकांगनी के तेल में भावित कर उसे वस्त्र पर लगाकर शिरपर रात में धारणकर अग्नि के समान दिखाई पड़ता है । इसी प्रकार अंकोल के तेल से दिखाई पड़ता है इसमें सन्देह नहीं ।

सिन्दूरं गन्धकं तालं समम्पिष्ट्वा मनश्शिलाम् ।
तल्लिप्तवस्त्र धृक्त्वाऽसौ रात्रौ संदृश्यतेऽग्निवत् ॥ २९ ॥
दूरेऽपि स्थित लोकैश्च रात्रौ तु कौतुकं महत् ।

सिन्दूर, गन्धक, हरताल और मैनशिल को पीसकर उसे कपड़े में लगाकर धारणकर रात में जाने से अग्नि के समान दिखाई पड़ता है । इससे दूर से स्थित हुए पुरुषों को रात्रि में बड़ा कौतुक प्रतीत होता है ।

खद्योत भूलताचूर्णं ललाटे तिलके कृते ॥ ३० ॥
रात्रौ संदृश्यते ज्योतिः तस्मिन्स्थाने तु कौतुकम् ।

खद्योत और हरताल के चूर्ण का माथे पर तिलक करने से रात्रि में बड़ी ज्योति और कौतुक दिखाई पड़ता है ।

मुनिपुष्परसैः पुष्पैर्घृष्ट्वा श्वेतांजनं ततः ॥ ३१ ॥
अंजिताक्षो नरः पश्येन्मध्याह्ने तारकामयम् ।

---

१ गुल्मंनिम्बफलंयुतम् पाठः ।

वाप्यं वार्त्ताकुबीजं च नृकपाले मृदा सह ॥ ३२ ॥
तज्जात बीजमूलं वा मुखे प्रक्षिप्य मानवः ।
शतयोजन पर्यन्तं[1]पश्येत्सर्वं यथान्तिकम् ॥ ३३ ॥

अगस्त्य के फूलों के रस में श्वेत अंजन घिसकर आँखों में लगाने से मध्याह्न के समय मनुष्य को जल में तारे दिखाई पड़ने लगते हैं; बैंगन के बीज मनुष्य की खोपड़ी में डालकर बोने से उससे उत्पन्न बीज या जड़ को मुख में रखने से सौ योजन की वस्तु निकट दिखाई पड़ने लगती है ।

वारिमक्षिकया सार्द्धं तज्जलं यस्य भक्षणे ।
दीयते निःसरेत्तस्य ह्यधोवायुस्तु कौतुकम् ॥ ३४ ॥

जलमक्षिका के साथ जिसे भक्षण करने को जल दिया जाय उसकी अधोवायु में वही मक्खी कौतुकयुक्त निकलती है ।

'ॐनमो भगवते रुद्राय उड्डामरेश्वराय[2] बहुरूपाय नानारूपधराय हस हस नृत्य नृत्य तुद तुद नानाकौतुकेन्द्रजालदर्शकाय ठः ठः स्वाहा' ।
अनेन सर्वयोगानामभिमन्त्र्य सिद्धिः ।
अष्टोत्तरजपेन पुरश्चरणम् ।

इति नानाकौतुकम् ।

'ॐ नमो भगवते रुद्राय उड्डामरेश्वराय बहुरूपाय नानारूपाय हस हस नृत्य नृत्य तुद तुद नानाकौतुकेन्द्रजालदर्शकाय ठः ठः स्वाहा' इस मन्त्र से अभिनन्त्रित करने से सब योगों की, जो ऊपर लिखे हैं, सिद्धि होती है । एक सौ आठ बार जपकर पुरश्चरण करे ।

इति नानाकौतुकसिद्धि ।

अथ खड्गस्तम्भनम्

सिद्धि[3] 'वस्तु सुमति मोहरमा चान्द्रसुरज मोहो वरभाई मोहो वरं आगेको पखाण्डा फूटै रक्षाकर देवी कालिका चण्डी आई चांद सुरज तुजि मले मुजि फूटैरामेर आज्ञा सिद्धि' उकवारत्रयाभिमन्त्रितम् ।
धूलिनाप्रोक्षिते गात्रे कृपाण धारारेखा भवति नान्यतः ॥

इति खड्गस्तम्भनम् ।

---

१ 'सपश्येद्गरुडोयथा' वा इति पाठः । २ 'वज्ररूपाय' वा पाठः ।

३ सिद्धिर्वसुमतिमोहोरमावादसुरजमोहोरमाइमोरअंगेकोपखाडाफूटइहु-रक्षाकरैदेवीकालिकाचण्डीआई० चन्द्रसुरजइमइलेमुईफूटैरौमेरआज्ञासिद्धहलव ।

अथवा 'वस्तु सुमति मोहोरमाचान्द्र सुरज मोहो वर भाई मोह वर आगे कोप खाण्डा फूटै रक्षाकर देवी कालिका चण्डी आइ चांद सुरज तुजि मले मुजि फूटैरामेर आज्ञा सिद्धि' तीन बार इस मन्त्र से अभिमन्त्रित कर धूलि से शरीर को आच्छादित करे तो कृपाण धारा रेखावत हो जाती है। इसमें अन्यथा नहीं है अर्थात् खड्गबन्धन हो जाता है।

इति श्रीनित्यनाथविरचिते कामरत्ने भाषाटीकायां
नानाकौतुकंनामैकादशोपदेशः ॥ ११ ॥

अथ काम्यसिद्धिः

पुष्यार्के तु समागृह्य मूलं श्वेतार्क सम्भवम् ।
अंगुष्ठ प्रमिता तस्य प्रतिमां तु प्रपूजयेत् ॥ १ ॥
गणनाथ स्वरूपां च भक्त्यारक्ताश्वमारजैः ।
कुसुमैश्चापि गन्धाद्यैर्हविष्याशी जितेन्द्रियः ॥ २ ॥
पूजये¹न्नाममन्त्रैश्च तद्बीजानि नमोंतकैः ।
यान्यान्प्रार्थयते कामान्मासैकेन तु तान् लभ्यते ॥ ३ ॥

काम्यसिद्धि : पुष्य नक्षत्र में रविवार को श्वेत आक की जड़ ग्रहण कर उसकी एक अंगुष्ठ के समान प्रतिमा बनाकर पूजन करे और गणनाथ का भक्त्यादि उपचार तथा लाल कनेर के कुसुम गन्धादि से पूजन कर हविष्यान्न खाकर जितेन्द्रिय रहे। नाममात्र से पूजा करे और बीजादि के अन्त में 'नमः' लगावे। इस प्रकार पूजन करने से जिस जिस वस्तु की इच्छा करेगा वह एक मास में पूर्ण होगी।

प्रत्येकं काम्यसिद्ध्यर्थं मासमेकं प्रपूजयेत् ॥ ४ ॥

प्रत्येक कामना की सिद्धि के निमित्त एक महीने तक पूजा करनी चाहिये।

गणेशबीजमाह । पश्चान्तकं ॐ अन्तरिक्षाय स्वाहा ।
अनेन पूजयेत् । पश्चान्तकं गणेश शशिधरं बीजं गणपतेर्विदुः ।
ॐ ह्लीं पूर्वदयां ॐ ह्लीं फट् स्वाहा ॥
अनेन मन्त्रेण रक्ताश्वमारपुष्पाणि घृतक्षौद्रयुतानि जुहुयात् ।
वांछितं ददाति ।

---

१ वाममन्त्रैरितिपाठः ।

ॐ ह्रीं श्रीं मानसे सिद्धिकरि ह्रीं नमः ।
अनेन मन्त्रेण रक्तकुसुमेकं जप्त्वा नद्यां क्षिपेत् ॥
एवं लक्षं जपेत्ततो भगवतो वरदा अष्टगुणानामेकं गुणं ददाति ।
इति काम्यसिद्धिः ।

गणेशबीज कहते हैं : 'ॐ पञ्चान्तं ॐ अन्तरिक्षाय स्वाहा' इससे पूजन करे तथा पाँच अक्षर नीचे लिखे । यह गणपति बीज है : 'ॐ ह्रीं पूर्व दयां ॐ ह्रीं फट् स्वाहा' इस मन्त्र से लाल कनेर का फूल, घृत और शहद के सहित हवन करने से मनोवांछित फल की प्राप्ति होती है । 'ॐ ह्रीं श्रीं मानसे सिद्धिकरि ह्रीं नमः' इस मन्त्र से एक लाल फूल मन्त्रित कर नदी में डाल दे । इस प्रकार लक्ष जप करने से वरदायक होता है और अष्टगुणों में एक गुण देता है ।

इति काम्यसिद्धिः ।

अथ वाक्सिद्धिः

कृत्तिकायां स्नुहीवृक्ष वंदाकं धारयेत्करे ।
वाक्सिद्धिर्भवेत्तस्य महाश्चर्यमिदं स्मृतम् ॥ ५ ॥

वाक्सिद्धिः । कृत्तिका नक्षत्र में सेंहुड़ (थूहर) नाम के वृक्ष का वन्दा हाथ में धारण करने से वाक्सिद्धि होती है यह महाश्चर्य है ।

मन्त्रेण ग्राहयेत्स्वातीनक्षत्रे बदरीभवम् ।
वन्दाकं तत्करे धृत्वा यद्वस्तु प्रार्थ्यते नरैः ॥ ६ ॥
तत्क्षणात्प्राप्यते सर्वं मन्त्रमन्त्रैव कथ्यते ।
ॐ अन्तरिक्षाय स्वाहा ।
अनेन ग्राहयेत् ॥ इति वाक्सिद्धिः ।

स्वाती नक्षत्र में बेर का वन्दा ग्रहण कर उसे हाथ में धारण कर मनुष्य जो-जो प्रार्थना करे वह सब प्राप्त कर सकता है । मन्त्र यह है 'ॐ अन्तरिक्षाय स्वाहा' इससे ग्रहण करे । इति वाक्सिद्धिः ।

अथ गुप्तधन गुप्तवेश चौरादि प्रकाशनम्

'वन्दा शाखोट चूतस्थागोक्षुरं लवणं पदम् ॥ ७ ॥
अजाक्षीरेण सम्पेष्य ललाटे तिलके कृते ।
प्रकाशं जायते सर्वं तच्छृणुष्व समाहितः ॥ ८ ॥

शाखोट का वन्दा, आम का वन्दा, गोखरू और लवण चौथाई भाग बकरी के दूध में पीसकर माथे पर तिलक करने से गुप्त धन प्रकाशित हो जाता है ।

---

१ वन्दा शाखोटवृक्षस्था गोक्षुरं लक्ष्मणापदम् वा लक्षणापदम् पाठः ।

धनानि यत्र वासन्तियेवा चौरादिकास्तथा ।
गुप्तवेशा महात्मानो गन्धर्वा यक्षिणीश्वराः ॥ ९ ॥
जन्तुर्द्धातुश्च वृक्षाद्या मर्त्यलोके स्थिता ध्रुवम् ।

जहाँ धनादिक हों, अथवा चोरादिक हों, अथवा गुप्तवेश में गन्धर्व, यक्षिणी, मनुष्य, यक्षादि, यावन्मात्र जो मनुष्यलोक में स्थित हों वे सब प्रगट हो जाते हैं।

आश्लेषायां शनेर्वारे सायं दाडिम बीजकम् ॥ १० ॥
रसं संगृह्य तु वरीं कृष्णाष्टम्यां तु भूमिजे ।
पद्ममूलं मङ्गले हन्य जनं कारयेत्सुधीः ॥ ११ ॥
प्रकाशं पूर्ववत्सर्वं जायते नात्र संशयः ॥ १२ ॥
इति गुप्तधन गुप्तवेश चौरादि प्रकाशनम् ।

आश्लेषा नक्षत्र में शनिवार के दिन सायंकाल दाडिम के बीज का रस ग्रहणकर अष्टमी मङ्गलवार को कमल की जड़ और शतावरी का रस ग्रहण करे। इसे शुद्ध कर अञ्जन बनाकर लगाने से पूर्ववत् सब प्रकाशित हो जाता है इसमें सन्देह नहीं।

इति गुप्तधनगुप्तवेशचौरादि प्रकाशनम् ।

अथ धनुर्विद्या

इन्द्रेण या विद्या पुराह्यर्जुनं प्रति कथिता ।
सा सप्तविंशत्यक्षरा कालायुतरक्ता घोरा ॥
ॐ कार शतगुण आधारे एकादश शतसहस्र इन्द्र आज्ञा ।
एतन्मन्त्रेण शरं धृत्वा नवधा पठित्वा आकर्ण पूरिते धनुषि शरं मेलयेत् । सहस्रधा भवति । कलौ दशधा ।
महादेवेन इन्द्रं प्रति कथिता सा सप्तदशाक्षरा ।
चान्द्रधनुर्गुण रेखाकाण्ड ब्रह्मज्ञान ।
ॐ ॐ ॐ एतन्मन्त्र पठित्वा पञ्चवारं तदाक्षिपेत्पूर्ववद्भवति सर्पः कवलितम्भेकमर्धमात्रं समुद्धरेत् ।
छित्त्वा सर्पस्य मुण्डं च आतपे शोषयेत्पृथक् ॥ १३ ॥
पिष्ट्वा पृथग्वटी कार्या लक्ष्यलाभप्रदा स्मृता ।
लक्ष्येतुभेकतिलकं शराग्रे सर्पमुण्डजम् ॥ १४ ॥
दत्त्वातिलकमाकर्ण्य गुणं धनुषि वेधयेत् ।
लक्ष्यस्य तिलकं बाणोभिन्दत्येव न संशयः ॥ १५ ॥

ॐ रक्ते धनुरक्ते काण्डरक्ते हलिजामामारो अमुकार अमुकं आङ्ग अमुकटाईमारों त्रिदशदेवगण रुद्रासाक्षी आमुकारमारों देवेन राखी अर्जुन कृष्ण भवानीर आज्ञा। एतन्मन्त्रं पठित्वा यस्य यदङ्गेमारयेत्तदङ्गं विध्यति। किन्तु प्रथम परीक्षायां शनि मङ्गलाहनिमृतं ब्राह्मणस्य वंशमागीय धनुः॥ काण्डं सज्जीकृत्वा तत्प्रमाणं गुणं दत्त्वा तत्र तत्समयेवा पुष्पहारमेकं दत्त्वा मुष्टिस्थाने हंसजीवमेकं भञ्जयित्वा एकनारिकेलजलेन प्रक्षाल्य काण्डत्रयेण लक्ष्यं विद्ध्वा साधयेत् यदा द्रुतं धनुः काण्डेन लक्ष्यं क्षत्रोरङ्गसमीपे वेधयेत्तदा वृथा न स्यात्॥

इति धनुर्विद्या।

धनुर्विद्या : इन्द्र ने जिस विद्या का पहले अर्जुन को उपदेश दिया था वह सत्ताईस अक्षर की है। 'ॐ कालायुक्त रक्ताघोरा ॐकार शतगुण आधारे एकादशशत सहस्र इन्द्र आज्ञा'। इस मन्त्र से धनुष पर बाण धारण कर कर्णपर्यन्त नौ बार मन्त्र पढ़कर खींचने से सहस्र प्रकार का और कलियुग में दस प्रकार का बाण होता है। महादेवजी ने जो इन्द्र से कहा है वह सत्रह अक्षर की विद्या है। चान्द्रधनुर्गुणरेखाकाण्ड ब्रह्मज्ञान ॐ ॐ ॐ— यह मन्त्र पाँच बार पढ़कर बाण चढ़ाने से पूर्ववत् होता है। सर्प से आधा खाये मेढक को और सर्प के शिर को काटकर लाये। उसे गरमी में सुखाकर पीसकर गुटिका करे। यह लक्ष्यलाभ को देने वाली है। लक्ष्य में मेढक का तिलक और बाण के अग्रभाग में सर्प के मुण्ड का तिलक करे फिर डोरा धनुष पर चढ़ाकर निशाना लगावे तो बाण अवश्य लक्ष्य के तिलक को वेधेगा इसमें सन्देह नहीं।

ॐ रक्ते धनुरक्ते काण्डरक्ते हालिजामा अमुकार अमुकं आसु कटाई मारों त्रिदशदेवगणरुद्र साक्षी अमुकार मारो देवेनराखी अर्जुन कृष्ण भवानीर आज्ञा।

यह मन्त्र पढ़कर जिसके शरीर में जहाँ मारे वहाँ अङ्ग विद्ध होगा किन्तु पहली परीक्षा में शनि मङ्गल के दिन में मृत हुए ब्राह्मण की अर्थी के बाँस का धनुष बनाकर उसको उसके प्रमाण के डोरे में चढ़ाकर एक पुष्पहार प्रदान कर मुष्टिस्थान में हंसशिशु भञ्जन कर नारियल के जल से धोकर तीन काण्ड से लक्ष्य वेधकर साधने से वृथा नहीं होगा।

इति धनुर्विद्या।

अथ धनधान्याक्षयकरणम्

ऋक्षे च पूर्वफाल्गुन्यां दाडिमी वृक्ष सम्भवम्।
वृक्षादनी घने देयमक्षयं भवति ध्रुवम्॥

वन्दाकं तु मघा ऋक्षे बहुवारक वृक्षकम् ।
धान्यागारे प्रदातव्यमक्षयं भवति ध्रुवम् ॥ १६ ॥

धनधान्य अक्षयकरण : पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में दाडिम के वृक्ष का तथा विदारीकन्द का वन्दा रखने से धन अक्षय होता है। मघानक्षत्र में बहुवार के वृक्ष का वन्दा लाकर धान्य में रखने से धान्य अवश्य अक्षय होता है।

शेफालिकाया वन्दाकं हस्तर्क्षे च समुद्धरेत् ।
धान्यमध्ये तु संस्थाप्य तद्धान्यमक्षयं भवेत् ॥ १७ ॥
भरण्यां कुशवन्दाकं गृहीत्वा स्थापयेद्बुधः ।
सम्पूर्णं धनधान्यान्तःस्थः करीत्यक्षयं ध्रुवम् ॥ १८ ॥

हस्तनक्षत्र में निर्गुण्डी वृक्ष का या हरसिंगार का वन्दा ग्रहण कर धान्य में रखने से धान्य अक्षय होता है। भरणीनक्षत्र में कुश का वन्दा लेकर स्थापन करने से सम्पूर्ण धनधान्य अक्षय होता है।

उदुम्बरस्य वन्दाकं रोहिण्यां ग्राहयेद्बुधः ।
स्थापयेत्सञ्चितार्थन्तु सदा भवति चाक्षयम् ॥
मन्त्रेण मन्त्रितं कृत्वा मन्त्रोप्यत्रैव कथ्यते ।
ॐ नमो धनदाय स्वाहा इति धनधान्याक्षयकरणम् ॥ १९ ॥

रोहिणीनक्षत्र में गूलर का वन्दा ग्रहणकर स्थापन करने से अवश्य अक्षय होता है। अभिमन्त्रित करने का मन्त्र इस स्थान पर कहते हैं (ॐ नमो धनदाय स्वाहा)।

इति धनधान्याक्षयकरण ।

अथ श्रुतिधरविद्यादिकरणम्

पथ्या पाठा कणा शुण्ठी सैधवं मरिचं वचा ।
शिग्रु प्रतिपलं चूर्णं द्वात्रिंशतिपलं घृतम् ॥ २० ॥
घृताच्चतुर्गुणं क्षीरं दत्त्वा सर्वं विपाचयेत् ।
घृतशेषं समुत्तार्यं लिहेद्वाग्बुद्धि दायकम् ॥ २१ ॥

श्रुतिधरविद्यादिकरण : हरड़, पाठा, पीपल, सोंठ, कालीमिर्च, सेंधा नमक, वच, सहिजना यह सब एक-एक पल, घी बत्तीस, पल, और घी से चौगुना दूध लेकर यह सब एक पात्र में पकावे। जब रस जल जया तथा घृतमात्र शेष रह जाय तब उतार ले। नित्य इसके पान से वाणी, बुद्धि और स्मृति बढ़ती है। 'घृतशेषं पिबेन्नित्यं वाङ्मेधास्मृतिबुद्धिदम् वा पाठः।

अथ ब्राह्मीघृतम्

वचा ब्राह्मीफलं कुष्ठं सैन्धवं तिलपुष्पिका ।
चूर्णयित्वा द्रवैर्भाव्यं मण्डुकी ब्राह्मिसम्भवै. ॥ २२ ॥
दिनमेकं तत पाच्यं कल्काच्चतुर्गुणं घृतम् ।
घृताच्चतुर्गुणं देयं क्षीरं ब्राह्मी नियोजितम् ।
घृतशेषं समुत्तार्य लिहेद्वा बुद्धिदायकम् ॥ २३ ॥

ब्राह्मी, वच, ब्राह्मीफल, कूठ, सेंधा नमक, तिलपुष्प या लालचन्दन इनको चूर्ण कर मण्डूकपर्णी और ब्राह्मी के रस की भावना दे । इस प्रकार एक दिन इसको पचाकर इसके कल्क से चौगुना घी, घी से चौगुना गाय का दूध और ब्राह्मी डाले । जब रस जल जाय और घृत मात्र रह जाय तब उतार ले । चाटने से बुद्धि बढ़ती है । ३ माशे की मात्रा है ।

द्वे हरिद्रे वचा कुष्ठं पिप्पली विश्वभेषजम् ।
अजाजीचाजमोदा च यष्टीमधुकं संयुतम् ॥ २४ ॥
एतानि समभागानि शुष्कचूर्णानि कारयेत् ।
तच्चूर्णं सर्पिषा लेह्यं कर्षकं वाक्शुद्धिकृत् ॥ २५ ॥
भक्षयेन्मासमेकन्तु बृहस्पतिसमो भवेत् ।

ब्राह्मी, घृत, दोनों हलदी, वच, कूठ, पीपल, सोंठ, जीरा, अजमोद, मुलेठी यह सब बराबर भाग ले और सुखाकर चूर्ण करे । यह चूर्ण घृत के साथ एक कर्ष लेने से वाक्सिद्धि होती है । एक महीने इसके सेवन से बृहस्पति के समान होता है ।

ब्राह्मी मुण्डी वचा शुण्ठी पिप्पली समचूर्णकम् ॥ २६ ॥
मधुना भक्षयेत्कर्षं स्पष्टवाग्जायते ध्रुवम् ।
वचास्थि करवी गुन्द्रा मुशली मधुकं बला ॥
अपामार्गस्य पचाङ्गं क्षौद्रेण पूर्ववत्फलम् ॥ २७ ॥
अपामार्ग वचाशुण्ठी विडङ्गं शङ्खपुष्पिका ।
शतावरी गुडूची च समं चूर्णं हरीतकी ॥ २८ ॥
घृतेन भक्षयेत्कर्षं नित्यं ग्रन्थसहस्रधृक् ।

ब्राह्मी, मुण्डी, वच, सोंठ और पीपल इनका समान चूर्ण कर शहद के साथ एक कर्ष सेवन करने से मनुष्य स्पष्ट बोलने वाला हो जाता है इसमें सन्देह नहीं । अथवा वच की मींग, हिंगुपत्री, भद्रमोथा, मूशली, मुलेठी, खरैंटी, चिरचिटे का पञ्चाङ्ग, वच, सोंठ, वायविडंग, शङ्खपुष्पी, शतावरी,

गुडूची और हरड़ इनका समान चूर्ण कर घृत के साथ एक कर्ष प्रतिदिन खाने से सहस्र ग्रन्थ का धारण करने वाला होता है।

अश्वगन्धाजमोदा च पाठा कुष्ठं कटुत्रयम् ॥ २९ ॥
शतपुष्पी विश्वबीजं सैंधवं च समं समम् ।
एतदर्द्धं वचा चैव चूर्णितं मधुसर्पिषा ॥ ३० ॥
भक्षयेत्कर्षमात्रं तु जीर्णान्ते क्षीरभोजनम् ।
सहस्रग्रन्थधारी स्यान्मूकोऽपि वाक्पतिर्भवेत् ॥ ३१ ॥

असगन्ध, अजमोद, पाठा, कुटकी (कूट), त्रिकुटा, सौंफ, सोंठ, सेंधा नमक यह सब समान भाग लेकर चूर्ण कर, इससे आधी वच लेकर शहद और घी में मिलाकर एक कर्ष खाने और ऊपर से दूध का भोजन करने से साधक सहस्र ग्रन्थों का धारण करने वाला वाक्पति होता है।

लिहेज्योतिष्मती तैलं बलया वचया सह ।
स्तोकं स्तोकं क्रमेणैव यावन्निष्क चतुष्टयम् ॥ ३२ ॥
निर्वाते मधुवासी स्याद्ब्रह्मचारी कविर्भवेत् ।

मालकांगनी के तेल को खरैंटी और वच के साथ चाटने और थोड़ा-थोड़ा क्रम से चार निष्क तक बढ़ाने, निर्वात स्थान में रहने तथा शहद चाटने से साधक ब्रह्मचारी कवि होता है।

सूर्यस्य ग्रहणे वेन्दोः समन्त्रामाहरेद्वचाम् ॥ ३३ ॥
चूर्णितां सघृतां भुक्त्वा सप्ताहे वाक्पतिर्भवेत् ।
इत्येवमादियोगानां मन्त्रराजः शिवोदितः ॥ ३४ ॥

सूर्य या चन्द्रग्रहण में मन्त्र के सहित वच का वन्दा लाकर उसे चूर्णकर घी के साथ खाने से एक सप्ताह में वाक्पति होता है। इन योगों का मन्त्रराज शिव ने कहा है।

जप्त्वायुतञ्च सिद्धिः स्यात्पश्चात्तैरेव भक्षयेत् ।
ॐ ह्लूं हयशीर्षं वागीश्वराय नमः ॥ सहस्रजपः ।

१०,००० मन्त्र जपने से सिद्धि होती है। पश्चात् उक्त पदार्थ भोजन करे। 'ॐ ह्लूं हयशीर्षवागीश्वराय नमः' इस योग के इस मन्त्र का एक सहस्र जप है।

धात्रीफलरसैर्भाव्यं वचाचूर्णं दिनावधि ।
घृतेन लेहयेन्निष्कं वाक्शुद्धिस्मृतिबुद्धिकृत् ॥ ३५ ॥

वच का चूर्ण आमले के रस में एक दिन भावित कर एक निष्क घृत के साथ चाटने से वाणी की सिद्धि और बुद्धि की वृद्धि होती है।

वचाचूर्णं क्षिपेत्क्षीरे पुनर्मन्त्रेण मन्त्रितम् ।
भोज्यं क्षीरेण शाल्यन्नं सप्ताहे वाक्पतिर्भवेत् ॥ ३६ ॥

मन्त्र को पढ़कर वच का चूर्ण मन्त्र के सहित दूध के साथ लेने से वाक्पति होता है ।

सप्तमे अष्टमे चैव साक्षाच्छ्रुतिधरो भवेत् ।
वचाचूर्णं पिबेत्क्षीरैर्घृतैः क्षौद्रैश्च यत्पुनः ॥
सप्ताहक्रमयोगेन लेह्यं स्यात्पूर्ववत्फलम् ॥ ३७ ॥

इसे सात दिन या आठ दिन सेवन करने से वेद का धारण करने वाला होता है । अथवा वच का चूर्ण, शहद और घृत के साथ चाटने से एक सप्ताह में बुद्धि तीव्र हो जाती है ।

पुष्यार्कयोगे संगृह्य श्वेतार्कस्य तु मूलकम् ।
छायाशुष्कं च तच्चूर्णं मन्त्रेणैवाभिमन्त्रितम् ॥ ३८ ॥
कर्षमर्द्धं पलं वापि प्रातरुत्थाय संपिबेत् ।
तक्रेण सर्पिषा वापि जीर्णान्ते क्षीरभोजनम् ॥ ३९ ॥
एवं सप्ताहमात्रेण कविर्भवति बालकः ।
ॐ महेश्वराय नमः । अनेन मन्त्रेणाभिमन्त्र्य पिबेत् ॥ ४० ॥

इति श्रुतिधरविद्यादिकरणम् ।

पुष्यनक्षत्र में श्वेत आक की जड़ ग्रहण कर उसे छाया में सुखाकर चूर्ण कर मन्त्र से अभिमन्त्रित कर एक कर्ष या आधा पल प्रातःकाल उठकर खाने तथा पचने के बाद गाय का मट्ठा, घी, अथवा क्षीर सेवन करने से सात दिन में बालक भी कवि हो जाता है । इस योग का 'ॐ महेश्वराय नमः' यह मन्त्र है ।

इति श्रुतिधरविद्यादिकरण ।

अथ किन्नरीकरणम्

हरिद्रा च वचाकुष्ठं पिप्पली च यवानिका ।
मरिचं सैन्धवं शुण्ठी मेथा चूर्णं तु कारयेत् ॥ ४१ ॥
मधुना सहितं चूर्णं पेषयित्वा शिलातले ।
दिनैश्च सप्तभिश्चैव भक्षितव्यं निरन्तरम् ॥ ४२ ॥
जायते सुस्वरः पुंसां किन्नरैः सह गीयते ।

हलदी, वच, कूठ, पीपल, अजवायन, कालीमिर्च, सेंधा नमक और सोंठ इनका चूर्ण कर शहद से सात दिन निरन्तर खाने से किन्नरों के समान कण्ठ होता है ।

बिभीतकं कणा शुण्ठी सैन्धवं त्वक्समं समम् ॥ ४३ ॥
गोमूत्रेण पिबेत्कर्षं किन्नरैः सहगीयते ।

बहेडा, पीपल, सोंठ, सेंधा नमक और तज यह समान भाग लेकर एक कर्ष गोमूत्र के साथ पान करने से किन्नरों के साथ गान कर सकता है अर्थात् उनके समान स्वर हो जाता है ।

जातीपत्र कणा लाजा मातुलुङ्ग दलं मधु ॥
पलं लेह्यं भवेन्नादः किन्नराधिक एव च ॥ ४४ ॥

जाती वृक्ष के पत्ते, जीरा, खीलें और बिजोरे नीबू के पत्ते इनको मर्दन कर आठ तोला शहद से चाटने से किन्नर से भी उत्तम स्वर होता है ।

देवदारु कणा व्योषंशताह्वा पत्रकं निशा ।
वचा सैन्धव शिग्रूत्थं मूलं पेष्यं समं समम् ॥ ४५ ॥
कर्षकं मधुसर्पिभ्यां मास मात्रं सदा लिहेत् ।
कण्ठशुद्धिर्भवेत्तस्य किन्नरैः सहगीयते ॥ ४६ ॥

देवदारु, सोंठ, मिर्च, पीपल, जीरा, सौंफ, पत्रज, हलदी, बच, सेंधा नमक, और सहिजने की मूली यह सब वस्तु समान लेकर एक कर्ष मधु और घृत के साथ एक महीने चाटने से कण्ठ की शुद्धि होती है और साधक किन्नरों के साथ गा सकता है ।

शुण्ठी च शर्करा चैव क्षौद्रेण सहसंयुता ।
कोकिलस्वर एव स्याद्गुटिका भुक्तिमात्रतः ॥ ४७ ॥

सोंठ और मिश्री शहद के साथ मिलाकर उसकी गोली बनाकर सेवन करने से स्वर कोकिला के समान अच्छा हो जाता है ।

आर्द्रकं भृङ्गकोरंट वासा ब्राह्मी वचा तथा ।
वचा चूर्णं समांशेन पलैकं वारिणा पिबेत् ॥ ४८ ॥
मासि मासि चतुर्दश्यां कृष्णपक्षे द्विसप्तकम् ।
गन्धर्व सदृशं गानं कोकिलानां स्वरो यथा ॥ ४९ ॥

अदरख, भाँगरा, दालचीनी, पीपल, अडूसा, ब्राह्मी और वच का चूर्ण यह समान भाग लेकर जल के साथ एक कर्ष प्रति मास कृष्णपक्ष की चतुर्दशी तक चौदह दिन खाने से गन्धर्व और कोकिला के स्वर के समान गान कर सकता है । 'कहीं माघ महीना लिखा है' ।

निर्गुण्डीमूल चूर्णन्तु तिलतैलेन यो लिहेत् ।
कण्ठशुद्धिर्भवेत्तस्य किन्नरैः सह गोयते ॥ ५० ॥

इति किन्नरीकरणम् ।

निर्गुण्डी की जड़ का चूर्ण तिल के तेल के साथ चाटने से कण्ठ की शुद्धि होती है और साधक किन्नरों के साथ गा सकता है।

इति किन्नरीकरण।

अथ चक्षुष्यम

वर्षाकाले काकमाची समूला तैलपाचिता।
खादेत्समासतश्चक्षुर्गृध्रदृष्टि समं भवेत् ॥ ५१ ॥

वर्षाकाल में समूल काकमाची को तेल में पकाकर एक महीने खाने से गृध्र के समान दृष्टि होती है।

श्वेतं पुनर्नवामूलं घृतघृष्टं सदाञ्जयेत्।
जलस्रावं निहंत्याशु तन्मूलन्तु निशायुतम् ॥ ५२ ॥
अञ्जने चक्षुरोगाश्च न भवन्ति कदाचन।

श्वेत पुनर्नवा की जड़ घी में पीसकर सदा आँजने से नेत्रों से जल का निकलना बन्द हो जाता है; अथवा यही जड़ दारुहलदी के साथ नेत्रों में आँजने से किसी प्रकार का नेत्ररोग नहीं होता।

द्विनिशा सैन्धवं त्र्यूषं बीजं करञ्जकं समम् ॥ ५३ ॥
भृङ्गीद्रवैर्युतं वापि तिमिरं पटलं हरेत्।

दोनों हलदी, सेंधानमक, त्रिकुटा, और करञ्ज के बीज यह समान भाग लेकर अतीस के रस में बत्ती बनाकर नेत्रों में आँजने से तिमिर दूर होता है।

शम्बूकं वा वराटं वा दग्धं शुष्कं विचूर्णितम् ॥ ५४ ॥
अञ्जयेन्नवनीतेन हन्ति पुष्पं चिरन्तनम्।

घोंघा या कौडी इन्हें जलाकर चूर्ण कर मक्खन के साथ नेत्रों में आँजने से बहुत दिनों का फूला दूर होता है।

अजामूत्रेण भूधात्रीमूलं पिष्ट्वा च वर्तिका ॥ ५५ ॥
नवनीतसमायुक्तं हन्ति पुष्पं चिरन्तनम्।
अञ्जनान्नाशयेत्पुष्पं क्षौद्रैर्वा स्वर्णमाक्षिकम् ॥ ५६ ॥

छाग के मूत्र में भुइआमले की जड़ पीसकर उसकी बत्ती को मक्खन के साथ लगाने से पुराना फूल नष्ट हो जाता है; अथवा शहद के साथ सोनामक्खी मिलाकर आँजने से फूला नष्ट हो जाता है।

मरीचैर्मर्दने रक्ते वर्ती रात्र्यन्धताञ्जयेत्।
जयन्ती वाऽभया वाथ घृष्ट्वा स्तन्यैर्निशान्धहृत् ॥ ५७ ॥
शोणितं चर्मकोपं च मांसवृद्धिं च नाशयेत्।

कालीमिर्च को मर्दन कर बत्ती बनाकर लगाने से नेत्रों का रतौंधा दूर होता है; अथवा जयन्ती या हरड़ को पीसकर लगाने से रतौंधा दूर हो जाता है। रुधिरविकार, चर्मकोप और मांसवृद्धि भी इससे दूर होती है।

अजस्य कृष्णमांसान्तः पिप्पलीं मरिचं क्षिपेत् ॥ ५८ ॥
कारयित्वा घृते पच्याद्वटिकान्ते समुद्धरेत्।
मध्वा न्यस्तन्य सम्पिष्टं रात्र्यन्धहरमञ्जनम् ॥ ५९ ॥

काले बकरे के मांस में पीपल और कालीमिर्च डाले फिर एक घड़ी घी से पकाकर उसकी वटिका बनावे। उसे शहद, घी और स्त्री के दूध से पीसकर लगाने से रतौंधा दूर हो जाता है।

अजापित्तगतं व्योषं धूमस्थाने विशोषयेत्।
चिरबिल्वरसैर्घृष्टं रात्र्यन्धहरमञ्जनम् ॥ ६० ॥

बकरी का पित्त, सोंठ और मिर्च पीपल के साथ धूमस्थान में सुखावे। फिर करञ्ज के रस में इसे घिसकर लगाने से रतौंधा दूर हो जाता है।

घृतेन पुष्पं मधुनाश्रुपातं तैलेन कण्डूं तिमिरं जलेन।
रात्र्यन्धकं कांजिकथा निहन्ति[1] पुनर्नवा नेत्रपुनर्नवङ्करी ॥

घृत से फूला, शहद से अश्रुपात, तेल से खुजली, जल से तिमिर और कांजी से रतौंधा दूर होता है। श्वेत पुनर्नवा की जड़ नेत्रों को नवीन कर देती है।

हरीतकी वचा कुष्ठं पिप्पली मरिचानि वै।
बिभीतकस्य मज्जा शङ्खनाभिर्मनश्शिला ॥ ६२ ॥
सर्वमेतत्समं कृत्वा छागीक्षीरेण पेषयेत्।
नाशयेत्तिमिरं कण्डूं पटलान्यर्बुदानि च ॥ ६३ ॥
अधिकानि च मांसानि यश्च रात्रौ न पश्यति।
अपि द्विवार्षिकं पुष्पं मासैकेनैव नाशयेत् ॥ ६४ ॥

हरड़, वच, कूट, पीपल, काली मिर्च, बहेड़े की मींग, शङ्खनाभि, मैनशिल, यह सब बराबर लेकर बकरी के दूध से पीसकर लगाने से तिमिर, अष्ठीला और अर्बुदरोग का नाश होता है। जिसके नेत्रों में अधिक मांस बढ़ जाता है तथा जो रात्रि में नहीं देखता वह रोग तथा दो वर्ष का फूला इससे एक मास में अवश्य नष्ट हो जाता है।

वर्तिश्चन्द्रोदयानामं नृणां दृष्टिप्रसादिनी ॥ ६५ ॥

---

१ अत्र श्वेतपुनर्नवा ग्राह्या।

दृष्टि को बढ़ाने वाली इस चन्द्रोदय नामक बत्ती का मनुष्य को प्रयोग करना चाहिये।

छायाशुष्का वटी कार्या नाम चन्द्रोदया वटी।

यह वटी छाया में सुखाकर मनुष्य को प्रयोग करनी चाहिये। यह दृष्टि निर्मल करती है।

यस्त्रैफलं चूर्णमपथ्यवर्ज्यं सायं समश्नाति हविर्मधुभ्याम्।
स मुच्यते नेत्रगतैर्विकारैर्भृत्यैर्यथा क्षीणधनो मनुष्यः॥ ६६॥

इति चक्षुष्यम्।

जो मनुष्य त्रिफले के चूर्ण को संध्या समय घृत और शहद के साथ खाता है वह नेत्रविकारों से ऐसे छूट जाता है जैसे धनहीन पुरुष को नौकर छोड़ जाते हैं।

इति चक्षुरोगनिवारण।

अथ कर्णस्य बधिरत्व नाशनम्

शिखरि क्षारजलेन तत्कृत कल्केन साधितं तिलजम्।
अपहरति कर्णनादं बाधिर्यञ्चापि पूरणात्॥ ६७॥

चिरचिटे के खारयुक्त जल से या उसी के साथ तिल के तेल का कल्क कर कानों में डालने से बधिरता का नाश होता है।

[1]दशमूली कषायेण तैलप्रस्थे विपाचयेत्।
एतत्कल्कं प्रदायैव बाधिर्यं परमौषधम्॥ ६८॥

दशमूल के काढ़े को एक सेर तेल में पकावे। जब तेलमात्र रह जाय तब उतार ले। कर्णबधिरता का नाश करने की यह परम औषधि है।

नीली ब्रध्नरसस्तैलं सिद्ध कांजिक संयुतम्।
कदुष्ण पूरणात्कर्णो निश्शेष कृमिनाशनः॥ ६९॥

नीली, आक वृक्ष की जड़ काञ्जी में मिलाकर तेल में पकाकर कुछ गरम-गरम कानों में पूर्ण करने से सब कृमि नष्ट हो जाते हैं।

दन्तेन चर्वयेन्मूलं नन्द्यावर्त्त पलाशकम्।
तन्नाली पूरिते कर्ण ध्रुवं गोमक्षिकांजयेत्॥ ७०॥

ध्रव, सोनामक्खी और पलाश की जड़ दांतों से चबाने से या उसका रस कान में लेप करने से गोमक्षिका दूर होती है। कहीं तगर और ढाक को चबाना लिखा है।

---

१ बेल, सोनापाढा, कम्भारी, पाढल, अरणी, सरवन, पिठवन, छोटी कटेरी, बड़ी कटेरी और गोखरू यह दश मूल है।

ताम्बूलभक्षणं कृत्वा तत्र सन्दापयेद्बुधः।
तत्रस्थितास्तु कृमयो नाशमायान्ति निश्चितम् ॥ ७१ ॥

ताम्बूल भक्षण कर सेक करने से कान के कृमि अवश्य नष्ट हो जाते हैं।

मूषली बाकुचीचूर्णं खादेद्बाधिर्यशान्तये।

मूषली औ बकुची का चूर्ण खाने से बधिरता का नाश होता है।

मनःशिलाऽपामार्गोऽथ मूलं चूर्णं मधुप्लुतम् ॥ ७२ ॥
भक्षयेत्कर्षमात्रन्तु बधिरत्व प्रशान्तये।

मैनशिल और अपामार्ग के मूल का चूर्ण शहद में मिलाकर एक कर्षमात्र खाने से बहरापन शान्त हो जाता है।

लशुनामलकं तालं पिष्ट्वा तैले चतुर्गुणे ॥ ७३ ॥
तैलाच्चतुर्गुणं क्षीरं पाच्यं तैलावशेषितम्।
तत्तेलं निक्षिपेत्कर्णे बाधिर्यञ्च विनाशयेत् ॥ ७४ ॥

लहसुन, आमला और हरताल पीसकर उससे चौगुना तेल, और तेल से चौगुना दूध डाले फिर सबको पकावे। जब रस जल जाय और तेलमात्र रह जाय तो उस तेल को कान में डालने से बहरापन शान्त हो जाता है।

अथ कर्णपाली बर्द्धनम्

सिद्धार्थं बृहती चैव ह्यपामार्गं समं समम्।
छागीक्षीरैः प्रलेपोऽयं कर्णपाली विवर्द्धयेत् ॥ ७५ ॥

सफेद सरसों, कटेरी और चिरचिटा इनको समान भाग लेकर चूर्णकर बकरी के दूध से लेप करने से कर्णपाली बढ़ती है।

मूषलीकन्दचूर्णं च महिषीक्षीर संयुतम्।
लोडयेत्स्निग्धभाण्डे तु धान्यराशौ निवेशयेत् ॥ ७६ ॥
सप्ताहादुत्थिते लेप्यं कर्णपाली विवर्द्धते।

मूषलीकन्द का चूर्णकर भैंस के दूध के साथ बरतन में मिलाकर धान्यराशि में रक्खे। फिर सात दिन में इसे निकाल कर लेप करने से कर्णपाली बढ़ती है।

गुञ्जामूलं कृतं चूर्णं महिषीक्षीर संयुतम् ॥ ७७ ॥
शृतं दधि ततः कुर्यान्नवनीते तदुद्भवम्।
कर्णयोर्लेपयेन्नित्यं वर्द्धयेन्नात्र संशयः ॥ ७८ ॥

चौंटली की जड़ का चूर्ण कर उसमें दूध मिलाकर दही जमाकर उसका मक्खन निकाल कर कानों पर लेप करने से कर्णपाली बढ़ती है।

अश्वगन्धा वचा कुष्ठं गजपिप्पलिका समम् ।
महिषीनवनीतेन लेपात्कर्णौ विवर्द्धते ॥ ७९ ॥

असगन्ध, वच, कूठ, और गजपीपल इन्हें भैंस के मक्खन के साथ मिलाकर लेप करने से कान की पाली बढ़ती है ।

वराहोत्थेन तैलेन लेपः कर्णविवर्द्धनः ।
चर्मचटकस्य रक्तेन लेपात्कर्णौ विवर्द्धते ॥ ८० ॥

अथवा वराह के तेल का कानों पर लेप करने से कान बढ़ता है; अथवा चर्मचटक चिडिये के रक्त का लेप करने से कर्णवृद्धि होती है ।

इति कर्णस्यबधिरत्वनाशनं कर्णपालीवर्द्धनं च ।

अथ दन्तदृढीकरणम्

यमर्चिचा जया पुङ्खा मूलं वा हयमारजम् ।
चलदन्ता दृढायन्ते प्रत्यहं दन्तधावनात् ॥ ८१ ॥

इमली, जयन्ती, शरफोंका, कनेर की जड़ दाँतों में लगाने से कैसे भी दाँत हिलते हों दृढ़ हो जाते हैं ।

ताम्रपात्रे क्षणं पाच्यमभयाचूर्णकं मधु ।
पिष्ट्वा च गुटिका कार्या दन्तैर्धार्या कृमीन्हरेत् ॥ ८२ ॥

हड़ के चूर्ण और शहद को ताँबे के पात्र में क्षणमात्र पकाकर गुटिका कर दाँतों में धारण करने से दाँतों के कृमि नष्ट होते हैं ।

दन्तैर्धार्यं स्नुहीमूलं कृमिनाशं करोत्यलम् ।
काशीशं घृतसम्पक्वं धार्यं दन्ते व्यथापहम् ॥ ८३ ॥

थूहर की जड़ या कसीस की जड़ दाँतों में धारण करने से कृमि नष्ट हो जाते हैं । कसीस को घृत में पकाकर दाँतों में धारण करने से दातों की व्यथा दूर होती है ।

विशालयोः पलं चूर्णं तप्तलोहेपरिक्षिपेत् ।
तद्धूमस्पृष्टदन्तानां कीटपातो भवत्यलम् ॥ ८४ ॥

इन्द्रायण और महेन्द्रवारुणी का चूर्ण एक पल तप्त लोहे पर डाल दे । उसका धुआँ छूते ही दाँतों का कीड़ा मर जाता है ।

जातिकोरकपत्रं च चर्वयेत्प्रातरुत्थितः ।
स्थिराः स्युश्चलिता दन्तास्तत्काष्ठैर्दन्तधावनात् ॥ ८५ ॥

प्रातःकाल उठकर जाती के पत्ते और कंकोल मिर्च के पत्ते चबाने से हिलते हुए दाँत निश्चल हो जाते हैं। इन्हीं वृक्षों की दातौन करना चाहिये।

गुंजामूलन्तु कर्णाभ्यां बद्धं दन्तकृमि प्रणुत्।

चौंटली की जड़ कानों में बाँधने से दाँत का कीड़ा नष्ट हो जाता है।

त्रिसूतं रौप्यमेकन्तु जम्बीररसमर्दितम्॥ ८६॥
जम्बीरफलमध्यस्थं वस्त्रेबंद्ध्वा त्र्यहं पचेत्।
क्षीरमध्ये समुद्धृत्य गुटिकां तां ततः पुनः॥ ८७॥
भावितं भानुदुग्धेन तालकं सूक्ष्म पेषितम्।
तन्मध्ये गुटिकां क्षिप्त्वा वस्त्रेबद्ध्वा दिनत्रयम्।
मधुभाण्डगतं पश्चादुद्धृता चास्यधारिता॥ ८८॥
घर्षणाच्चलितान्दन्तां तत्क्षणात्कुरुते दृढान्।

एक रुपये भर पारा जम्बीरी के रस में मर्दित करे। फिर उसे जम्बीरी नीबू में रखकर वस्त्र में बाँध कर तीन दिन तक दूध में पकावे फिर निकाल कर गुटिका करे। उसको काली मिर्च, आक के दूध और हरताल से सूक्ष्म पीसकर गुटिका बनाकर वस्त्र में तीन दिन बाँध रक्खे। फिर शहद के पात्र में रक्खे। इसको दाँतों पर घिसने से हिलते हुए दाँत दृढ़ हो जाते हैं।

तालकं भानुदुग्धेन दिनमेकं विमर्दयेत्॥ ८९॥
तद्गर्भं रसहोमोत्थां पिण्डिकां तारसंयुताम्।
जम्बीरफलमध्यस्थां दोलायन्त्रे त्र्यहं पचेत्॥ ९०॥
तैलक्षौद्रयुते भाण्डे समुद्धृत्य विधारयेत्।
दन्तरोगान्हरेत्सर्वान्घर्षणाच्चलिताढ्ढाः॥ ९१॥
चलदन्त स्थिरकरं कार्यं बकुलचर्वणम्।

हरताल को आक के दूध में एक दिन खरल करे। फिर उसको पारे के साथ पिण्डी करके एक स्थान पर रक्खे। फिर जम्बीरी के फलं के बीच में रखकर तीन दिन दोला यन्त्र में पचावे। फिर तेल और शहद मिलाकर एक बरतन में रख छोड़े। यह मलते ही सम्पूर्ण दाँतों के रोगों को दूर, दाँतों को स्थिर और बलयुक्त करता है।

बकुलस्य तु बीजन्तु पिष्ट्वा कोष्णेन वारिणा।
मुखे च धारयेद्धीमान्दन्तदार्ढ्यकरं परम्॥ ९२॥

बकुल (मौलसिरी) के बीज कुछ गरम पानी के साथ पीसकर बुद्धिमान् व्यक्ति धारण करे तो दाँत दृढ़ हो जाते हैं।

बकुलस्य त्वचा क्वाथमुष्णं वक्त्रेण धारयेत् ।
दृढाः स्युश्चलिता दन्ताः सप्ताहान्नात्र संशयः ॥ ९३ ॥

बकुल (मौलसिरी) की छाल का क्वाथ गरम-गरम मुख में धारण करने से सात दिन में हिलते हुए दाँत दृढ़ हो जाते हैं इसमें सन्देह नहीं ।

इति दन्तदृढ़ीकरणम् ।

अथ आहारकरणम्

ब्रध्नकेनापि वृक्षस्य पीठं कृत्वा शनैः स्थितः ।
योऽसौ भुंक्ते घृतैः सार्द्धं भोजनं भीमसेनवत् ॥ ९४ ॥

आक के वृक्ष का पीढा कर शनैः शनैः उसपर बैठ घृत के सहित भोजन करे तो भीमसेन के समान भोजन होगा ।

सन्ध्यायामाम्रवृक्षस्य कर्त्तव्यमभिमन्त्रितम् ।
प्रातः पुष्पाणि[1] संगृह्य मालां शिरसि धारयेत् ॥ ९५ ॥
कौपीनं सम्परित्यज्य भुंक्तेऽसौ भीमसेनवत् ।

सन्ध्या के समय आम के वृक्ष को अभिमन्त्रित कर प्रातःकाल उसके मौर की माला शिर पर धारण करे (कहीं प्लक्ष का अभिमन्त्रण कहा है) और कौपीन त्याग भोजन करने बैठे तो भीससेन के समान भोजन करेगा ।

उद्भ्रान्तपत्रमादाय कपिलाश्वानदन्तकम् ।
कट्यामेवस्वयं बद्ध्वा भुंक्तेऽसौ भीमसेनवत् ॥ ९६ ॥

मूषकपर्णी के पत्तों को लाकर रेणुका श्वानदन्त के साथ इन दोनों को कमर में बाँधे तो भीमसेन के समान भोजन करे ।

गृहीत्वा मन्त्रितान्मन्त्री बिभीततरुपल्लवान् ।
आक्रम्य दक्षिणां जङ्घां विंशत्याहारभुग्भवेत् ॥ ९७ ॥

मन्त्र का जानने वाला मन्त्रपूर्वक बहेड़े के पत्ते दाहिनी जाँघ से आक्रमण कर ग्रहण करे, अर्थात् जाँघ के तले रखकर भोजन करे तो बीसगुना भोजन होता है ।

ॐ नमः सर्वभूताधिपतये ग्रस ग्रस शोषय शोषय भैरवी
आज्ञापयति स्वाहा । उक्त योगानामयं मन्त्रः ॥

मन्त्र 'ॐ नमः सर्वभूताधिपतये ग्रस ग्रस शोषय शोषय भैरवी आज्ञापयति स्वाहा' उपरोक्त योगों का यह मन्त्र है ।

अधरं कृकलासस्य शिखास्थाने विबन्धयेत् ।
वायुपुत्र इवाश्चर्यमसौ भुंक्ते न संशयः ॥ ९८ ॥

---

१ मुष्क इति वा पाठः ।

गिरगिट का अधर शिखास्थान में स्थित करने से भीमसेन के समान भोजन होगा इसमें सन्देह नहीं।

ॐ नाभिवेगेन उर्वशी स्वाहा।

'ॐ नाभिवेगेन उर्वशी स्वाहा' उक्त योग का यह मन्त्र है।

इति आहारकरणम्।

अथानाहारकरणम्

अन्त्राणि कृकलासस्य मज्जा करंजबीजकम्।
पिष्ट्वा तद्गुटिका[1] कुर्यात्त्रिलोहेन तु वेष्टिताम् ॥ ९९ ॥
तां वक्त्रे धारयेद्योऽसौ क्षुत्पिपासा न बाधते ॥ १०० ॥

गिरगिट की आँत और करञ्ज के बीजों की मींग पीसकर उसकी गुटिका बनाकर चाँदी, सोने अथवा ताँबे में मढ़कर मुख में धारण करने से भूख और प्यास नहीं लगती है।

ॐ 'सां सां शरीरममृतमाकर्षय स्वाहा।
पद्मबीजं महाशाली छागीदुग्धेन पाचयेत्।
साज्यं तत्पायसं भुक्त्वा द्वादशाहं क्षुधापहम् ॥ १०१ ॥

'ॐ सां सां शरीरममृतमाकर्ष स्वाहा'। कमलगट्टे की गिरी और महाशालिधान्य को छागी के दूध से पकाकर घृत सहित वह खीर खाने से बारह दिन तक भूख नहीं लगती है।

उदुम्बरस्य जम्बीरशालिशिम्बीशिरीषजम्।
बीजं संचूर्ण्यचाज्येन भुक्त्वा पक्ष क्षुधापहम् ॥ १०२ ॥

गूलर, जम्बीरी, शालिधान्य, शिम्बी, शिरस के बीज इनका चूर्ण कर घी के साथ खाने से पन्द्रह दिन तक भूख नहीं लगती है।

उदुम्बरफलं पक्वमिंगुदीतैलभावितम्।
भुक्त्वा मासं क्षुधां हन्ति पिपासां च न संशयः ॥ १०३ ॥

गूलर का पका फल, इंगुदी के तेल में भावित कर खाने से एक महीने तक भूख और प्यास नहीं लगती, इसमें सन्देह नहीं है।

अपामार्गस्यबीजानि त्वग्वर्ज्यानि प्रपाचयेत्।
पायसं छागलीक्षीरैर्भुक्तं मासक्षुधापहम् ॥ १०४ ॥
'ॐ नमो भगवते रुद्राय अमृतार्कमध्ये।

---

१ शांचा वा पाठः।

संस्थिताय ममशरीरे अमृतं कुरु कुरु सः स्वाहा' ॥ १०५ ॥
उक्तयोगानामयंमन्त्रः ।

अपामार्ग के बीजों का छिलका दूर कर पकाकर बकरी के दूध में उसकी खीर खाने से एक महीन तक भूख नहीं लगती । 'ॐ नमो भगवते रुद्राय अमृतार्कमध्ये संस्थिताय मम शरीरे अमृतं कुरु कुरु सः स्वाहा' । उपरोक्त योग का यह मन्त्र है ।

इत्यनाहारकरण ।

अथ पादुकासाधनम्

अश्वनालंगुदीतैलैः पेषयेच्छ्वेतसर्षपम् ।
तल्लिप्त पादहस्तस्तु योजनानां शतं व्रजेत् ॥ १०६ ॥

अश्वनाल, अंकुली का तेल और श्वेत सरसों यह सब वस्तुयें पीसकर उसको हाथ-पैरों में सम्यक् रूप से लपेट कर सौ योजन जा सकता है ।

अङ्कोलस्य तु मूलन्तु तिलतैलेन पाचयेत् ।
पादसज्ञानुपर्यन्तं लिप्त्वा दूराध्वगो भवेत् ॥ १०७ ॥

अङ्कोल की जड़, तिल के तेल में पकाकर उसको जङ्घापर्यन्त लेप करके मनुष्य दूर तक जा सकता है ।

ॐ ह्रीं नमः ।
ॐ नमश्चण्डिकायै गगनं गगनं चालय चालय
वेशय हिलि हिलि वेगवाहिनी ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।
उक्तयोगद्वयस्यायमेव मन्त्रः ॥

'ॐ ह्रीं नमश्चण्डिकायै गगनं गगनं चालय चालय वेशय हिलि हिलि वेगवाहिनी ह्रीं ह्रीं स्वाहा' उक्त योगों का यह मन्त्र है ।

काकस्य हृदयं नेत्रे जिह्वां चैव मनश्शिलाम् ।
गैरिकं सिन्धुजं चैव अजामारी च मालती ॥ १०८ ॥
समं रुद्रजटा चैव विदार्या सह पेषयेत् ।
तल्लिप्त पादसहसा सहस्रं योजनं व्रजेत् ॥ १०९ ॥

काक का हृदय, दोनों नेत्र, जिह्वा, मैनशिल, गेरू, सेंधा नमक, शूकशिम्बी, मालती, इनके समान रुद्रजटा, विदारीकन्द यह सब पीसकर उसको हाथपैर में लपेट कर सहस्र योजन तक जाया जा सकता है ।

वली पलित निर्मुक्तो यावदाहूत सम्प्लवम् ॥ ११० ॥
ॐ नमो भगवते रुद्राय नमो हरितगदाधराय त्रासय त्रासय
क्षोभय क्षोभय चालने चालने स्वाहा ।

कोकजिह्वा ब्रह्मचारी गुडलोहेन वेष्टयेत् ।
मुखे प्रक्षिप्य गच्छन्ति योजनं शतमेव च ॥ १११ ॥
आगच्छन्ति तदातूर्णं स नरो नात्र संशयः ॥ ११२ ॥

वलीपलित से निर्मुक्त होकर प्रलय तक विचरण करना : 'ॐ नमो भगवते रुद्राय नमो हरितगदाधराय त्रासय त्रासय क्षोभय क्षोभय चालने चालने स्वाहा'। कोकजिह्वा, भारङ्गी, गुड़ यह लोह से वेष्टित कर मुख में डालकर सौ योजन जा सकता है और बहुत शीघ्र वापस आ सकता है इसमें सन्देह नहीं।

अङ्कोल तेल सम्पिष्टां श्वेतसर्षप लेपिताम् ।
पादुकामुष्ट्रचर्मोत्थां समारुह्य शतं व्रजेत् ॥ ११३ ॥

अंकोल के तेल और सरसों के तेल से ऊँट के चर्म की पादुका का लेपन कर उसपर चढ़कर सौ कोस जा सकता है।

इति पादुकासाधनम् ।

अथानावृष्टिहरणम्

हूँ ह्रीं (अथवा) 'हुं श्रीं हुं' इमं मन्त्रं जलमध्ये प्रविश्य यदिजपेत् तदा अनावृष्टिं हरति ॥ महावृष्टिर्भवति ॥

इत्यनावृष्टिहरणम् ।

'हुं श्रीं हुं' इस मन्त्र को जल के मध्य में खड़ा होकर जपने से अनावृष्टि जाती रहती है और महावृष्टि होती है।

इति अनावृष्टिहरण ।

इति श्रीनित्यनाथविरचिते कामरत्ने कामसिद्ध्यादि अनावृष्टिनिवारणं नाम द्वादशोपदेशः ॥ १२ ॥

अथ निधिदर्शकमंजनम्

अज्ञानानां तु सर्वेषां मन्त्रं साध्यमघोरकम् ।
विना मन्त्रेण विद्याश्चनाशयन्ति पदे पदे ॥ १ ॥

सब अंजनों में अघोर मन्त्र साधन करना उचित है। बिना मन्त्र के पद पद पर विद्या नष्ट होती है।

यक्षिणीमूर्त्तिमाश्रित्य जपेदष्टसहस्रकम् ।
ततः सर्वविधानानि सुसाध्यानि च प्रारभेत् ॥ २ ॥

यक्षिणी मूर्ति के आश्रित होकर आठ सहस्र जप करने से सब निधि उसको सुखपूर्वक विदित हो जायगी।

ॐ बहुरूपं विश्वरूपं विद्याधर महेश्वरम्।
जपाम्यहं महादेवं सर्वसिद्धि प्रदायकम्॥ ३॥

'ॐ बहुरूप विश्वरूप विद्याधर महेश्वर' सब सिद्धि के देने वाले महादेव का मैं जप करता हूं।

ॐ नमो रुद्राय रुद्ररूपाय नमो बहुरूपाय नमो विश्वरूपाय नमो विश्वात्मने नमः तत्पुरुष यक्षाय नमो यक्षरूपाय नम एकस्मै नम [1]एकाय नम एकरौरवाय नम एकयक्षाय नम एकेक्षणाय नमो यक्षाय नमो वरदाय नमः तुद तुद स्वाहा। सोपवासो जितेन्द्रियो भूत्वा महेशपूजां कृत्वा इमं मन्त्रं जपेत्सिद्धिर्भवति॥

'ॐ नमो रुद्राय रुद्ररूपाय नमो बहुरूपाय नमो विश्वरूपाय नमो विश्वात्मने नमः तत्पुरुषयक्षाय नमो यक्षरूपाय नमः एकस्मै। नम एकाय नमः एकरौरवाय नम एकयक्षाय नम एकेक्षणाय नमो यक्षाय नमो वरदाय नम तुद तुद स्वाहा'। उपवास रख जितेन्द्रिय होकर शिव की पूजाकर इस मन्त्र को जपने से सिद्धि होती है।

कज्जलानां पातनार्थं ग्राह्यो यत्नेन पावकः।
दीक्षितस्य गृहे श्रेष्ठं चितायान्तु विशेषतः॥ ४॥
रजकस्य गृहाद्वापि [2]तस्करस्य ग्रहाच्चयः।
'ॐ ज्वलित विद्युद्धूमाय स्वाहा'। अयमग्नि ग्रहण मन्त्रः।
वा ज्वलित विद्युते स्वाहा ॐ नमो भगवते वासुदेवाय
बन्ध बन्ध श्रीपतये स्वाहा॥
अनेन मन्त्रेणवर्तिमभिमन्त्रयेत्।
ॐ नमो भगवते सिद्धसाधकाय ज्वल ज्वल पच पच पातय पातय बन्धय बन्धय संहर संहर दर्शय दर्शय निधिं नमः॥ अनेनदीपं ज्वालयेत्। ॐ ऐं मन्त्रः सर्वसिद्धेभ्यो नमोविश्वेभ्यः स्वाहा।
विच्चे वा पाठः। अनेन कज्जलं ग्राह्यम्॥
ॐ कालिकालिमहाकालि रक्षेदमञ्जनं नमो विश्वेभ्यः स्वाहा
अनेन मन्त्रेण यत्किंचिदंजनद्रव्यमभिमन्त्रयेत्॥
ॐ सर्वेसर्वहिते क्लीं सर्वे सर्वहिते सर्वौषधि प्रयाहिते।
विरतेनमो नमः स्वाहा॥

---

१ एकरोमाय नमो वा पाठः। २ तक्षकस्य गृहाच्च वा पाठः।

अनेन मन्त्रेणां जनयोग्यां मूलिकामभिमन्त्रयेत् ।
आदौ केवलहेमशलाकयानेत्र मञ्जयित्वा ततस्तयैव
शलाकया अञ्जनद्रव्यमञ्जयेत् ॥
अंजयित्वांजनं पश्चात्सप्तधारस्य पत्रकम् ।
बन्धयेत्प्रति नेत्रन्तु अच्छिद्रं तदधोमुखम् ॥ ५ ॥
तस्योपरिसितं वस्त्रं पट्टजञ्चापि बन्धयेत् ।
नांज्यादधिकहीनांगं श्वदंष्ट्रं चाग्निदग्धकम् ॥ ६ ॥
सम्पूर्णांगं शुचिस्नात्वाद्विदिनं नक्तभोजनम् ।
क्षीरशाल्यन्नभोक्तव्यं त्रिदिनां ते ततोञ्जयेत् ॥ ७ ॥
अंजितस्य शिखाबन्धं कर्तव्यं मन्त्र उच्यते ॥ ८ ॥
ॐ नमो भगवते रुद्राय तुल तुल महेश्वर माहेश्वर
नुज्वल नुज्वल विज्वल विज्वल मिज्वल मिज्वल हर हर रक्षरक्ष
पूजिते यक्षकुमारि सुलोचने स्वाहा ॥ ॐ नमो भगवते रुद्राय
ॐ नन्न नन्न महेन्न विहेन्न विहेन्न मिहेन्न मिहेन्न हर हर
रक्ष रक्ष पूजिते यक्षकुमारिसुलोचने स्वाहा ।
यक्षाणां मूर्त्तिमाश्रित्य उदयास्तं मनुं जपेत् ॥
पूर्वमेव समाख्यातं शिखाबन्धं शिवोदितम् ॥ ९ ॥
इदं सर्वांजने ज्ञातव्यम् ।

काजल पारने के लिये यत्नपूर्वक अग्नि ग्रहण करे। दीक्षित के घर की अग्नि श्रेष्ठ है या विशेष कर चिताग्नि उत्तम है अथवा धोबी के घर से या चोर के यहाँ से अग्नि लावे। मन्त्र यह है 'ॐ ज्वलितविद्युद्धूमाय स्वाहा'। अग्निग्रहण का मन्त्र : 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय धर धर बन्ध बन्ध श्रीपतये स्वाहा'। इस मन्त्र से बत्ती को अभिमन्त्रित करे। 'ॐ नमो भगवते सिद्ध-साधकाय ज्वल ज्वल पत पत पातय पातय बन्ध बन्ध संहर संहर दर्शय दर्शय निधिर्मम' इस मन्त्र से दीपक जलावे। 'ॐ ऐं मन्त्र सिद्धेभ्यो नमोविश्वेभ्यः स्वाहा'। इस मन्त्र से कज्जल ग्रहण करे। 'ॐ कालिकालिमहाकालि रक्षेद-मञ्जनं नमो विश्वेभ्यः स्वाहा' इस मन्त्र में अञ्जन द्रव्य को अभिमन्त्रित करे। 'ॐ सर्वे सर्वहिते क्लीं सर्वे सर्वहिते सर्वऔषधी प्रियाहिते विरते नमो नमः स्वाहा' इस मन्त्र से अञ्जन योग्यवर्ति को अभिमन्त्रित करे। प्रथम सुवर्ण-शलाका से नेत्रों को आँजकर उस शलाका से अञ्जन द्रव्य को अभिमन्त्रित करे। इस प्रकार अञ्जन को आँजकर सातधारक पत्र को बाँध प्रति नेत्र को अच्छिद्र और अधोमुख बन्धित करे। उसके ऊपर सम्यक् प्रकार से रक्खे हुए

श्वेतवस्त्र का वेष्टन करे या रेशमी कपड़ा बाँधे और उस समय अधिक और हीन अङ्ग वालों को या श्वदंष्ट्र, अग्निदग्ध को न आँजे। सम्पूर्ण प्रकार से पवित्र हो स्नान करके दो दिन पर्यन्त रात्रि में भोजन करे और दूध शालिधान खाय। इस प्रकार तीन दिन के उपरान्त फिर आँजे, आँजकर शिखाबन्धन करे। उसका मन्त्र कहते हैं 'ॐ नमो भगवते रुद्राय तुल तुल महेश्वर माहेश्वर नुज्वल नुज्वल विज्वल विज्वल मिज्वल मिज्वल हर हर रक्ष रक्ष पूजिते यक्षकुमारी सुलोचने स्वाहा'। यक्षों की मूर्ति के आश्रित होकर उदय और अस्त में इनका जप करे। शिखाबन्धन शिव ने पहले कह दिया है। यह सब अञ्जन में जानना चाहिये।

शरत्काले तु संग्राह्या भूलतारक्तवर्णका।
सिन्दूर पूरितां कृत्वा वर्त्तितूलेन वेष्टयेत् ॥ १० ॥
अतिकृष्णतिलतैलं ग्राहयेद्रक्षयेत्सुधी।
तैलवर्त्योः प्रयोगेण कज्जलं चोत्तरायणे ॥ ११ ॥
ग्राहयित्वाञ्जनं चक्षुर्निधिंपश्यति साधकः।
प्रमाणं च विजानाति ग्रह्णाति च यथेप्सितम् ॥ १२ ॥

शरत्काल में पृथ्वी से इन्द्रगोप (वीरबहूटी) ग्रहण करनी चाहिये। उसमें सिन्दूर पूरित करके आक की रूई की बत्ती करे और काले तिलों का प्रचुर तेल लेकर उसको रक्षित करे। उक्त प्रयोग से बत्ती जलाकर उत्तरायण में कज्जल ग्रहण करने और उसक अञ्जन करने से निधि का दर्शन होता है। इसका प्रणाम जानकर यथेष्ठ ग्रहण कर सकता है।

अतिकृष्णस्य काकस्य जिह्वा मांसं समाहरेत्।
वेष्टयेद्रवितूलेनवर्ति तेनैव कारयेत् ॥ १३ ॥
अजाघृतेनदीपन्तु प्रज्वाल्यादाय कज्जलम्।
अंजिताक्षोनरस्तेन निधिं पश्यति पूर्ववत् ॥ १४ ॥

अत्यन्त काले कौए की जिह्वा का मांस लाकर उसको आक की रूई से लपेट कर बत्ती के समान कर बकरी के घी में उसका दीपक जलाकर कज्जल ग्रहण करे। उसको लगाने से मनुष्य अज्ञात निधि को पूर्ववत् देखता है।

सप्तधापद्मसूत्राणि भावयेदिक्षुजै रसैः।
उद्धृत्यज्वालयेद्दीपमंकुलीतैल संयुतम् ॥ १५ ॥
ग्राह्यं कृष्णत्रयोदश्यां कज्जलं निधिदर्शकम्।
सर्वांजनमिदं सिद्धं शम्भुनापरिकीर्तितम् ॥ १६ ॥
दीपकज्जलयोः पात्रं कर्त्तव्यं नरमुण्डजम्।
सर्वेषां कज्जलानां तु सत्यं स्याच्छिव भाषितम् ॥ १७ ॥

ईख के रस में पद्मसूत्र को सात बार भावना दे। फिर उसे लेकर अंकुली के तेल से दीपक जलावे। कृष्ण पक्ष की त्रयोदशी को कज्जल ग्रहण करने से निधि का दर्शन होता है। यह सर्वसिद्ध अञ्जन शिवजी ने कहा है परन्तु सब प्रकार के इन [1]दीपकों से काजल पारने के लिये पात्र के रूप में मनुष्य की खोपड़ी ग्रहण करनी चाहिये ऐसा शिवजी ने कहा है।

रक्तेन कृकलासस्य भावयित्वा मनश्शिलाम्।
तेनैवांजित नेत्रस्तु निधिं पश्यति पूर्ववत् ॥ १८ ॥

गिरगिट के रक्त से मैनशिल को भावना देकर इससे नेत्र रंजित करके पूर्ववत् निधि को देखता है।

गृहीत्वा चानुराधायां वन्दां शाखोट वृक्षजाम्।
गोरोचनसमं पिष्ट्वा ह्यंजनं निधिदर्शकम्।
एतत्सर्वांजनख्यातं प्रसिद्धं शिवभाषितम् १९ ॥

शाखोट वृक्ष का वन्दा अनुराधा नक्षत्र में ग्रहण करके गोरोचन के साथ पीसकर आँजने से निधि का दर्शन होता है। यह सब अञ्जन प्रसिद्ध शिवजी के कहे हुये हैं।

अगस्त्य वृक्षजां कुर्यात्पादुकां निधिदर्शकाम्।
पादुकांजनयोगेन सिद्धियोगा भवन्ति वै ॥ २० ॥

अगस्त्य के पेड़ की पादुका बनाने से निधि दर्शन होता है। पादुका अञ्जन के योग से सिद्ध योग होता है।

ॐनमो भगवते रुद्राय उड्डामरेश्वराय शिलि शिलि धूमरे नागवेतालिनी स्वाहा। अनेन पादुकामभिमन्त्रयेत्।
तुलसीमूलिकां पुष्येशनिवारे समुद्धरेत्।
निष्पिष्यकांजिकेनाथ मधुना पुनरंजयेत् ॥ २१ ॥
पादजातं कुमारं वा कन्यकां वातदानिधिम्।
दृश्यते नात्रसन्देहः पातालं लम्बकावपि ॥ २२ ॥

'ॐ नमो भगवते रुद्राय उड्डामरेश्वराय शिलि शिलि धूमरे नागवेतालिनी स्वाहा' इससे पादुका को अभिमन्त्रित करे। तुलसी की जड़ पुष्यनक्षत्र में शनिवार के दिन ग्रहण कर उसे कांजी में डाल शहद में मिलाकर आँजने से श्रेष्ठ वर्ण में उत्पन्न हुए कुमार या कन्या को निधि का दर्शन हो सकता है, इसमें सन्देह नहीं। पातालपर्यन्त भी निधि हो तो उसका दर्शन हो सकता है।

---

१ दीपक भी खोपड़ी की हो।

ॐ नमो भगवते रुद्राय कज्जललेपांजनं दर्शय दर्शय स्वाहा ठः ठः ।
अनेन मन्त्रेण कज्जललेपांजनमभिमन्त्रयेत् ।
खन्यमाने च सर्पाश्च निस्सरन्ति पदेपदे ॥ २३ ॥
औषधेन विना तेभ्यो भयं स्यान्मन्त्रिणामपि ।
तस्मादौषधयोगेन पादलेपेन वांजयेत् ॥ २४ ॥

'ॐ नमो भगवते रुद्राय कज्जललेपांजनं दर्शय दर्शय स्वाहा ठः ठः' इस मन्त्र से कज्जललेपांजन को अभिमन्त्रित करे । फिर खनन करने से पद-पद पर बड़े-बड़े सर्प निकलते हैं । औषधि से बिना मन्त्र वालों को भी इनसे भय हो सकता है । इस कारण औषधि के योग से चरण में लेप करके इनका जप करे ।

अर्कस्य करवीरस्यपनसस्य तु मूलिकाम् ।
पिष्ट्वा पादप्रलेपाच्च दूरेगच्छन्ति पन्नगा. ॥ २५ ॥
इति निधिदर्शकांजनम् ।

आक, करवीर और पनस की जड़ पीसकर चरणों में लेप करने से सर्प दूर भाग जाते हैं । जहाँ 'उत्पल मूलिका' पाठ है वहाँ कमल की जड़ लेना चहिये ।

इति निधिदर्शकअंजन ।

अथ अदृश्यकरणम्

चतुर्लक्षमिमं मन्त्रं श्मशाने प्रजपेच्छुचिः ।
नग्नवृत्तिस्ततस्तुष्टा पटं यच्छति यक्षिणी ॥ २६ ॥
तेनावृतो नरोदृश्योविचरेद्वसुधातले ।
निधिम्पश्यति गृह्णन्ति न विघ्नैः परिभूयते ॥ २७ ॥

पवित्र होकर आगे कहा हुआ मन्त्र श्मशान में नग्न होकर ४,००,००० जपने से साधक को यक्षिणी एक वस्त्र देती है उससे साधक किसी को न दिखाई पड़ता हुआ पृथ्वीतल में विचरता है और निधि देखकर ग्रहण कर सकता है । कहीं विघ्नों से उसका तिरस्कार नहीं होता है ।

ॐ ह्रां ह्रीं स्फें श्मशानवासिनी स्वाहा ।
निशाचरीं निशिध्यात्वाजप्त्वा वामेनपाणिना ।
अदृश्यकारिणीं विद्यां लक्षजाप्ये प्रयच्छति ॥ २८ ॥
ॐ नमो निशाचर महामहेश्वरपर्यटतः
सर्वलोकलोचनानि बन्धय बन्धय देव्याज्ञापयति स्वाहा ।
रात्रौ कृष्णचतुर्दश्यां श्मशानान्तः शिवालये ।
बलिनाचोपहारेण कुर्यादर्चनमुत्तमम् ॥ २९ ॥

ततोदीपांगुली तैलैर्वर्तिः स्यादर्क तन्तुभिः ।
प्रज्वाल्यनृकपाले तु तत्पात्रे घृत कज्जलम् ॥ ३० ॥
अञ्जयेन्नेत्रयुगलं देवैरपि न दृश्यते ।

'ॐ ह्रां ह्रीं स्फें श्मशानवासिनी स्वाहा' रात्रि में ध्यान कर वाम हाथ से जप करता हुआ एक लक्ष जप करके इस अदृष्टकरण विद्या को प्राप्त होता है। 'ॐ नमो निशाचर महामहेश्वर मम पर्यटतः सर्वलोकलोचनानि बन्ध बन्ध देव्याज्ञापयति स्वाहा' कृष्ण चतुर्दशी की रात्रि में श्मशान या शिवालय आदि में बलिउपहार आदि से उत्तम अर्चन करे और फिर अंकुली के तेल से युक्त आक के तन्तुओं की बत्ती बनाकर मनुष्य की खोपड़ी में जलाकर खोपड़ी पर ही काजल पारे। उसको दोनों आँखों में लगाने से साधक देवताओं को भी नहीं दिखाई पड़ता।

अर्कशाल्मलि कार्पासपट्टपद्मज तन्तुभिः ॥ ३१ ॥
पञ्चभिर्वर्त्तिकाभिश्च नृकपालेषु पञ्चसु ।
[1]नवनीतेन दीपाःस्युः कज्जलं नृकपालतः ॥ ३२ ॥
ग्राह्येत्पञ्चभिर्यत्नात्पूर्ववच्च शिवालये ।
पञ्चस्थानीयजातं तु एकीकुर्यात्तु ते पुनः ॥ ३३ ॥
मन्त्रयित्वाञ्जयेन्नेत्रे देवैरपि न दृश्यते ॥ ३४ ॥

ॐ हूँ फट स्वाहा कालि कालि भहाकालि मांसशोणित भक्षिणि रक्तकृष्णमुखे देवीमामेपश्यतु मानुषेति ॐ हूँ फट स्वाहा। एतन्मन्त्रायुत जपात्सिद्धिदो भवति। उक्तास्ते अदृश्यीकरण प्रयोगाः।

अनेन मन्त्रेणाष्टोत्तर शताभिमन्त्रिता अंकुली
तैलप्रयोगात्सिद्धा भवन्ति ॥

आक, शालिधान्य, कपास का वस्त्र, कमल के तन्तु इनकी पांच बत्ती करके अलग-अलग पाँच मनुष्यों की खोपड़ी में पारे। मक्खन को तेल के स्थान में जलाकर या नर तेल से मनुष्य की खोपड़ी में काजल करना चाहिये। इन पाँचों को पूर्ववत् शिवालय में ग्रहण करे। पाँचों स्थानों से लेकर फिर उसे एकत्र करे। फिर अभिमन्त्रित कर नेत्रों में लगाने से देवताओं को भी नहीं दिखाई पड़ता। 'ॐ हूं फट् कालि कालि महाकाली मांसशोणितकी भक्षण करने वाली रक्तकृष्णमुखे देवि पश्यतु मानुषेति ॐ हूं फट् स्वाहा' यह मन्त्र १०,००० जपने से सिद्धि होती है। यह सब अदृश्य करने के प्रयोग हैं। इस मन्त्र से एक सौ आठ बार अभिमन्त्रित करने और अंगुली के तेल के प्रयोग से सिद्धि होती।

---

१ नरतैलेन इति वा पाठः (नर का तेल)

अंकुली तैलसंसिक्तायवाः सप्तदिनावधि ।
त्रिलोहवेष्टितास्तेषां गुटिकां कारयेच्छुभाम् ॥ ३५ ॥
अदृश्यकारिणी सा तु मुखस्थानात्र संशयः ।
तत्तैलेसर्षपाश्वेतात्रिलोहेन तु वेष्टिता ॥ ३६ ॥
गुटिका मुखमध्यस्था साक्षाददृश्यकारिणी ।

अंकुली तथा गजकर्णी के तेल से सात दिन पर्यन्त जौ को सिचन करे और उनको [1]त्रिलोह से वेष्टित कर सुन्दर गुटिका बनावे । कहीं जौ के स्थान पर सप्तच्छदकी जटा है । इससे अवश्य अदृश्यकरणी विद्या प्राप्त हो जाती है इसमें सन्देह नहीं । यह तेल श्वेत सरसों और त्रिलोह से युक्त करके अर्थात् गुटिका बनाकर चाँदी-ताँबे आदि से मढ़कर मुख में रखने से अदृश्य हो जाता है ।

कृष्णकाकस्य रुधिरं पित्तं गोमायु सम्भवम् ॥ ३७ ॥
काकारिनख चंच्वापिसमभागं विचूर्णयेत् ।
ऋक्षेपुनर्वसौ वर्ति कृत्वा नेत्रे चरंजयेत् ॥ ३८ ॥
अदृश्योभवतिक्षिप्रं सर्वकार्य प्रसाधकः ।
कृष्णकुक्कुट पुच्छाग्रं निर्माल्यं मृत[2]कस्य च ॥ ३९ ॥
काकनेत्रं च मरिचं पिष्ट्वा कार्यं च मूत्रकैः ।

काले कौए का रुधिर, गीदड़ का पित्ता, उलूक के नख और चोच यह समान भाग लेकर चूर्ण करे । पुनर्वसु नक्षत्र में इसकी बत्ती बनाकर नेत्रों को आँजने से वह शीघ्र अदृश्य हो जाता है तथा सब कार्य सिद्ध होते हैं ।

कलायार्द्ध प्रमाणेन वटीं कृत्वा प्रशोषयेत् ॥ ४० ॥
तेनैवाञ्जितनेत्रस्तु अदृश्योभवति ध्रुवम् ।

काले मुर्गे की पूँछ का अग्रभाग, मृतक का निर्माल्य, कौए का नेत्र, काली, मिर्च और अश्ववला यह गोमूत्र के साथ पीसकर बेर के बराबर इसकी गोली बनाकर सुखा ले । इससे नेत्रों को आँजने से अवश्य ही अदृश्य हो जाता है ।

कृष्णमार्जारान्तरस्थं रक्तं संगृह्य भावयेत् ॥ ४१ ॥
नक्तमालस्य तैलेन तत्र श्वेतार्क सूत्रजाम् ।
वर्तिप्रज्वाल्य वज्र[3]स्य दले संगृह्य कज्जलम् ॥ ४२ ॥
तेनांजनेन मनुजस्त्वदृश्योभवति ध्रुवम् ।

काली बिल्ली का रक्त ग्रहण कर भावना देने से, नक्तमाल (करञ्ज) तेल

---

१ सोना, चाँदी, ताँबा । २ शंकरस्य च इति पाठः ।
३ बदरस्य दले इति पाठः ।

द्वारा यत्नपूर्वक श्वेत आक की, कपास की, बत्ती जलाकर वज्रवृक्ष (सेहुँड़) के पत्तों से काजल ग्रहण कर उसको आँजने से अवश्य ही मनुष्य अदृश्य हो जाता है।

सुकृष्णं चैव मार्जारं मारयित्वा चतुष्पथे ॥ ४३ ॥
प्रोक्षणं कारयित्वा तु दिनानां पञ्चविंशतिः।
तत्संगृह्य प्रयत्नेन क्षालयेच्छीत वारिणा ॥ ४४ ॥
यदस्थि च श्रोत्रभेदी स्याद्ग्राह्यं यत्नतो भयम्।
पूजयित्वा महाकालीं गोरोचन समन्वितम् ॥ ४५ ॥
नकुलस्य तु पित्तेन भावयित्वा प्रपेषयेत्।
तद्वर्त्तितिलकादेव नरोदृश्यो भवेद् ध्रुवम् ॥ ४६ ॥

अथवा चौराहे में काली बिल्ली का वध कर पचीस दिन पर्यन्त उसे प्रोक्षण करे अर्थात् ग्रहण कर शीतल जल से धोवे। यदि अस्थि श्रोत्रभेदी हो तो यत्न से ग्रहण कर गोरोचन से महाकाली की पूजा-जप करे। उसे नेवले के पित्ते की भावना देकर पीसे। उसकी बत्ती से तिलक करने से अवश्य ही मनुष्य अदृश्य हो जाता है।

नृमांसञ्चशिवामांसं यत्नतो ग्राहयेद्बुधः।
प्रथमं रजस्वलायाश्च रुधिरेण वटीं कुरु ॥ ४७ ॥
त्रिलोहवेष्टिता सा तु मुखस्थादृश्यकारिणी।

मनुष्य और गीदड़ी का मांस यत्न से ग्रहण करके प्रथम रजस्थला हुई स्त्री के रुधिर से उसकी वटिका बनावे। चाँदी, ताँबे अथवा सोने से मढ़कर उसे मुख में रखने से मनुष्य अदृश्य हो जाता है।

कृष्णमार्जार मुण्डे तु कृष्ण गुञ्जांप्रवापयेत् ॥ ४८ ॥
तत्फलं वन्दनस्थं हि साक्षाददृश्यकारकम्।

काली बिल्ली के मुख में काली चौंटली बोवे। उससे उत्पन्न हुआ उसका फल मुख में रखने से मनुष्य अदृश्य हो जाता है।

कोकायनयनं वा मन्त्रिलोहेन प्रवेष्टयेत् ॥ ४९ ॥
सा वटी मुखमध्यस्था अदृश्यं कुरुते ध्रुवम्।

कोयल का बायाँ नेत्र त्रिलोह से वेष्टित कर वटी बनाकर मुख में रखने से प्राणी अदृश्य हो जाता है।

दिवाभीतस्य नयनं त्रिलोहेन प्रवेष्टयेत् ॥ ५० ॥
मुखस्थं कुरुते दृश्यं यथेच्छं विचरेन्महीम्।

अथवा उल्लू का नेत्र चाँदी सोने आदि से मढ़कर मुख में रखने से मनुष्य अदृश्य हो जाता है फिर जहाँ इच्छा हो वहाँ विचरण कर सकता है।

अक्षेचैवानुराधायां वन्दां रासलवृक्षकाम् ॥ ५१ ॥
मुखेप्रक्षिप्य च नरो अदृश्यः स्यान्न संशयः ।

अनुराधा नक्षत्र में रोहितक वृक्ष का वन्दा ग्रहण कर मनुष्य मुख में रखने से अदृश्य हो जाता है इसमें सन्देह नहीं ।

शाखोटस्य च वन्दाकं नक्षत्रे मृगशीर्षके ॥ ५२ ॥
गृहीत्वा पानपात्रेण अदृश्यो जायते नरः ।

मृगशिर नक्षत्र में शाखोट वृक्ष का वन्दा ग्रहण करे अर्थात् इसके पानमात्र करने से मनुष्य अवश्य ही अदृश्य हो जाता है इसमें सन्देह नहीं ।

भरण्यां तु समागृह्य वन्दां कार्पास सम्भवाम् ॥ ५३ ॥
हस्ते बद्ध्वाह्यदृश्यःस्यात्स्वात्यां वा निम्ववृक्षजाम् ।
पिबेदुत्तराषाढायामशोकवृक्ष सम्भवाम् ॥ ५४ ॥
वन्दां तदा अदृश्यः स्यादश्विन्यां बिल्ववृक्षजाम् ।
वन्दाकं वाकरे धृत्वा अदृश्यो जायते नरः ॥ ५५ ॥
इति अदृश्यकरणम् ।

भरणी नक्षत्र में कपास का वन्दा लेकर हाथ में बाँधने से मनुष्य अदृश्य हो जाता है; अथवा स्वाती नक्षत्र में नीम का वन्दा ग्रहण करे अथवा उत्तराषाढ़ा में अशोक वृक्ष का वन्दा ग्रहण करे या अश्विनी नक्षत्र में बेल के पेड़ का वन्दा लावे । इन्हें हाथ में धारण करने से मनुष्य अदृश्य हो जाता है ।

इति अदृश्यकरण ।

अथ मृतसंजीवनी

मृतसंजीवनीं विद्यां प्रवक्ष्यामि समासतः ।
लिङ्गमं कोलवृक्षाधः स्थापयित्वा प्रपूजयेत् ॥ ५६ ॥
नवं घटं च तत्रैव पूजयेलिङ्ग संनिधौ ।
वृक्षं लिङ्गं घटं चैव सूत्रेणैकेन वेष्टयेत् ॥ ५७ ॥
चतुर्भिस्साधकैर्नित्यं प्रणिपत्य क्रमेण तु ।
एवं द्विद्विदिनं कुर्यादघोरेण समर्चयेत् ॥ ५८ ॥
पुष्पादिफलपाकां तं साधनं कारयेद्बुधः ।
फलानि पक्वान्यादाय पूर्वोक्तं पूरयेद्घटम् ॥ ५९ ॥
तद्घटं पूजयेन्नित्यं गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ।
तुषवर्जन्ततः कुर्याद्बीजानां घर्षयेन्मुखम् ॥ ६० ॥
तन्मुखे बृंहणं बृत्तं किञ्चित्किंचित्प्रलेपयेत् ।

विस्तीर्णं मुखभागान्तः कुम्भकारकरोद्भवात् ॥ ६१ ॥
मृत्तिकां लेपयेत्तत्र तानि बीजानि रोपयेत् ।
कुण्डल्याकारयोगेन रत्नादूर्ध्वमुखानि वै ॥ ६२ ॥
शुष्कं तं ताम्रपात्रोर्ध्वं भाण्डं देयमधोमुखम् ।
आतपे धारयेत्तैलं ग्राहयेत्तं च रक्षयेत् ॥ ६३ ॥
मासार्द्धं चैव तत्तैलं मासार्द्धं तिलतैलकम् ।
नस्यन्देयं मृतस्यैव कालदष्टस्य तत्क्षणात् ॥ ६४ ॥

संक्षेप से मृतसंजीवनी विद्या को कहता हूं : ढेरे के वृक्ष के नीचे शिवलिङ्ग को स्थापन कर पूजा करे और उन्हीं के निकट नवीन कलश या घट को स्थापन करके पूजन करे । उस वृक्ष, लिङ्ग और घट को एक ही सूत्र से वेष्टित करे । चार साधकों से नित्य प्रणाम करके दो दिन बराबर यह विधान कर अघोर मन्त्र से शंकर का आराधन करे (कहीं दो-तीन दिन करना कहा है) । पुष्प फल पाक तक इस साधन को करे अर्थात् पक्के फल लाकर पूर्वोक्त घट को पूर्ण करे, उस घट का नित्य गन्ध अक्षत से पूजन करे और छिलके से रहित बीजों को मुखपर ढक दे । मुख वृद्धि में किंचित लेप करे तथा कुम्हार के यहाँ से बड़े मुख का बर्त्तन लाकर उसपर मृत्तिका लेपन करने के पश्चात् बीजों का रोपण करे अर्थात् कुण्डली के आकार में बोवे । जब वह सूख जाय तब उसपर ताँबे का पात्र रखकर नीचे को उसका मुख कर दे । फिर आतप में रखकर उससे तेल ग्रहण कर उसकी रक्षा करे । आधा माशा यह तेल और आधा माश तिल का तेल ग्रहणकर इनकी नास देने से कालरूपी राक्षस का काटा पुरुष जीवित हो जाता है ।

(अथवा) पुंशुक्रं पारदेतुल्यं तेन तैलेन मर्दयेत् ।
नस्यं देयं मृतस्यैकं कालदष्टस्य वा क्षणात् ॥ ६५ ॥
तत्कृत्वा जीव्यते सत्यं गतेनापि यमालयम् ।
रोगापमृत्यु सर्पादिमृतो जीवतिहिस्वयम् ।
जीवमायाति नोचित्रं महादेवेन भाषितम् ॥ ६६ ॥

अथवा पुरुष का शुक्र पारा यह रस तेल में मर्दन कर नास देने से कालदुष्ट जीवित हो यमालय को गया अपमृत्यु तथा सर्पादि का काटा अच्छा होता है इसमें सन्देह नहीं । यह महादेवजी ने कहा है ।

पुष्यभास्करयोगेन गुडूची मूलमाहरेत् ।
कर्षमुष्णजलैः पीतोमृते मृत्युहरो भवेत् ॥ ६७ ॥

पुष्य नक्षत्र में जब सूर्य का योग हो तब गिलोय की जड़ लावे । यह आठ कर्ष जल के साथ लेने से मृत्यु का भय दूर हो जाता है ।

ॐ अघोरेभ्योथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः । सर्वतः सर्वसर्वेभ्योनमस्ते रुद्ररूपेभ्यः । उक्तयोगानामयं मन्त्रः ॥

इति मृतसंजीवनी ।

'ॐ अघोरेभ्योथघोरेभ्योघोरघोरतरेभ्यः । सर्वतः सर्वसर्वेभ्यो नमस्ते रुद्ररूपेभ्यः' । उक्त योगों का यही मन्त्र है ।

इति मृतसंजीवनी ।

इति श्रीनित्यनाथविरचिते कामरत्ने निधिदर्शनांजनादि मृत्युसंजीवनीनामत्रयोदशोपदेशः ॥ १३ ॥

अथ विषनिवारणम्

शम्भुनोक्तं समासेन विषं स्थावरं जङ्गमम् ।
कृत्रिमं योगजं चैव वृश्चिकाद्यं तु सम्भवम् ॥ १ ॥
क्रमाल्लक्षणमेतेषां मन्त्रयुक्तं वदाम्यहम् ।
नामवक्ष्येविषाणान्तु शम्भुना कीर्त्तितुं पुरा ॥ २ ॥

शिवजी ने जो संक्षेप से स्थावर-जंगम कृत्रिम योग से उत्पन्न तथा वृश्चिकादि विष कहा है क्रम से उनके लक्षण और मन्त्रों का वर्णन करता हूं तथा उन विषों के नाम कहता हूं जो पहले शिवजी ने कहे हैं ।

दरदोवत्सनाभश्च मुस्तकं पुष्करं विषम् ।
क्रूरं शठं कर्मठं च हरिद्रं कालकूटकम् ॥ ३ ॥
इन्द्रबीजंचित्रबीजं हरितं गालवं विषम् ।
शृंगीकर्कटशृंगी च मेषशृङ्गीहलाहलम् ॥ ४ ॥
शाकूटं रक्त शृङ्गी च ह्यञ्जनं पुण्डरीककम् ।
सङ्कोचं मधुपानं च रोहिणं मेदुरन्तथा ॥ ५ ॥
पञ्चविंशतिभिर्भेदैर्विज्ञेयं स्थावरं विषम् ।
एतन्मध्येह्यति क्रूरं सङ्कोचं कालकूटकम् ॥ ६ ॥
भृङ्गीं मुस्तं वत्सनाभं पञ्चमं तु विषाद्विषम् ।

उनमें दरद (हिंगुल), वत्सनाभ, मुस्तक, पुष्कर, क्रूर, शठ, कर्मठ, हरिद्र, कालकूट, इन्द्रबीज, चित्रबीज, हरित, गालव, विष, शृङ्गी, काकडाशिङ्गी,

मेढाशिङ्गी, हलाहल विष, शक्तक, रक्तशृङ्गी, अञ्जन, पुण्डीक, संकोच, मधुपाक और रोहिणमेदुर इन पच्चीस नामों के स्थावर विष जानने चाहिये। इनमें संकोच और कालकूट विष बड़ा तीक्ष्ण है। भृङ्गी, मुस्त, वत्सनाभ, पाँचवाँ विष, ये विष से विष हैं।

एषान्देह प्रविष्टानां शृणुलक्षणमुच्यते ॥ ७ ॥

देह में प्रविष्ट हुए इन विषों का लक्षण कहता हूं सुनो।

वान्तिर्मूर्च्छातिसारं च भ्रान्तिः शूलं च कम्पनम्।
कासश्वासौ तीव्रदाहो लक्षयेद्गद्गद स्वरम् ॥ ८ ॥

उवान्त होना, मूर्च्छा, अतिसार, भ्रान्ति, शूल, कम्प, खाँसी, श्वास, तीव्रदाह, गद्गद स्वर होना यह विष खाये हुए के लक्षण हैं।

पुत्रंजीवफलामज्जां शीततोयेन पेषयेत्।
भोजने चांजने पाने लेपैः सर्वविषापहम् ॥ ९ ॥

जियापोते की मींग शीतलजल के साथ पीसकर भोजन, पान, लेपन और अञ्जन में प्रयोग करने से सब प्रकार के विष दूर होते हैं।

स्थावरं जङ्गमं क्रूरं कृत्रिमं योगजं तथा।
निष्कमात्रं न सन्देहः कालदष्टोपि जीवति ॥ १० ॥

स्थावर, जङ्गम, कृत्रिम और योगज ये विष एक निष्क उपरोक्त औषधि का सेवन करने से जाते हैं। बहुत क्या, इसके प्रताप से कालदष्ट भी जीवित होता है।

शाड्वलं टङ्कणं तुत्थं कट्फलं रजनीवचा।
नरमूत्रेण सम्पीत्वा एकैकन्तु विषं हरेत् ॥ ११ ॥

शाड्वल, शुद्ध सुहागा, तूतिया, कट्फल, हलदी और वच यह मनुष्य के मूत्र से पीसने पर एक-एक विष को दूर करते हैं।

समूलपत्रां सर्पाक्षीं तथैव देवदालिकाम्।
गिरिकर्ण्याश्च वा मूलं नरमूत्रेण पूर्ववत् ॥ १२ ॥
त्रिकटुन्देवदालिं च नस्ये सर्वविषापहम्।
ब्रह्मदण्डीय मूलं तु मधुनासहभक्षयेत् ॥ १३ ॥

पत्ते-जड़ के सहित सहदेई और देवदाली अथवा विष्णुक्रान्ता की जड़ मनुष्य के मूत्र से पूर्ववत् पीसकर, या त्रिकुटा, देवदाली इनको पीककर नास लेने से भी सब विष दूर हो जाते हैं; अथवा ब्रह्मदण्डी की जड़ मधु के सहित भक्षण करे।

श्वतांकोलस्य मूलं तु मुखस्थे तिलकेऽथवा।
मुखस्थैरण्डमूलं वा छायाशुष्कं विषापहम् ॥ १४ ॥

अथवा श्वेत अंकोल की जड़ मुख में रखने से, अथवा तिलक करने से अथवा छाया में सुखाई अरण्ड की जड़ मुख में रखने से विष दूर होता है।

टङ्कणं देवदालिं च जले पानेविषापहम्।

सुहागा, देवदाली (घघरबेल) को जल और पान में देने से यह विष को दूर करने वाली है।

नीलसर्पस्य पुच्छन्तु कृकलासस्य पुच्छकम् ॥ १५ ॥
ताम्रेणवेष्टितं कृत्वा मुद्रिकां तां च धारयेत्।
तयास्पृष्टजलं पीतं स्थावरं जङ्गमं हरेत् ॥ १६ ॥

नीले साँप की पुँछ और गिरगिट की पूँछ को ताँबे से लपेटकर मुद्रिका बनाकर हाथ में धारण करने से और इसका स्पर्श किया जलपान करने से स्थावरजंगम विष दूर हो जाते हैं।

मन्त्र : आतरथाकीयातरथा श्लातोहाते उपजीलो वृक्षमुञ्चचुलुकर पापियो सिन्दूरसावाणी कालकूटविष श्रीगोरक्षेरवाणी मुखेदिलेहये अमृतवाणी विषखाउ विषजारोविषकरोति भरविषुराहि आछेत्रिदशर ईश्वरमहादेवेर आज्ञा गोरक्षेरवाणी। सिन्दूरसावाणी कालकूट विष-शरीरमध्येहयापानी श्रीगोरक्षेर आज्ञा ॥२॥ खेदायगुरु आदमसिख आमुकरिकान्देनाही कालकूट विष ॥ ३ ॥ महादेवेर आज्ञा गोरक्षेर वाणीकालकूट विषशरीरमध्येहयापानी कालकूट विषदृष्टि हन हन ॐ पार्णा। मन्त्राभ्युक्षितं विषं मन्त्रेण वारत्रयमभिमन्त्रितं भक्षयेत् ॥ यदिकिञ्चित्तथापि विक्रियतेतर्हि चतुर्थ मन्त्रेण वारत्रयमभिमन्त्रयेत् ॥ जलं वारत्रयं गण्डूषमात्रं पेयम्।

मन्त्र : 'आतरथाकी यातरथा इलाता हारत उपजीले वृक्षमुजि चलुक चिजा पिजो सिन्दूर सारणी कालकूट विष शरीरमध्ये हयापानी श्रीगोरक्षेर आज्ञा। विशाखा विषाजारो विषाकरो भर विषहरिजाक्षे त्रिदशे ईश्वर महादेवेर आज्ञा गोरक्षेर वाणी सिन्दूर सारवाणी कालकूट विष शरीरमध्ये हयापानी' इस मन्त्र से विष खाये हुए के मुख में तीन बार मन्त्र पढ़कर जल दे और यदि कुछ विकार किया हो तो चार बार मन्त्र पढ़कर तीन बार अभिमन्त्रित कर कुल्लामात्र जलपान करने से विष दूर हो जायगा।

भूनागसत्त्व संजातां मुद्रिकां धारयेत्करे।
नतस्याक्रमते सत्यं विषं स्थावरजङ्गमम् ॥ १७ ॥
तत्स्पृष्टोदकपानेन विषं सर्वं विनश्यति।

गण्डषपदी और भूनाग के सत्व की मुद्रिका हाथ में धारण करने से स्थावरजङ्गम विष साधक पर आक्रमण नहीं कर सकते तथा इसी का स्पर्श किया जलपान करने से सब प्रकार के विष नष्ट हो जाते हैं।

शिरीषब्रध्नकं ग्राह्यं रेवत्यां चन्दनान्वितम् ॥ १८ ॥
तद्घृष्टं मर्दितं गात्रेतस्यांगेविषनाशनम् ।
वराहगोधानकुलशशकुक्कुट पित्तिकम् ॥ १९ ॥

जब रेवती नक्षत्र में चन्द्रमा हो तो शिरस का वन्दा या आक लावे। उसको घिस कर शरीर में मलने से विषनाश होता है। इससे शूकर, गोय, नेवला, खरगोश, कुत्ता इन सब का विष नष्ट होता है।

श्वेतायागिरिकर्ण्याश्च फलमूलं विपेषयेत् ।
पानेसर्वविषं हन्ति मृतोप्युत्तिष्ठते क्षणात् ॥ २० ॥
नाम्ना चामृतयोगोयं रुद्रेण भाषितः पुरा ।

श्वेत विष्णुक्रान्ता के फल और मूल दोनों को पीस ले। इसके पान करने से सब विष दूर होकर मृतक पुरुष भी उसी समय उठ बैठता है। यह अमृतयोग प्रथम शिवजी ने कहा है।

पणवं पटहं चैवह्यनेनैव प्रलेपयेत् ॥ २१ ॥
मृतोपिविषयोगेन श्रुत्वावाद्यं प्रबुध्यते ।

पणव और पटह बाजे पर भी इसी का लेप करे। विष से मरा हुआ इस योग से बाजे को सुनकर जाग उठेगा।

श्वेतापराजितामूलं पीत्वादुग्धेन मानवः ॥ २२ ॥
स्थावरं च विषं हन्ति उदरस्थं न संशयः ।

श्वेत अपराजिता की जड़ दूध के साथ पीसकर पान करने से उदर में स्थित स्थावर विष दूर होता है इसमें सन्देह नहीं।

सिन्धुकांजिकं पीत्वास्थावरादिविषं हरेत् ॥ २३ ॥

सेंधा नमक और कांजी को पीसकर पीने से स्थावर विष जाता रहता है इसमें सन्देह नहीं।

ॐ नमो भगवते उड्डामरेश्वराय कुञ्चिता मृतमर्चितजटाय ठः ठः स्वाहा। अनेन सर्वौषधमभिमन्त्रयेत् ॥

इति स्थावरविषनिवारणम् ।

मन्त्र 'ॐ नमो भगवते उड्डामरेश्वराय कुञ्चितामृतमर्चितजटाय ठः ठः स्वाहा' इससे सब औषधियों को अभिमन्त्रित करे।

इति स्थावरविषनिवारण।

अथ सर्पविषनिवारणम्

जातीनां नामरूपं च जङ्गमानामिहोच्यते ।
ब्राह्मणाः श्वेतवर्णाः स्युः क्षत्रियारक्त वर्णकाः ॥ २४ ॥
वैश्यास्तु पीतवर्णाश्च कृष्णवर्णास्तु शूद्रकाः ॥ २५ ॥

अब जंगमविष की जाति और स्वरूप कहते हैं : श्वेतवर्ण का सर्प ब्राह्मण, लालवर्ण का क्षत्रिय, पीतवर्ण का वैश्य और कृष्णवर्ण का शूद्र होता है ।

ॐमेघमालेधिमाले हरहर विषवेगं हाहाहहासवारिहं अम्बेलम्बे सर्वविषनाशिनि महामाये ह्रूं ह्रूं लंसः ठः ठः स्वाहा जः जः जः सर्वविष नाशिनी मेघमालानाम विद्या ॐ प्रौंठः नीलकण्ठाय स्वाहा ॐ नमो भगवति रक्तांगेरक्तलोचने कपिलजटे कपिलशरीरे कट् कट् कहकह भजं भजं शूलाग्रपाणि उग्रचण्डतपंमहातपं कृष्णे अतिकृष्णे इदं मानुषं शरीरमनुप्रविश्य भ्रम भ्रम भ्रामय भ्रामय नृत्य नृत्य बहुरूपेविलासिनि भक्ते कृष्णांगी पूरय पूरय वेशय वेशय विश्वरूपिणीरक्तपट्टि रुद्रोज्ञापयति ह्रूं फट् ठः ठः एषा स्वास्था वेषाविद्या ॐ नमो भगवते पार्श्वयक्षाय ह्रीं ह्रीं ह्रूं ह्रूं धेनु धेनु कम्प कम्प पुराणं दृष्ट्वामावेशय वेशय स्वाहा ॥

यह सर्पविषनाशिनी विद्या है ।

अतन्तः कुलिकश्चैव वासुकीशङ्खपालकः ॥
तक्षकश्च महापद्मः कर्कोट. पद्म एव च ।
कुलनागाष्टकं ह्येते तेषां चिह्नं शिवोदितम् ॥ २६ ॥

अनन्त, कुलीक, वासुकी, शङ्खपालक, तक्षक, महापद्म, कर्कोटक और पद्म यह आठ कुलनाग हैं । इनके चिह्न शिवजी ने कहे हैं ।

श्वेतपद्मनंतस्य मूर्ध्निपृष्ठे च दृश्यते ।
शङ्खं शेषस्य शिरसिवासुकेः पृष्ठ उत्पलम् ॥ २७ ॥

अनन्तनाग के शिर और पीठ में श्वेत पद्म विराजमान होता है, शेष के शिरपर शङ्ख का चिह्न और वासुकी के पृष्ठपर कमल का चिह्न होता है ।

त्रिनेत्रांकस्तु कर्कोटस्तक्षकः शशकांकितः ।
ज्वलत्त्रिशूलचन्द्रार्द्धं शङ्खपालस्य मूर्द्धनि ॥ २८ ॥

कर्कोटक नागपर त्रिनेत्र का चिह्न, तक्षक पर शश का अङ्क, शङ्खपाल के शिरपर जलते हुए त्रिशूल का और अर्ध चन्द्र का चिह्न है ।

राजवत्तुसमोबिन्दुर्महापद्मस्य पृष्ठतः ।
पद्मपृष्ठे च दृश्यन्ते सुरक्ताः पञ्चबिन्दवः ॥ २९ ॥

महापद्म की पीठपर राजा के समान बिन्दु होते हैं। पद्मनाग की पीठपर लाल पञ्चबिन्दु होते है। इन लक्षणों से इन्हें पहचानना चाहिये।

एवं यो वेतिजात्यादीन्नामबिन्दुं शिवोदितम् ।
तस्य मन्त्रौषधान्येव सिद्धयं ते नान्यथा पुनः ॥ ३० ॥

इस प्रकार शिव के कहे नाम, बिन्दु और जाति आदि को जो जानता है उसी को मन्त्र और औषधि सिद्ध होती है अन्यथा नहीं।

दूरतस्तस्त सर्पाद्याः पतन्ति गरुडं यथा ।
कालाख्यानामतश्चिह्नं शिवेनोक्तं यथापुरा ॥ ३१ ॥

सर्पादि उससे ऐसे दूर रहते हैं जैसे गरुड से। यह वार्ता पूर्व में शिव ने कही है।

ज्ञेयोदशविधो दंशोभुजङ्गानां भिषग्वरैः ।
भीतोन्मत्तः क्षुधार्तश्च आक्रान्तो विषदर्पितः ॥ ३२ ॥
आहारेक्षुः क्षुधार्तश्च स्वस्थान परिरक्षणे ।
नवमो वैरिसन्धानो दशमः कालसंज्ञकः ॥ ३३ ॥

सर्पोका दंश दस प्रकार का होता है ऐसा वैद्यों को जानना उचित है। भीत, उन्मत्त, क्षुधार्दित, आक्रान्त, विषदर्पित, आहार की इच्छा में भूखा, अपने स्थान की रक्षा में नौवा, और वैरिसंधान दसवाँ कालसंज्ञक है।

उद्याने जीर्णकूपे च वट शृङ्गाटचत्वरे ।
शुष्केवृक्षे श्मशाने च प्लक्षश्लेष्मात शिग्रके ॥ ३४ ॥
देवतायतनागारे तथा च शाक[1] वृक्षके ।
एषुस्थानेषु ये दष्टास्ते न जीवन्ति मानवाः ॥ ३५ ॥
भ्रूमध्ये चाधरे मूर्ध्निजंघे नेत्रे भ्रवोस्तथा ।
ग्रीवाचिबुककण्ठेषु करमध्ये च तालुके ॥ ३६ ॥
स्तनयोः सन्धयोः कुक्षौलिङ्गं वृषण नाभिषु ।
मर्मसन्धिषु सर्वत्र सर्पदष्टो न जीवति ॥ ३७ ॥

बगीचे में, जीर्णकूप में, वट, शृङ्गाट, चौराहे, सूखे वृक्ष, श्मशान में, शेलु वृक्ष, सहिजने में, देवताओं के स्थान में, शाक वृक्ष में, इतने स्थानों में जो काटे गये हैं वे मनुष्य जीवित नहीं हो सकते। भ्रूमध्य, अधर (होठ), शिर,

१ रसाले इति वा पाठः (आम)

जङ्घा, नेत्र, दोनों भौं, गर्दन, ठोडी, कण्ठ, हथेली, तालु, दोनों स्तनों की सन्धि, कोख, लिङ्ग, अण्ड, वृषण, नाभि इन सब मर्म की सन्धियों में सर्प का काटा हुआ भी, जीवित नहीं रहता।

रवौभौमेशनेर्वारे सर्पदष्टो न जीवति।
अष्टमी पञ्चमी पूर्णा अमावास्या चतुर्दशी ॥ ३८ ॥
अशुभास्तिथयः प्रोक्ताः सर्पदष्टो न जीवति।

रवि, मङ्गल और शनिवार को सर्प का काटा हुआ नहीं जीता। अष्टमी, पञ्चमी, पूर्णा, अमावास्या, चतुर्दशी, ये अशुभ तिथियाँ हैं जिनमें सर्प का काटा नहीं जीता।

कृत्तिका श्रवणामूलं विशाखाभरणी तथा ॥ ३९ ॥
पूर्वास्तिस्रस्तथाचित्राश्लेषाभेषु न जीवति।

कृत्तिका, श्रवण, मूल, विशाखा, भरणी, तीनों पूर्वा, चित्रा और आश्लेषा, इनमें काटा हुआ नहीं जीता।

मध्याह्ने सन्ध्ययोश्चैवह्यर्द्धरात्रे निशात्यये ॥ ४० ॥
कालवेलावारवेला सर्पदंष्टो न जीवति।

मध्याह्न, दिनरात की सन्धि, अर्धरात्रि, निशा के अवसान होने में और कालवेला, वारवेला, इसमें सर्प से काटा हुआ नहीं जीता।

सर्पस्य तालुमध्ये तु योदन्तोंकुश सन्निभः ॥ ४१ ॥
विमुञ्चतिविषं घोरं ते नायं काल संज्ञकः।

सर्प के तालुमूल में अंकुश के समान एक दाँत है उसीमें से वह कालसंज्ञक घोर विष को त्यागता है।

चक्राकृतिश्च वा दंशः पक्वजम्बूफलाकृतिः ॥ ४२ ॥
सुनीलः श्वेतरक्तो वा त्रिदशोपि न जीवति।

जहाँ सर्प काटे उस स्थान में चक्राकार हो जाय, या पकी जामुन सा हो जाय, या नीलवर्ण, श्वेत अथवा लालवर्ण होने से देवता भी उसकी रक्षा नहीं कर सकते।

स्रवेन्मूत्रपुरीषं वा हृच्छूलं छर्दिदाहकृत् ॥ ४३ ॥
सानुनासिकया वाक्यं सन्धिभेदमथापिवा।
ताम्राभ्रं नेत्रयुगलमथवा काकनीलम् ॥ ४४ ॥
वियोगोदेवदष्टाख्यं तं विद्यात्कालपाशगम्।

जिसका मूत्र निकलने लगे, हृदय में शूल-दाह हो वह भी नहीं जीता। जिसके गुनगुना शब्द और सन्धिभेद होता है, जिसके दोनों नेत्र ताम्रवर्ण

अथवा काक के समान नील वर्ण हो जाँय उसे दैवकृत वियोग जानकर समझ लेना चाहिये कि वह कालपाश को प्राप्त है।

सेचनादुदकेनाङ्गं शीतले न मुहुर्मुहुः ॥ ४५ ॥
रोमाञ्चो न भवेद्यस्य तं विद्यात्कालपाशगम्।

जिसके शरीर में शीतल जल छिड़कने से रोमाञ्च न हो उसको कालपाश को प्राप्त जानना चाहिये।

वेदनादंशमूले वा नष्टदंशोऽथवा भवेत् ॥ ४६ ॥
तत्क्षणात्तीव्रदाहश्च सोऽपिकालेन भक्षितः।

जिसके दंश में वेदना हो या जिसने दंशमूल न देखा हो और जलन, महादाह विसंज्ञा हो, उसे भी काल से भक्षित जानना चाहिये।

सोमं सूर्यं यदादीप्तं न पश्यति च तारकम् ॥ ४७ ॥
दर्पणे सलिले वाथ घृततैलेन वा मुखम्।
नपश्येद्वीक्ष्यमाणोपि कालदष्टो न संशयः ॥ ४८ ॥

जब चन्द्रमा सूर्य और दीप्तिमान् तारों को न देखे तथा घृत, तेल, जल में मुख की परछाँई जिसको न दिखाई पड़े उसे भी निःसन्देह काल का काटा हुआ जानना चाहिये।

ज्ञात्वाकालमकालं च पश्चाद्भेषजमाचरेत्।
सर्पदंशेविषं नास्ति कालदष्टो न जीवति ॥ ४९ ॥

काल-अकाल को जानकर औषधि करनी चाहिये क्योंकि सर्प के काटे में विष नहीं है, परन्तु जिसको काल काट ले वह जीवित नहीं रहता।

तस्यतत्रापि कर्त्तव्याचिकित्सा जीवनावधिः।
रसदिव्यौषधीनान्तु प्रभावात्कालजिद्भवेत् ॥ ५० ॥

फिर भी प्राणी के जीने के निमित्त चिकित्सा करे। रस की मात्रा तथा औषधियों के प्रभाव से कालपर विजय प्राप्त हो सकती है।

सूतकं गन्धकं तुल्यं टङ्कणं रजनीसमम्।
देवदाल्याद्रवैर्मर्थ्यं दिनन्निष्कन्तु भक्षयेत् ॥ ५१ ॥
कालशैलाशनिर्नामरसः सर्वविषापहः।
नरमूत्रं पिबेच्चानुकालदष्टोपि जीवति ॥ ५२ ॥

शोधा पारा और गन्धक बराबर ले तथा हलदी और सुहागा बराबर ले। इन्हें देवदाली के रस में युक्तकर प्रतिदिन एक कर्ष लेकर रस बना ले। इस रस का नाम कालशैलाशनि है। यह सब विषों का हरने वाला है। इसको मनुष्य के मूत्र के साथ लेने से काल का काटा भी जीवित हो जाता है।

श्वेतापराजितामूलं देवदालीय मूलकम् ।
वारिणापेषितं नस्यं कालदष्टोपि जीवति ॥ ५३ ॥

श्वेत विष्णुक्रान्ता की जड़, देवदाली (बड़ी तोरई) की जड़, जल में पीसकर नास देने से काल का काटा भी जीवित हो सकता है ।

दधिमधुनवनीतं पिप्पलीभृङ्गवेरं
मरिचमपि च कुष्ठं चाष्टमं सैन्धवं स्यात् ।
यदिदशतिसरोषस्तक्षकोवासुकिर्वा
यमसदनगतः स्यादानयेत्तत्क्षणेन ॥ ५४ ॥

दही, शहद, मक्खन, पीपल, अदरख, काली मिर्च, कूट, इनसे अठवाँ भाग सेंधा नमक इनका सेवन करने से साक्षात् तक्षक और वासुकी का काटा भी क्षणभर में मृत्यु से लौट आता है ।

कटुकीमुशलीमूलं पीत्वा तोयैर्विषापहम् ।
वृश्चिकावीरणामूलं लेपात्सर्वविषापहम् ॥ ५५ ॥

अथवा कुटकी और ताल मुशली की जड़ जल के साथ पीने से विष दूर हो जाता है । वृश्चिकाली या वीरम की जड़ का लेप करने से सर्पविष दूर हो जाता है ।

वारिणा टङ्कणं पीतमथवार्कस्य मूलकम् ।
सैन्धवं वा नृमूत्रेण प्रत्येकं विषनाशनम् ॥ ५६ ॥

जल के साथ सुहागा पीने से, अथवा आक की जड़ पीने से, अथवा मनुष्य के मूत्र से सेंधा नमक पीसकर पान करने से विष का नाश हो जाता है ।

इन्द्रवारुणिमूलं तु शुक्लाचाथ पुनर्नवा ।
वन्ध्याकर्कोटकीमूलं मुशलीशिखिमूलकम् ॥ ५७ ॥
तण्डुलोदकपानेन प्रत्येकं विषनाशनम् ।
गोक्षीरैरजनीकुष्ठं क्वाथपानं विषापहम् ॥ ५८ ॥

इन्द्रायण की जड़, श्वेत पुनर्नवा, वन्ध्या, कर्कोटकी की मूली, तालमूली, अपामार्ग की मूली यह प्रत्येक चावल के जल के साथ पान करने से विष दूर होता है । अथवा हलदी और कूट इनका काढ़ा बनाकर गाय के दूध में मिलाकर पीने से विष दूर होता है ।

भृङ्गराजस्यमूलं तु त्रिशूलिन्यास्तु मूलकम् ।
तोयैर्वातण्डुलीमूलं प्रत्येकं विषजिद्भवेत् ॥ ५९ ॥

भाँगरे को जड़, त्रिशूलिन (शिवलिङ्गी[1]) की जड़, अथवा चौलाई की

---

१ शिवलिङ्गी,औषधि ।

जड़ जल के साथ पीने से विष का हरण होता है। चावल के जल के साथ प्रत्येक वस्तु विषहर होती है।

सोमराजीबीजचूर्णं सकृद्गोमूत्र भावितम्।
चराचरविषघ्नं तन्मृतसञ्जीवनं पिबेत् ॥ ६० ॥

सोमराजी के बीजों का चूर्ण कर एक बार गोमूत्र में भावित करके देने से यह चर अचर का विषनाशक साक्षात् मृतसञ्जीवन है।

कटुतुंब्युद्भवं मूलं सूक्ष्मं गोमूत्रपेषितम्।
छायाशुष्क वटीमूत्रैः पानैर्लेपैर्विषापहा ॥ ६१ ॥

कड़वी तूम्बी की जड़ एक बार गोमूत्र में भावित कर उसकी वटी बनाकर छाया में सुखा ले। यह वटी गोमूत्र के साथ पान करने या लेपन करने से विष दूर कर सकती है।

गोमूत्रैर्नरमूत्रैर्वा पुराणेन घृतेनवा।
हरिद्रापानमात्रेणविषं हन्ति चराचरम् ॥ ६२ ॥
दशवर्षात्परं सर्पिः पुराणमिति कथ्यते।

गोमूत्र से या नरमूत्र से या पुराने घृत में हलदी को मिलाकर पान मात्र से स्थार जङ्गम का विष दूर हो जाता है। दस वर्ष में घृत पुराना हो जाता है।

यदिसर्पविषार्तानां सर्वस्थानगतं विषम् ॥ ६३ ॥
गोक्षीरैरजनीक्वाथं पिबेत्सर्वविषापहम्।
हरिद्राकुष्ठमद्ध्वाज्यं भुक्तं सर्वविषापहम् ॥ ६४ ॥

यदि सर्पादि का विष सब शरीर में प्राप्त हो गया हो तो गाय के दूध से हलदी का क्वाथ पीने से सब विष का हरण होता है। हलदी, कूट, शहद और घृत यह खाने से सब विष दूर होते हैं।

मूलन्तु श्वेतगुञ्जायावक्त्रस्थं विषनाशनम्।
पुष्योद्धृतं तस्यमूलन्नस्येन विषनाशनम् ॥ ६५ ॥

श्वेत चौंटली की जड़ मुख में रखने से विष दूर होता है। पुष्य नक्षत्र में उखाड़ी हुई इसी की जड़ का नास लेने से विष नाश होता है।

पाठाद्रवेणतन्मूलं पानेस्यात्कालकूटजित्।
अर्कमूलेन संलिप्य दंशंविषहरं महत् ॥ ६६ ॥

पाठा के साथ उसकी जड़ पान करने से कालकूट को जीतने वाली है। आक की जड़ के साथ इसी का लेप करने से सर्प का विष दूर होता है।

रक्तचित्रेन्द्रगोपाभ्यां तथा विषविनाशकम्।

लालचीता और वीरबहूटी यह भी विष का नाश करने वाली है।

सर्पं हरितवर्णञ्च पुच्छाग्रेपाटयेच्छिरः ॥ ६७ ॥
शुक्लं कृष्णं पृथक्कार्यं नस्यं सर्वविषापहम् ।
शुक्लं शुक्लेदक्षिणाङ्गे कृष्णं कृष्णे च वामके ॥ ६८ ॥
मृतसञ्जीवनं ह्येतत्कालदष्टोपि जीवति ।

हरित वर्ण सर्प की पूंछ काट ले और शिर काट ले इसे सुखा ले । शुक्ल और कृष्ण इनकी पृथक् नास लेने से सब प्रकार का सर्प विष दूर हो जाता है । शुक्ल को शुक्लपक्ष में दक्षिण अङ्ग में और कृष्ण को कृष्णपक्ष में वाम अङ्ग में नास लेना चाहिये यह मृतसंजीवन है । इसके प्रयोग से काल का काटा हुआ भी जीता है ।

तिक्तकोशातकोक्वाथं मध्वाज्यसंयुतं पिबेत् ॥ ६९ ॥
तत्क्षणाद्वमयेद्यस्तु विषयोगाद्विमुच्यति ।

कुडा, कडुए नेनुए का काढ़ा, घृत और शहद के साथ पीने से तत्काल वमन होने से विष के संयोग से छूट जाता है ।

कुटकीजम्बुमूलं वा तक्राम्लैर्वापिबेज्जलम् ॥ ७० ॥
तत्क्षणाद्वमतेशीघ्रं विषयोगाद्विमुच्यते ।

कुटकी और जामुन वृक्ष की मूल, तक्र और अम्ल पदार्थों के साथ पीसकर जल से पीने से उसी समय वमन करने से विष के संयोग से छूट जाता है ।

राजवृक्षत्वच ग्राह्यं शुक्लं कृष्णं पृथक्पृथक् ॥ ७१ ॥
शुक्लवृक्षे तु शुक्लान्तां चतुर्विंशतिभिः सह ।
मरिचैः पाननिष्ठस्य कृष्णे कृष्णत्वचं तथा ।
पीत्वातैर्निर्विषोदष्टः कथितं हरमेखले ॥ ७२ ॥

अमलतास वृक्ष की छाल ग्रहण करे जो शुक्ल और कृष्ण हों । इनको पृथक्-पृथक् ग्रहण करे । धववृक्ष में शुक्ल छाल को चौबीस पूर्ण दक्षिणी मिर्चों के साथ पान करे और कृष्ण मिर्चों में काली छाल को पीने से निर्विष हो जाता है ऐसा हरमेखला में कहा गया है ।

कुंकुमालक्तकं लोध्रं शिला चैवाथ रोचना ।
गुटिकालेपनाद्धन्ति विषं स्थावरजङ्गमम् ॥ ७३ ॥
द्वे हरिद्रे शिलातालं कुंकुमं कुष्ठं[1] जलैः ।
गुटिकालेपमात्रेण विषं हन्ति महाद्भुतम् ॥ ७४ ॥

कुमकुम, लाख, लोध, मैनशिल और गोरोचन इनकी गुटिका बनाकर लेप करने से स्थावर-जङ्गम सब प्रकार का विष दूर हो जाता है । कुमकुम,

---

१ मुस्तकं इति वा पाठः (मोथा) ।

रोली, आलक्त, महावर, दोनों हलदी, मैनशिल, ताल, कुमकुम, कूठ (या मोथा) जल इनकी गुटिका बनाकर लेप करने से स्थावर-जङ्गम विष दूर होता है।

पूतीकरञ्जबीजस्य मज्जानं कारवेल्लजम्।
पिष्ट्वा पिबेत्ससर्पिष्कं निहन्ति नात्र संशयः॥ ७५॥

पूतीकरञ्ज के बीज की मींग और करेली इनको पीसकर घी के साथ पान करने से सर्व विष अवश्य दूर होता है इसमें सन्देह नहीं।

पिप्पलीमरिचं कुष्ठं गृहधूमं मनःशिलाम्।
तालकं सर्षपाः श्वेताग[1]वां पित्तेन लोडयेत्॥ ७६॥
गुटिकाञ्जन नस्येन पानाभ्यञ्जन लेपनात्।
तक्षकेणापिदष्टस्य निर्विषी कुरुते क्षणात्॥ ७७॥

पीपल, कालीमिर्च, कूठ, घर का धूम, मैनशिल, हरताल, सफेद सरसों यह गोपित्त के (या गाय के दूध के) साथ मिलाकर इनकी गुटिका बनाकर अञ्जन, नास तथा पान या लेप करने से तक्षक का काटा हुआ भी क्षणमात्र में निर्विष हो जाता है।

पथ्याक्षौद्रं मरीचं च पत्रं हिंगुशिला वचा।
जलेनगुटिकां नस्येत्कालदष्टोपि जीवति॥ ७८॥

हरड, शहद, काली मिर्च, तेजपात, हिंगु, मैनशिल और वच इनकी गुटिका कर जल के साथ नास लेने से काल का काटा हुआ भी जीवित हो जाता है।

अश्वगन्धा मेघनादो गोमूत्रं महिषाक्षकम्।
गृहधूमेन वा लेपः शिरः कण्ठ विषं हरेत्॥ ७९॥

असगन्ध, चौंलाई की जड़, गोमूत्र, भैंस का मूत्र और गृहधूम इनका लेप शिर और कण्ठ तक प्राप्त हुए विष को दूर करता है।

पञ्चाङ्गमश्वगन्धायाश्छागीमूत्रेण पेषयेत्।
लेपेपाने न सन्देहो नानाविषविनाशनम्॥ ८०॥

असगन्ध का पञ्चांग छाग के मूत्र से पीसकर लेप और पान करने से नाना प्रकार के विष नष्ट हो जाते हैं।

शिला हिंगु वचा व्योषमभयात्वक् च पत्रकम्।
नस्ये वासुकिदष्टस्य निर्विषं शीतवारिणा॥ ८१॥

मैनशिल, हिंगु, वच, सोंठ, मिर्च, पीपल, हरड की बकली, तज और तेजपात इनका ठण्डे जल से नास लेने से वासुकी का काटा हुआ भी निर्विष हो जाता है।

---

१ गवांक्षीरेण लोडयेदिति वापाठान्तरम्। २ पत्रंपलमिति वा पाठः।

पुत्रजीवफलान्मज्जा गवांक्षीरेण पेषयेत् ।
लेपनाञ्जन नस्ये न कालदष्टोपि जीवति ॥ ८२ ॥

जियापोते के फल की मींग को गाय के दूध से पीसे । इसके लेप, अञ्जन और नास से काल का काटा हुआ भी जीवित हो जाता है ।

कृष्णधत्तूरमूलस्य चूर्णं ग्राह्यं पलोन्मितम् ।
करञ्जतैल कर्षेण वटीं कृत्वा तु धारयेत् ॥ ८३ ॥
जम्बीरस्य रसैः पीत्वा रौद्रीविषनिवारणम् ।

काले धतूरे की जड़ का एक पल चूर्ण लेकर करंज के तेल से काली वटी बनाकर उसे जम्बीरी के रस से पीने से कठिन विष भी नष्ट हो जाता है ।

लज्जालुमूलं नील्यां वा मूलं स्वच्छेनवारिणा ॥ ८४ ॥
पीत्वा रौद्रीविषं हन्तिलेपाद्गुञ्जाबलां ततः ।

लज्जावन्ती की जड़ अथवा नीली की जड़ स्वच्छ जल से पीसकर पीने से महाविष, और चौंटली, खरैंटी का लेपन करने से भी सर्प का विष दूर होता है ।

गृहधूमं हरिद्रे द्वे समूलं तन्दुलीयकम् ॥ ८५ ॥
अपिवासुकिनादष्टः पिबेद्दधिघृतान्वितम् ।

घर का धूआँ, दोनों हलदी, चौंलाई की जड़ दधि और घी के साथ पीने से वासुकी का काटा हुआ भी निर्विष हो जाता है ।

तन्दुलीयकमूलन्तु पीतं तन्दुलवारिणा ॥ ८६ ॥
तक्षकेनापि दष्टस्य निर्विषं कुरुते ध्रुवम् ।

चौंलाई की जड़ चावल के जल के साथ पीने से तक्षक का काटा हुआ भी क्षण में निर्विष हो जाता है ।

कुलिकं मूल नस्येन कालदष्टोपि जीवति ॥ ८७ ॥

कोकिला वृक्ष की जड़ का नास लेने से काल का काटा हुआ भी जीवित होता है ।

ॐ आदित्य चक्षुषा दृष्टो दृष्टोऽहं हरविषं स्वाहा ।
अनेन मन्त्रेणोक्त योगानामभिमन्त्रयेत् ॥

'ॐ आदित्य चक्षुषा दृष्टः दृष्टोऽहं हर विषं स्वाहा' इस मन्त्र से पिछले कहे योगों को अभिमन्त्रित करे ।

अपराजितामूलन्तु घृतेन त्वग्गतं विषम् ।
पयसारक्तगं हन्तिमांसगं कुष्ठचूर्णतः ॥ ८८ ॥

अपराजिता की जड़ घृत से युक्त करके पान करने से त्वचा में प्राप्त हुआ

विष जाता रहता है और दूध के साथ पान करने से रक्त में प्राप्त हुआ विष दूर होता है। कुष्ठ के चूर्ण के साथ खाने से मांस में प्राप्त हुआ विष दूर होता है।

अस्थिगं रजनीयुक्तं मेदोगं[1]लाङ्गलीयुतम्।
मज्जगं पिप्पलीयुक्तं चण्डालीमूलं संयुतम्।
शुक्रगं हन्ति लौहित्यं तस्माद्देयापराजिता[2] ॥ ८९ ॥

हलदी से युक्त हड्डी में प्राप्त हुआ विष, कलिहारी (काकिली) की जड़ से मेद में प्राप्त हुआ, पिप्पली से मज्जा में प्राप्त हुआ, और पचगुणरिया की जड़ से वीर्य में प्राप्त हुआ विष दूर होता है। इस कारण अपराजिता देनी चाहिये।

इतिभावो भवेद्यस्य आत्मरूपमिदं जगत्।
तत्सर्वविषकीटाद्यैर्भक्ष्यमाणो न बाध्यते ॥ ९० ॥

जो पुरुष ऐसा समझता है कि यह जगत् आत्मस्वरूप है उस पुरुष को किसी कीटादि का विष व्याप्त नहीं होता है।

सद्यः सर्पेणदष्टस्य वामनासिकया कृतः।
लेपः कर्णमलेनापि नृमूत्रैः सेचनेन वा ॥ ९१ ॥
स्तम्भतेगरलं तेननोर्द्ध्वं धावति धातुषु।
वराहकर्णिकामूलं हस्ते बद्धं विषापहम् ॥ ९२ ॥

जिस समय कोई काटे उसी समय हाथ की अनामिका अंगुली से बाईं नासिका का मल लेपन करने से अथवा नरमूत्र से सेचन करने से विष स्तम्भित हो जाता है, धातुओं में फैलता नहीं अथवा असगन्ध की जड़ हाथ में बाँधने से विष का हरण होता है।

शिरीष पुष्पस्वरसैः सप्ताहं मरिचं सितम्।
भावितं सर्पदष्टानां पाननस्येञ्जनं हितम्।
स्वच्छन्दभैरवी विद्या कथ्यते विषनाशिनी ॥ ९३ ॥

शिरस के फूल के स्वरस में सात दिन काली मिर्च को रखकर मिश्री के साथ लेप करने से, पान करने से, आंजने से अथवा नस्य से हितकारक है इससे सर्पविष उतरता है। स्वच्छ भैरवी विद्या को भी विषनाशनी कहा गया है।

ॐ नमो भगवती स्वच्छन्दभैरवी महाभैरवी कालकूटविषं स्फोटय स्फोटय विस्फारय विस्फारय खादय खादय अवतारय अवतारय नास्ति विष हालाहलविष कृत्रिमं विष संयोग विषह्यत्युग्रविष स्थावर-विषं जङ्गमंविषं कालचक्रयापरा इष्टमन्त्रस्तडदर्घायण इथय इथय

---

१ काकलीयुतं वापाठः। २ जयन्ती।

ॐ कालाय महाकालाय कालमर्द्द देवी अमृतगर्भ देवि ॐ ॐ फट् फट् स्वाहा अनेन मन्त्रेण झाडयेत्। सप्तधा नवधा जलमभिमन्त्र्यतेनाभिषिच्यतज्जलं पाययेच्च निर्विषंस्यादियं स्वच्छन्दभैरवी विद्या।

'ॐ नमो भगवती स्वच्छन्दभैरवी कालकूट विषं स्फोटय स्फोटय विस्फारय विस्फारय खादय खादय अवतारय अवतारय नास्ति विष हलाहल विष कृत्रिमविषं संयोगजविष ह्यत्युग्र विष स्थावर जङ्गम विष काल चंचुपापरा इष्टमन्त्र तडदर्घायण इथय इथय ॐ कालाय महाकालाय कालमर्ददेवी अमृतगर्भदेवी ॐ ॐ फट् फट् स्वाहा।' इस मन्त्र से झाड़ दे, सात बार अभिमन्त्रित कर जल दे, या नौ बार पढ़कर दे तो निर्विष हो जायगा। यह स्वच्छन्दभैरवी विद्या है।

ॐ हूं हूं संस्वः हंसः। वा ॐ क्रं क्रं संस्वः हंसः। अनेन मन्त्रेणाभिमन्त्रित पानीयपानेनापि मार्ज्जनेवानिर्विषः स्यात्॥

'ॐ हूं हूं सं स्वः हंसः' इस मन्त्र से अभिमन्त्रित जल के पान और मार्जन से मनुष्य विषरहित हो जाता है।

देवदारु चित्रकं च करवीरार्क लांगली।
मूलानि वारिणा पिष्ट्वा कालदष्टहरम्पिबेत्॥ ९४॥

देवदारु, चीता, कनेर, आक, कलिहारी इनकी जड़ जल से पीसकर पीने से कालदष्ट भी जीवित होता है।

मन्त्रौषधि प्रयोगेण यदि दष्टो न जीवति।
छेदयेत्तीक्ष्ण शस्त्रेण दंशस्थानं भिषग्वरः॥ ९५॥

यदि काटा हुआ मन्त्र या औषधि के प्रयोग से जीवित न हो तो काटे हुए स्थान को तीक्ष्ण शस्त्र से छेदन कर दे।

स्थावरन्तु विषन्दद्याद्दष्टोदष्टेन हन्यते।

अथवा उसको स्थावर विष दे क्योंकि काटे से काटा हुआ हनन होता है या विष को विष मारता है।

यस्तु संरोषितः सर्पोधूमं वक्त्राद्विमुञ्चति॥ ९६॥
तुण्डाग्रेपिशितं भुक्त्वा बहुशस्तेन दंशितः।

यदि क्रोधित सर्प मुख से धूम निकालता हो तो उसके मुख के आगे मांस रखकर उसको बहुत बार कटवा दे।

अशक्यम गदैरन्यैर्विषेणेव चिकित्सयेत्॥ ९७॥
क्षोरक्षौद्रघृतैर्युक्तं द्विगुञ्जं पाययेद्विषम्।
विषेणलेपयेद्दंशं कालदष्टोपि जीवति॥ ९८॥
मृतसंजीवनं ख्यातं निर्गुण्डी तगरं विषम्।

यदि अन्य औषधियों से अशक्य हो तो यह देकर विशेष चिकित्सा करनी चाहिये। दूध, शहद, घी से युक्त दो चौंटली भर विष दे और काटे हुए पर विष का लेप करे तो काल का काटा हुआ भी जीता है। यह मृतसंजीवन नाम से विख्यात है।

पिण्डीतगरमूलञ्च पुष्येनोत्पाट्य योजितम् ॥ ९९ ॥
दंशे देयं मृतस्यापि दष्टो जीवति तत्क्षणात्।
सर्पदष्टो यदावीरस्तं सर्प दशते स्वयम् ॥ १०० ॥
मुक्तोसौ म्रियते सर्पःस्वयं निर्विषतां व्रजेत्।

निर्गुण्डी, तगर, विष, गन्धक, और तगर का मूल पुष्य नक्षत्र में उखाड़ कर उसमें मिलावे। जहाँ सर्प ने काटा हो वहाँ यह वस्तु लगाने से गुण होगा। अथवा धीर पुरुष उस सर्प को स्वयं काट ले तब वह विष से छूटता है, सर्प मर जाता है और वह निर्विष हो जाता है।

यद्वातद्वाफलन्दन्तैः सर्पभावेन भक्षयेत् ॥ १०१ ॥
दन्तैर्वा दंशयेद्भूमिं दण्डवत्पतितो नरः।
सर्पाभावेन सन्देहो न तस्य क्रमते विषम् ॥ १०२ ॥

अथवा सर्प की भावना से किसी फल को चबा ले अथवा दण्ड के समान गिरकर दाँतों से पृथ्वी को काटे और सर्प की भावना करे। इसमें सन्देह नहीं उसको विष नहीं चढेगा।

अत्यन्तविषयोगार्त्तं जलमध्ये विनिक्षिपेत् ॥ १०३ ॥
मूलं तन्दुलवारिणा पिबति यः प्रत्यङ्गिरा सम्भवं
निष्पिष्टं शुचि भद्रयोग दिवसे तस्या हि भीतिः कुतः ॥
दर्पादेव फणीयदादशति तं मोहान्वितं मानवं
स्थाने तत्र स एव यातिनियतं चक्रीयमस्याचिरात् ॥ १०४ ॥

अथवा जो अत्यन्त विष से व्याकुल हो उसे जल में डाल दे तो निर्विष हो जायगा; अथवा जो श्वेत पुनर्नवा को चावल के पानी के साथ अच्छे मुहूर्त तथा योग में पीता है उसको सर्प के काटने का भय नहीं होता। यदि मोह से सर्प मनुष्य को दंशित करता है तो वह शीघ्र ही उसके स्थान में यमराज के लोक को जाता है।

आषाढ शुक्ल पञ्चम्यां कट्यां शिरोषमूलकम्।
तन्दुलोदक पानेन सर्पदंशो न जायते ॥ १०५ ॥
भ्रमाद्वा दशते सर्पस्तदा सर्पोविनश्यति।

आषाढ़ शुक्ल पञ्चमी के दिन जो अपनी कमर में शिरस की जड़ बाँधता है

और तन्दुल का जल पान करता है उसको सर्पदंश नहीं होता और यदि कदाचित् भ्रम से साँप काटखाय तो वह सर्प नष्ट हो जाता है।

पुष्ये श्वेतार्कमूलन्तु श्वेतवर्षाम्बुमूलकम् ॥ १०६ ॥
संगृह्य पेयं तट्टक्षेस्नात्वा तन्दुलवारिणा।

पुष्यनक्षत्र में श्वेत आक की जड़ और श्वेत पुनर्नवा की जड़ लाकर स्नान कर तन्दुल के जल के साथ जो पीता है उसको कभी सर्प से भय नहीं होता।

सर्पभीति विनाशार्थं प्रतिसंवत्सरं नरैः ॥ १०७ ॥
मसूर निम्बपत्राभ्यां खादेन्मेषगते रवौ।
अब्दमेकं न भीतिः स्याद्विषार्तस्य न संशयः।
अतिरोषान्वितस्तस्य तक्षकः किं करिष्यति ॥ १०८ ॥

जो मेष के सूर्य में एक मसूर को दो निम्ब के पत्तों के साथ भक्षण करता है उसको एक वर्ष तक सर्प से भीति नहीं होती तथा तक्षक भी क्रोध कर उसका कुछ नहीं कर सकता।

कृकलासस्यदंतांश्च श्वेतसूत्रेण वेष्टयेत्।
बाहौ बद्ध्वा विषं हन्ति विषं भुक्त्वा न बाध्यते ॥ १०९ ॥

गिरगिट के दाँत श्वेतसूत्र से लपेट कर भुजा में बाँधने से विष दूर हो जाता है। विष खाने पर भी बाधा नहीं होती।

सर्पवृश्चिकमूषाणां मुखस्तम्भः प्रजायते।
ॐ शबरी कीर्त्तय सञ्जाव सञ्जाव स्वाहा ॥ ११० ॥
अनेन मन्त्रेण हस्ते बन्धयेत्।

साँप, बिच्छू और चूहों का मुख स्तम्भित करने का मन्त्र : 'ॐ शबरी कीर्तय सञ्जाव सञ्जाव स्वाहा' सहस्र जप से सिद्धि होती है। इस मन्त्र से हाथ में बाँधे।

पातालगारुडीमूलं लम्बमानं गृहेस्थितम्।
दृष्ट्वा गच्छन्ति ते दूरं सर्पाद्या विषकीटकाः ॥ १११ ॥

छिरहिटा की जड़ घर में लाकर रख देने से सर्पादि विष के कीड़े उसे देखकर दूर पलायन कर जाते हैं।

ॐ प्लः सर्पकुलाय स्वाहा। वा अशेष सर्पकुलाय स्वाहा अनेन सप्ताभिमन्त्रिता मृत्तिकागृहमध्ये क्षिपेत्सर्पाः पलायन्ते ॥

'ॐ प्लः सर्पकुलाय स्वाहा' इस मन्त्र से सात बार अभिमन्त्रित कर मिट्टी घर में डाल देने से सर्पादिक दूर से पलायन कर जाते हैं।

इति सर्पविषनिवारण।

अथ वृश्चिकविषनिवारणम्

शिरीषबीजं गोमेदं दाडिमस्य तु मूलकम् ।
अर्कक्षीरयुतं हन्ति धूपो वृश्चिकजं विषम् ॥ ११२ ॥

शिरस के बीज, गोमेद, दाडिम की जड़, आक का दूध, इनकी धूप बिच्छू के विष को दूर करती है ।

मयूरपारावतकुक्कुटानां ग्राह्यं पुरीषं सह भानुमूलैः ।
धूपोनिहंत्याशु विषं समस्तं चतुर्विधंवृश्चिकं सर्पजातम् ॥११३॥

मोर, कबूतर, मुरगा, इनकी वीट और आक की जड़ लेकर धूप देने से या लेप से यह चार प्रकार के बिच्छू सर्पादि के विष को दूर करती है ।

रजनीचूर्णं धूपेन विषं वृश्चिकजं हरेत् ।
वस्त्रेणाच्छाद्य गात्राणि धूपधूमञ्चपाययेत् ।
दंशं च धूपयेच्छीघ्रं सर्वधूपेष्वयं विधिः ॥ ११४ ॥

हलदी का चूर्ण कर उसकी धूप देने से बिच्छू का विष उतर जाता है । वस्त्र से शरीर ढक कर धूप का धुआँ पिलाना और शीघ्रता से दंशपर धूप देना चाहिये; सब धूपों की यही विधि है ।

तोयैर्वा नागरं नस्यं पिबेद्वा सैन्धवं घृतम् ।
अर्कधत्तूरमूलं वा जलपाने विषापहम् ॥ ११५ ॥

अथवा जल के साथ सोंठ का नास देने, सेंधानमक और घृत को पान करने अथवा आक तथा धतूरे की जड़ जल के साथ पान करने से विष दूर होता है ।

पुत्रजीव फलान्मज्जां पलाशोत्थां करञ्ज[1]जाम् ।
मज्जातोयैः प्रलेपो यं हन्ति वृश्चिकजं विषम् ॥ ११६ ॥

जियापोते के फलों की मींग, ढाक और करञ्ज की मींग को जल में पीसकर लेप करने से बिच्छू का विष उतरता है ।

हिंगु वा जललेपेन वृश्चिकोत्थं विषंहरेत् ।
तिलमात्रं विषं खादेल्लेपाद्वा नाशयेद्विषम् ॥ ११७ ॥

हींग और जल का लेप बिच्छू के विष को दूर करता है अथवा तिलमात्र विष खाने या लेप करने से विष उतरता है ।

घृतार्क दुग्धलेपेन [2]यष्ट्या वा धूपितेन वा ।
बीजपूरक मूलस्य लेपाद्वापि हरीतकी ॥ ११८ ॥

---

१ कुरंजलमिति वा पाठः । २ 'पथ्याभिर्धूपितेनवा' इस पाठ में हरडों से धूपित अर्थ जानना चाहिये ।

सिक्थकं सप्तधा भाव्यं स्नुह्यर्कपयसातपे।
तत्तप्तं वह्निना स्पृष्टं दंशस्थाने विषंहरेत् ॥ ११९ ॥

अथवा घी और आक के दूध के लेप से या मुलेठी का धूप देने से अथवा बिजौरे की जड़ हरड के साथ पीसकर लेप करने से, थूहर और आक के दूध की सात भावना मोम को देकर गरम कर काटे स्थान पर लगाने से वृश्चिक का विष उतर जायगा।

लेपोजातीगुडाभ्यां वा हरिद्रा लेपनेन वा।
वृश्चिकस्य विषं हन्ति प्रत्येकं नैव संशयः ॥ १२० ॥

अथवा जाती गुड़ या हलदी के लेप से बिच्छू का विष दूर हो जाता है इसमें सन्देह नहीं।

मातुलुङ्गस्य मूलन्तु रविवारे समुद्धरेत्।
उत्तराभिमुखेनैव हूँ (वा क्रूं) मन्त्रोच्चारणात्स्पृशेत् ॥ १२१ ॥
वामाङ्गे दक्षिणे दष्टे वामे दष्टे च दक्षिणे।
मार्जनेन विषं हन्यात्सदंशं दृष्टप्रत्ययम्।
सप्तधा मार्जनेनैव विषं वृश्चिकजं हरेत् ॥ १२२ ॥

मातुलुङ्ग की जड़ रविवार के दिन लावे और उत्तर को मुखकर 'हूं वा क्रूं' मन्त्र का उच्चारण कर उसे स्पर्श करे। यदि दहिने अङ्ग में काटा हो तो वाम में और वाम में काटा हो तो दक्षिण में मार्जन करने से विष उतर जायगा यह देखा हुआ है। सात वार मार्जन करने से बिच्छू का विष नष्ट हो जाता है।

असगन्धीय मूलन्तु मूलं श्वेतपुनर्नवा।
रविवारे समुद्धृत्य द्वाभ्यां वृश्चिक दंशकम् ॥ १२३ ॥
मार्जनेन विषं हन्यात्स्वदृशाह्यनुभावितम्।
कार्पासमूलं चर्वित्वा विषजित्कर्णे फूत्कृते ॥ १२४ ॥

असगन्ध की जड़ और श्वेत पुनर्नवा की जड़ रविवार के दिन उखाड़ कर इन दोनों को बिच्छू ने जहाँ काटा हो वहाँ मार्जन करे तो अवश्य विष उतर जाता है यह देखा है; तथा कपास की जड़ चबाकर कान में फूंक मारने से भी विष उतर जाता है।

ग्राह्यं हंसपदी मूलं प्रातरादित्यवासरे।
मुखस्थं फूत्कृतं कर्णेविषं वृश्चिकजं हरेत् ॥ १२५ ॥

हंसपदी की जड़ रविवार के दिन प्रातःकाल लावे। उसे मुख में रख कान में फूंक मारने से बिच्छू का विष उतर जाता है।

ॐ क्षः फट् स्वाहा।
अनेनापमार्जयेन्निर्विषो [1]भवति।

'ॐ क्षः फट् स्वाहा' इस मन्त्र से मार्जन करने से निर्विष होता है। और भी तीन मन्त्र लिखे हैं तीसरे से कनेरकाष्ठ से जल मार्जन करने से निर्विष होगा।

बकुल त्वचबीजं वा निष्पीड्य दंशन स्थले।
प्रलेपाद्वृश्चिकविषहरणं चाभिमन्त्रितात् ॥ १२६ ॥
ॐ झं हुं यं क्रं ङं वं वं लं क्षं एं ऐं ओं औं हं हः।
इति मन्त्रेण अभिमन्त्र्य प्रलेपयेत्। हां हीं मं चं ओं इति मन्त्रेण
ओलवृन्तमभिमन्त्र्यतेन मार्जनात् वृश्चिक विषनाशो भवति।
शिवेनभाषितो योगो नावहेलनीयोह्यहम्।

मौलसिरी की छाल और बीज मसल कर दंशपर लेप करने से बिच्छू का विष उतरता है। उपरोक्त मन्त्र से लेप करे, दूसरे मन्त्र से जमीकन्द और बैंगन को अभिमन्त्रित कर मार्जन करे तो विष उतर जायगा यह शिव का कहा योग अवज्ञा के योग्य नहीं है। म्यौंडी के पत्तों की नास देने से मोह नाश होता है। ज्वरकम्प हो तो घृत मर्दन से छूटता है। चन्दन, कपूर, पान से वायु छूटता है।

इति वृश्चिकविषनिवारणम्।

कनखजूरे का विषनिवारण

दीपकोच्छिष्ट तैलं तु दंशस्थाने प्रलेपयेत् ॥ १२७ ॥

दिये के बचे तेल को दंश पर लगावे अथवा गूगल की धूप दे और उसके बाद आक के पत्ते लपेटकर बाँधने से विष छूटता है।

अथ मूषकविषनिवारणम्

शिलाताल ककुष्ठञ्च भाव्यं निर्गुण्डिका द्रवैः।
पानं मूषिकदष्टानां दत्तं तीव्रविषं हरेत् ॥ १२८ ॥

मैनशिल, हरताल, कूट इनको निर्गुण्डी के रस में भावित करके पान करने से मूसे का विष उतर जाता है।

---

१ 'आदित्यरथवेगेन विष्णोर्बाहुबलेन च। गरुडपक्षनिपातेन भूम्यांगच्छ महाविष ॥ ॐ ठः ठः ठः जः जः जः ॐ श्रीपक्षयोगिपादाज्ञा' इति मन्त्रः। दूसरा मन्त्र 'हिमवत्युत्तरे पार्श्वेकपिलोनामवृश्चिकः। तेनाहं प्रेषितो दूतो गच्छ गच्छ महाविष ॥ क्लीं क्लीं स्वाहा डाकिनी स्वाहा फट्' इति ॥ इक्कीस बार दंश को छूकर कान में जपै। अथवा 'शाङ्खो माङ्खो मांहीं खौंहीं' अनेन गरुड़मन्त्रेण वृश्चिकदष्टे करबीरकाष्ठेनापोमार्जयेन्निर्विषो भवति ॥

गृहगोधां समादाय पिष्ट्वा तन्दुलवारिणा।
लेपादाखुविषं हन्ति पिबेद्वा क्षीरपाचिताम् ॥ १२९ ॥

गृहगोधा लाकर चावल के जल से पीसकर लेप करने से चूहे का विष शान्त हो जाता है अथवा क्षीर को पाचित कर पीने से चूहे का विष शान्त हो जाता है।

सर्षपं कुंकुमं तक्रं समभागं घृतम्पिबेत्।
विषंमूषिक दष्टानां शममाप्नोति तत्क्षणात् ॥ १३० ॥

सरसों, कुमकुम, मट्ठा यह समान भाग लेकर घृत के साथ पान करने से उसी समय चूहे का विष उतर जाता है।

चिचाफल समायुक्तं गृहधूमं पलार्द्धकम्।
पुराणाज्येन सप्ताहं लिहेदाखुविषं हरेत् ॥ १३१ ॥

चिचाफल के साथ आधे पल घर का धूम पीसकर सात दिन पुराने घृत के साथ चाटने से चूहे का विष उतर जाता है।

इति मूषकविषनिवारण।

अथ श्वानविषनिवारणम्

शिरीषस्य च बीजं वै स्नुहीक्षीरेण घर्षितम्।
तल्लेपेन वरारोहे नश्येत्कुक्कुरजं विषम् ॥ १३२ ॥

शिरस के बीज थूहर के दूध में पीसकर लेय करने से कुत्ते का विष दूर हो जाता है।

गुडं तैलार्क दुग्धश्चलेपाच्छ्वानविषं हरेत्।
पिष्ट्वापामार्गमूलं च कर्षैकं मधुनालिहेत् ॥ १३३ ॥
श्वानदष्ट विषं हन्ति लेपात्कुक्कुटविष्टया।

गुड़, तेल और आक का दूध लेप करने से श्वानविष उतर जाता है अथवा चिरचिटे की जड़ पीसकर एक कर्ष शहद के साथ पीसकर चाटने या कुक्कुट की विष्ठा का लेप करने से कुत्ते का विष उतर जाता है।

उन्मत्तश्वानदंष्ट्राणां कुमारीदल सैंधवम्।
सुखोष्णं बन्धयेत्पिण्डं त्रिदिनान्ते सुखावहम् ॥ १३४ ॥

उन्मत्त कुत्ते के विष पर घीकुआर का पत्ता, सेंधा नमक कुछ गरम कर तीन दिन बाँधने से विष उतर जाता है।

ॐ हडवडकुत्ता खडवडदाँत, कुत्तेकोबाँधो सातौडाढ आवैनलाहूपाकै-न घावकुत्ते का विष उतर जाव वीरहनुमन्तकीदुहाई रामलछमन की दुहाई, फुरोमन्त्रईश्वरोवाचा।

इस मन्त्र से सात बार अभिमन्त्रित कर कुत्ते के काटे हुए को खाने के लिये गुड़ देने से वह निर्विष हो जाता है।

इति श्वानविषनिवारणम्।

अथ मत्स्यभेकादि विषनिवारणम्

[1]शिरीषफलत्वक्क्षीरं पिबेद्भेक विषापहम्।
त्र्यूषमाज्यं मेघनादोभेक मत्स्य विषापहम् ॥ १३५ ॥

शिरीष की फली और मूल जल के साथ पीने से मेंढक का विष दूर होता है। सोंठ, मिर्च, पीपल, घृत, चौंलाई यह मेंढक या मत्स्य के विष को दूर करते हैं।

शृङ्गीमत्स्य विषं स्वेदाघृतचिक्कां सपिण्डिताम् ॥ १३६ ॥

अथवा काकडासिंगी और घृत से सिंहीं मछली का विष दूर होता है।

अथ गोधाविषनिवारणम्

गृहगोधाविषं हन्यात्काश्मी[2]री फल नस्यतः।
पिबेन्मधुसितायुक्तं गृहगोधा विषंहरेत् ॥ १३७ ॥

गम्भारी के फल के नस्य का सेवन करने से छिपकली का विष शान्त हो जाता है अथवा यही शहद और मिश्री के साथ सेवन करने से छिपकली का विष दूर करता है।

अथ व्याघ्रविषनिवारणम्

वृकव्याघ्रशृगालाख्य भल्लूक द्विपवाजिनाम्।
रुधिरं स्रावयेद्दंशाद्दहेल्लोह शलाकया ॥ १३८ ॥
लेपात्सर्पविषं हन्ति मूलं श्वेतपुनर्नवा।
किमत्रबहुनोक्तेन तत्क्षणाद्विषनाशनम् ॥ १३९ ॥

भेड़िया, व्याघ्र, चीता, गीदड़, रीछ, गेंडा, इनके काटने पर वहाँ का रुधिर निकाले या उस काटे स्थान पर लोहशलाका से जलावे; अथवा श्वेत पुनर्नवा की जड़ का लेप करने से विष दूर होता है। बहुत कहने से क्या उसी समय विष नष्ट होता है।

विडङ्गस्य च पानेन व्याघ्रव्यालविषं हरेत्।
धत्तूरपत्रतोयेन चूर्णं त्रिकटु सम्भवम् ॥ १४० ॥

---

१ भिण्डीफलस्नुहीक्षीरं इति वा पाठः। २ दक्षिणात्य काश्मीरीनाम हरकिसीर को कहते हैं।

उदरस्थं विषं हन्ति व्याघ्रव्यालसमुद्भवम् ।
करञ्जतैल लेपेन ज्वालां व्याघ्रनखोद्भवाम् ॥ १४१ ॥

वायविडङ्ग के पान से व्याघ्र का और व्याल का विष दूर हो जाता है। धतूरे के पत्तों का अर्क और त्रिकुटा यह पान करने से व्याघ्र विष या व्याल विष पेट में प्राप्त हो गया हो तो भी दूर होता है। अथवा करञ्ज के तेल का लेप करने से व्याघ्र के नखों की ज्वाला शान्त हो जाती है।

गोजिह्वा मूलिकां पिष्ट्वा जलेन मधुना सह ।
लेपो हि सर्वजन्तूनां नख तुण्डविषं हरेत् ॥ १४२ ॥
तथा निम्ब वचां चैव शमीवृक्षत्वचन्तथा ।
उष्णोदकेन लेपः स्यान्नखतुण्ड विषापहः ॥ १४३ ॥

गोजिह्वालता की मूलिका शहद और जल के साथ पीसकर लेप करने से सब जन्तुओं के नख-तुण्ड का विष दूर हो जाता है। गोजिह्वा, गवेधुका, नीम, वच और शमी की छाल इनका लेप गरम जल से करने से सब जीवों के नख और मुख लगाने का विष दूर हो जाता है।

तथादारुहरिद्राया लेपोदन्तविषापहः ॥ १४४ ॥

इसी प्रकार देवदारु तथा हलदी लेप करने से दाँतों का विष दूर हो जाता है।

अथ कीटविषनिवारणम्

आज्येन तन्दुलीमूलं तुलसी मूलिकाऽपिवा ।
तन्दुलोदक पानेन कीटकोत्थं विषहरेत् ॥ १४५ ॥

घृत के साथ चौलाई की जड़, तुलसी की जड़, चावल के जल के साथ पान करने से कीट विष नष्ट हो जाता है।

लाङ्गल्याः कटुतुम्ब्या वा देवदारु निशापि वा ।
मूलं बीजं काञ्जिकेन लेपः कीटविषापहः ॥ १४६ ॥

कलिहारी' कडवी तूम्बी, देवदारु, हलदी इनका मूल और बीज कांजी के साथ लेप करने से कीट विष दूर हो जाता है।

तिलं च सर्षपं कुष्ठं बीजं करञ्ज सम्भवम् ।
उद्वर्तनात्प्रलेपाद्वा सर्वकीटविकारजित् ॥ १४७ ॥

तिल, सरसों, कूट, करञ्ज के बीज इनके उद्वर्तन या लेप से सब प्रकार के कीड़ों का विष शान्त हो जाता है।

करञ्जबीजं सिद्धार्थं तिलैर्लेपो विषापहः ।
एरण्ड तैल लेपो वा सर्वकीट विषापहः ॥ १४८ ॥

करञ्ज के बीज, सरसों, तिल इनका लेप करने से विष दूर होता है अथवा एरण्ड के तेल का लेप सब कीटों के विष को दूर करता है।

निशादारुनिशा चैव मञ्जिष्ठा नागकेशरम्।
एषां लेपो निहंत्याशु विषं लूतादि सम्भवम् ॥ १४९ ॥
इति कीटविषनिवारणम्।

हलदी, देवदारु, मजीठ, नागकेशर इनका लेप करने से [1]लूतादि का विष दूर होता है।

इति कीटविषनिवारण।

अथ सर्वजन्तूनां विषनिवारणम्

पुत्रजीव फलां मज्जां शीततोयेन पेषिताम्।
लेपनाञ्जन नस्यैस्तु पानाद्वा निष्कमात्रतः ॥ १५० ॥
व्याघ्र मूषक गोनास वृश्चिकादि विषं हरेत्।
दुस्सहं यद्विषञ्चाशु विस्फोटं च विनाशयेत् ॥ १५१ ॥

जियापोता के फल की मींग को शीतल जल के साथ पीसकर लेप करने तथा अञ्जन करने से या एक निष्कमात्र पान करने से व्याघ्र, मूषक, गोनास (सर्प) वृश्चिकादि का विष दूर हो जाता है। यह दुस्सह विष से उत्पन्न हुए विस्फोटक रोग का भी नाश करता है।

वन्ध्या कार्कोटकी कन्दं जलैः पिष्ट्वा प्रलेपयेत्।
सर्पमूषकमार्ज्जारवृश्चिकादि विषं हरेत् ॥ १५२ ॥

वन्ध्या कर्कोटकी (वनककोडा) की जड़ जल से पीसकर लेप करने से सर्प, चूहा, बिलाव, वृश्चिकादि का विष दूर हो जाता है।

अथोपविषाद्विषनिवारणम्

स्नुह्यर्कोन्मत्तकश्चैव करवीरश्च लाङ्गली।
वज्रीजैपालकः कृष्णकुष्ठं गुञ्जा तथैव च ॥ १५३ ॥
महाकालश्च इत्याद्याः स्मृतास्तूपविषा बुधैः।
ससिन्धुं काञ्जिकं पीत्वा समस्तोपविषं हरेत् ॥ १५४ ॥

स्नुहि (थूहर), अर्क, धतूरा, कनेर, लाङ्गली (कलिहारी), हड, सन्धारी (दूसरी थूहर), जमालगोटे, सुरमा, कूठ, चौंटली, महाकाललता यह वस्तुयें उपविष हैं। सेंधा नमक कांजी के साथ पान करने से सम्पूर्ण उपविषों की शान्ति होती है।

---

१ मकड़ी।

करवीरविषं हन्ति घृतेनापि हरीतकी।
निम्बपत्रं घृतं हन्ति घृतेन मधुपानतः॥ १५५॥

घृत और हरड का सेवन करने से कनेर का विष शान्त हो जाता है। नीम के पत्ते का विष घृत से अथवा घृत और मधु पान से दूर हो जाता है।

अथ कृत्रिमविषनिवारणम्

अनेक विषजीवानां चूर्णाह्यपविषैर्युतम्।
मिश्रितं नख केशाद्यैर्लोहाद्यैश्चूर्ण सञ्चयम्॥ १५६॥
कृत्रिमं च विषं ख्यातं पक्षान्मासाद्विबाधते।
आलस्यं कुरुते जाड्यं कासं श्वास बलक्षयम्॥ १५७॥

अनेक विषैले जीवों का चूर्ण अर्थात् उनके नख-केशादि मिलाकर तथा लोहादि चूर्ण के सहित सेवन करने से कृत्रिम विष नष्ट होते हैं। इसका पखवारे तथा महीने के आगे भी उपाय न करे तो आलस्य के कारण कास, श्वास होकर बल का क्षय होता है।

रक्तस्रावोज्वरः शोषः पीतत्वक्षुश्चलक्षयेत्।
मृतं सूतं मृतं स्वर्णं शुद्धं वै हेममाक्षिकम्॥ १५८॥
त्रयाणां गन्धकं तुल्यं मर्द्यं कन्याद्रवैर्दिनम्।
तच्च शुष्कं सिता क्षौद्रैर्मासमेकं लिहेत्सदा॥ १५९॥

रक्तस्राव, ज्वर, शोष और नेत्रों में पीलापन हो जाने के उपचार की औषधि यह है: शोधा पारा, सोना, शोधी सोनामाखी, इन तीनों के तुल्य गन्धक, घीकुवार के रस में एक दिन खरल करे फिर उसको सुखाकर मिश्री और शहद के सथा एक महीने तक सदा चाटे।

वह्निमूलयुतं क्षीरं मनुष्य गर नाशनम्।
पुत्रजीवफलान्मज्जा निष्कमात्रं गवांपयः॥ १६०॥
पीत्वा चोग्रगरं हन्यान्नानाकृत्रिम योगजम्।
शठी पुष्कर मूलस्य पान मद्य विषापहम्॥ १६१॥

पीपलामूल को दूध में औटाकर खाने से मनुष्य का विष नष्ट होता है, अथवा जियापोता के फल की मींग एक निष्क और गाय का दूध पान करने से तीव्र, कृत्रिम, और योगज विष दूर हो जाता है। कचूर, पुष्करमूल से अत्यन्त मद्य का विष दूर होता है।

तत्पिबेत्क्षीरपानेन गर तृष्णा ज्वरापहम्।
क्षीरं मुद्गयुतं पथ्यं शाल्यन्नं परमंहितम्॥ १६२॥

क्षीर के साथ पान करने से तृषा विष और ज्वर दूर होता है। बारम्बार दूध, मूँग, शालिअन्न खाना यह इस पर पथ्य और परमहित है। 'तत्पिबेच्छीतलेपाने' इस पाठ में या शीतल जल के साथ पीना चाहिये ऐसा अर्थ है।

गृहधूमं जलैः पिष्ट्वा तन्दुलीमूल तुल्यकम्।
कल्काच्चतुर्गुणं चाज्यं घृतात्क्षीरं चतुर्गुणम् ॥ १६३ ॥
घृतशेषं पचेत्सर्वं पिबेत्सर्वं गरापहम्।
समूलपत्रां सर्पाक्षीं जलेन क्वथितां पिबेत् ॥ १६४ ॥
नरमूत्रेश्च वा पिष्टां पिबेत्सर्वगरापहाम्।
एला तालीशपत्राणि त्र्यूषणं जीरकं समम् ॥ १६५ ॥
चूर्णाद्द्विधा सितायोज्या भुक्त्वागरहरं भवेत्।

घर का धुआँ जल के साथ पीसकर तथा चौराई की जड़ की मूल का कल्क कर कल्क से चौगुना घृत डाले उससे चौगुना दूध डाले और पकावे। जब रस जल जाय घृतमात्र शेष रह जाय तब इसके खाने से सर्व प्रकार के विष दूर हो जाते हैं। अथवा सर्पाक्षी के (नाकुली कन्द) मूल और पत्तों का लेप करने से या क्वाथ कर पान करने से अथवा नरमूत्र के साथ पीसकर पान करने से सर्वविष दूर होता है।

पयसा रजनी कुष्ठं मध्वाज्यं गृहधूमकम् ॥ १६६ ॥

इलायची, तालीसपत्र, सोंठ, मिर्च, पीपल, जीरा यह समान भाग ले। चूर्ण से दूनी मिश्री मिलाकर खाने से विष दूर होता है।

तन्दुली मूलं संयुक्तं कर्षगरहरं लिहेत् ॥ १६७ ॥

दूध के साथ हलदी, कूट, शहद, घृत, गृह का धूम, चौंलाई की जड़ के साथ कर्षमात्र सेवन करने से विष दूर होता है।

इति कृत्रिमविषनिवारणम्।

अथ योगजविषनिवारणम्

तैल कर्पूर जम्बीरसंयोगाद्योगजं विषम्।
समांशेन तु मध्वाज्यमेवं संयोगजं विषम् ॥ १६८ ॥
नारिकेलाम्बु कर्पूरं संयोगाद्योगजं विषम्।
मरिचन्तु बिकामूलं योगजं विषमेवतत् ॥ १६९ ॥

तेल, कपूर और जम्बीरी के योग से योगज विष होता है। बराबर शहद और घी से योगज विष होता है। नारियल का जल कपूर के योग से योगज

विष होता है और काली मिर्च, कडवी तूम्बी की जड़ के योग से विष होता है। विषम योग से उत्पन्न विष होता है।

पुत्रं जीवफलेनैव रजनी मारनालकैः।
देवदाली नृमूत्रैर्वा सर्पाक्षी तेन्द्रुवारुणी ॥ ४७० ॥
गिरिकर्ण्यीयमूलं वा प्रत्येकं विषजिद्भवेत्।
मध्वाज्यं काकज'ङ्घा या द्रवैः पिष्ट्वा विषं हरेत्।
गिरिकर्णी नागपुष्पी मुण्डीपानाद्विषं हरेत् ॥ १७१ ॥

जियापोता के फल को लेकर जल के साथ पीसकर लेने से तथा हलदी, कांजी और देवदाली मनुष्य के मूत्र के साथ लेने से तथा सर्पाक्षी, इन्द्रवारुणी अथवा गिरिकर्णी (अपराजिता) की जड़ यह प्रत्येक विष को जीतने वाली है। मधु, घृत के साथ काकमाची का रस पीने से विष दूर होता है। अपराजिता, नागकेशर और मुण्डी के पान से विष दूर हो जाता है।

अथ भल्लातकविषनिवारणम्

भल्लाततैल सम्पर्कात्स्फोटः सञ्जायते नृणाम्।
नवनीतं तिलं पिष्ट्वा तल्लेपेन तु तं जयेत् ॥ १७२ ॥

भिलावे और तेल के सम्पर्क से मनुष्य के शरीर में फोड़े हो जाते हैं। मक्खन के साथ तिलों को पीसकर लगाने से आराम हो जाता है।

निम्बीपत्र प्रलेपाद्वातं जयेत्तत्पदेन वा।
भल्लातकस्य मूलकस्य मृत्तिकाभिः प्रलेपनात् ॥ १७३ ॥
तत्संजात विकारांश्च नाशयत्येव निश्चितम् ॥ १७४ ॥

अथवा नीम के पत्तों का लेप करने से आराम होता है, अथवा भिलावे की जड़ का विष मृत्तिका लेपन से जाता है।

इति श्रीनित्यनाथविरचिते कामरत्ने विषनिवारणं
नाम चतुर्दशोपदेशः ॥ १४ ॥

---

१ काकमाच्या वा इति पाठः।

अथ यक्षिणीसाधनम्

सर्वासां यक्षिणीनां तु ध्यानं कुर्यात्समाहितः ।
भगिनी मातृ पुत्री स्त्री रूपं तुल्यं यथेप्सितम् ॥ १ ॥
भोज्यं निरामिषं चान्नं वर्ज्यं ताम्बूल भक्षणम् ।
उपविश्याजिनादौ च प्रातःस्नात्वानकं स्पृशेत् ॥ २ ॥
नित्यकृत्यं तु कृत्वा च स्थाने निर्जनके जपेत् ।
यावत्प्रत्यक्षतां यान्ति यक्षिण्यो वांछितप्रदाः ॥ ३ ॥
जपेल्लक्षद्वयं मन्त्रं श्मशाने निर्भयो मुनिः ।
दशांशं गुग्गुलं साज्यं हुत्वा तुष्यति विभ्रमा ॥ ४ ॥

यक्षिणी का साधन सावधान होकर करना चाहिये क्योंकि इसमें सावधानी होने से ही सिद्धि होती है। अपनी इच्छानुसार किसीको भगिनी, किसीको माता, किसीको स्त्री, तथा किसीको पुत्री के रूप में सम्बोधित करते हुये ध्यान करे। इसमें निरामिष अन्न खाना चाहिये। ताम्बूल का भक्षण न करे, अजिन मृगछालापर बैठे, प्रातःकाल स्नान कर किसी को स्पर्श न करे और अपनी नित्य क्रिया करके निर्जन स्थान में जप करे। जब तक प्रत्यक्ष होकर यक्षिणी मनोवांछित वर न दे तब तक बराबर जप करता रहे। निर्भय और मौन होकर श्मशान में दो लक्ष मन्त्र का जप करे और इसका दशांश घृत और गूगल का हवन करे तो विभ्रमा यक्षिणी प्रसन्न होती है। मन्त्रः

पञ्चाशन्मानुषाणाञ्च ददाति भोजनं सदा ।
ॐ ह्रीं वां विभ्रमरूपे एहि एहि भगवति स्वाहा ।
ॐ ह्रीं विभ्रमरूपे विभ्रमं कुरु ह्येहि भगवति स्वाहा (१)

रतिप्रियासाधनम्

शङ्खलिप्त पटे देवीं गौरवर्णां धृतोत्पलाम् ।
सर्वालङ्कारिणीं दिव्यां समालिख्यार्चयेत्ततः ॥ ५ ॥
जातीपुष्पैस्सोपचारैः सहस्रैकं ततो जपेत् ।
त्रिसन्ध्यं सप्तरात्रन्तु ततोरात्रिषु निर्जपेत् ॥ ६ ॥
अर्द्धरात्रे गते देवी समागत्य प्रयच्छति ।
पञ्चविंशति दीनारान् प्रत्यहं तोषिता सती ॥ ७ ॥

यह प्रसन्न होकर ५० मनुष्यों को सदा भोजन देती है। 'ह्रीं ॐ वां विभ्रमरूपे एहि एहि भगवति स्वाहा', 'ॐ ह्रीं विभ्रमरूपे विभ्रमं कुरु एह्येहि भगवति स्वाहा' (१)। शङ्खलिप्त पटपर देवी को इस प्रकार लिखे : कमलधारण किये गौरवर्ण सम्पूर्ण अलङ्कारयुक्त दिव्यमूर्ति है ऐसी बनाकर अर्चन करे। षोडशोपचार से चमेली के फूलों से पूजन करे और एक सहस्र मन्त्र जपे। सात दिन तक तीनों सन्ध्याओं में इसी प्रकार जप करे फिर रात्रि में भी इसी प्रकार जपे तो आधी रात के समय आकर देवी प्रत्यक्ष दर्शन देती है, और नित्यप्रति पच्चीस दीनारों[1] को सन्तुष्ट होने पर नित्य प्रदान करती है।

ॐ ह्रीं कनकनक मैथुन प्रिये रतिप्रिये स्वाहा (२)

'ॐ ह्रीं कनकनकमैथुनप्रिये रतिप्रिये स्वाहा' (२) वा ॐ ह्रीं रतिप्रिये स्वाहा।

[2]एकलिंगं महादेवं त्रिसन्ध्यं पूजयेत्सदा।
धूपं दत्त्वा जपेन्मन्त्रं त्रिसन्ध्यं त्रिसहस्रकम् ॥ ८ ॥
मासमेकं ततो याति यक्षि[3]णी सुरसुन्दरी।
दत्त्वार्घ्यं प्रणमेन्मन्त्री ब्रूतेसात्वं किमिच्छसि ॥ ९ ॥
देविदारिद्र्य दग्धोस्मि मेतन्नाशकरी भव।
ततो ददाति सा तुष्टा वित्तायुश्चिरजीवितम् ॥ १० ॥

तीनों सन्ध्याओं में सदा एकलिङ्ग महादेव का पूजन करे और धूप देकर तीनों सन्ध्याओं में तीन सहस्र उक्त मन्त्र जपे या श्वेतमूर्ति का आराधन करे। ऐसा एक महीने जप करने से सुरसुन्दरी यक्षिणी आकर प्राप्त होती है। उसे अर्घ्य देकर प्रणाम करे और जब वह कहे 'क्या इच्छा है' तब कहे 'हे देवि मैं दारिद्र्यादि से युक्त हूं मेरे दारिद्र्य का नाश करो'। तब वह प्रसन्न होकर वित्त, आयु और चिरकाल तक जीवन प्रदान करती है।

ॐ ह्रीं आगच्छ आगच्छ सुरसुन्दरि स्वाहा (३)

कुंकुमेन समालिख्य भूर्जपत्रे सुलक्षणाम्।
प्रतिपत्तिथिमारभ्य पूजां कृत्वाजपेत्ततः ॥ ११ ॥
त्रिसन्ध्यं त्रिसहस्रन्तु मासान्ते पूजयेन्निशि।
सञ्जपेदर्द्धरात्रन्तु समागत्य प्रयच्छति।
दीनाराणां सहस्रैकं ददा[4]ति परतोषिता ॥ १२ ॥

---

१ दीनार सुवर्णमुद्रा। २ कर्पूरांगमिति वा पाठः। ३ प्रत्यक्षमिति वा पाठः। ४ प्रत्यहमिति वा पाठः।

'ॐ ह्रीं आगच्छ आगच्छ सुरसुन्दरि स्वाहा (३)' यह मन्त्र भोजपत्र पर कुमकुम से लिखे और शुक्ल प्रतिपदा से पूजा आरम्भ कर जप करे। तीनों सन्ध्याओं में तीन सहस्र जप करे। एफ महीने के उपरान्त रात्रि में पूजन करे। जप करने से अर्धरात्रि में आकर देवी मनोरथ पूर्ण करती है तथा प्रसन्न होकर एक सहस्र दीनार प्रति दिन देती है।

ॐ ह्रीं ह्रीं अनुरागिणी मैथुनप्रिये स्वाहा (४)
ध्यात्वा जपेत्ततोरात्रौ सागरस्य तटे शुचिः।
लक्षजापे कृते सिद्धिर्दत्ते सागरचेटकः।
रत्नत्रयं तथा भोज्यं सौम्यो मन्त्री सुखी भवेत् ॥ १३ ॥

'ॐ अनुरागिणि मैथुनप्रिये स्वाहा (४)' इस मन्त्र को ध्यान करके पवित्र होकर सागर के किनारे जपने से सिद्ध होने से सागर चेटक अत्यन्त बहुमूल्य तीन रत्न और भोजन देता है। सौम्य रहने से मन्त्री सुखी भी होता है।

ॐ भगवन् समुद्रदेहि रत्नानि जलवासो ह्रीं नमोस्तुते स्वाहा (५)
त्रिपथे तु वटस्थाने रात्रौ मन्त्री जपेत्स्वयम्।
लक्षत्रयं ततः सिद्धा देवी च वटयक्षिणी ॥ १४ ॥
वस्त्रालङ्कारकं दिव्यं रससिद्धि रसायनम्।
दिव्यांजनन्तु सा तुष्टा साधकाय प्रयच्छति ॥ १५ ॥

'ॐ भगवन् समुद्र देहि रत्नानि जलवासो ह्रीं नमोस्तुते स्वाहा (५) पवित्र होकर त्रिमार्ग में वट के नीचे रात्रि में इस मन्त्र को अकेला जपे। तीन लक्ष जप करने से सिद्ध होकर देवी वटयक्षिणी प्रसन्न होकर वस्त्र, दिव्यअलङ्कार, रससिद्धि और रसायन, दिव्य अञ्जन, साधक के निमित्त देती है।

ॐ ह्रीं वटवासिनी यक्षकुलप[1]ताके वटयक्षिणि एह्येहि स्वाहा (६)
ॐ वटवृक्षं समारुह्य लक्षमेकं जपेन्मनुम्।
तत सप्ताभिमन्त्रेण कांजिकैः क्षालयेन्मुखम् ॥ १६ ॥
मासत्रयं जपेद्रात्रौ वरं यच्छति यक्षिणी।
रसं रसायनं दिव्यं क्षुद्रकर्मह्यनेकधा।
सिद्धानि सर्वकार्याणि नान्यथा शङ्करोब्रवीत् ॥ १७ ॥

'ॐ ह्रीं वटवासिनी यक्षकुलपताके वटयक्षिणि एह्येहि स्वाहा' (६) रात में वट के वृक्षपर चढ़कर एक लक्ष मन्त्र का जप करे। जप करने के उपरान्त सात बार अभिमन्त्रित कर काँजी से मुख धो डाले। रात्रि में तीन महीने

---

१ प्रसूते इति वा पाठः।

जपने से यक्षिणी वर, दिव्य रसायन, अनेक क्षुद्रकर्म भोज्य पदार्थ भी देती है। इससे सब कर्म सिद्ध हो जाते हैं इसमें अन्यथा नहीं ऐसा शङ्कर ने कहा है।

ॐ नमश्चन्द्राद्या वा कर्णकारण क्लीं स्वाहा।
ॐ नमो भगवते रुद्राय चण्डवेगिने स्वाहा (७)
मन्त्रद्वस्यैकैवसिद्धिः।

'ॐ नमश्चन्द्राद्यावाकर्णकारण क्लीं स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय चण्ड-वेगिने स्वाहा' (७) इन दोनों मन्त्र में से कोई एक जपने से सिद्धि होती है।

अथ विशालासाधनम्

चिञ्चावृक्षतले लक्षं मन्त्रमावर्त्तयेच्छुचिः।
शतपुष्पोद्भवैः पुष्पैः सघृतैर्होममाचरेत् ॥ १८ ॥
विशाला च तस्तुष्टारसं दिव्यं रसायनम्।

विशालासाधन मन्त्र : इमली के बृक्ष के नीचे बैठ कर पवित्र होकर जपे। इसी के या सौंफ के पत्र पुष्पों से घृत के साथ हवन करे। तब प्रसन्न होकर विशाला दिव्य रस रसायन देती है।

ॐ ऐं विशाले त्रां त्रीं क्लीं स्वाहा।
अथवा ॐ ऐं विशाले क्रीं ह्रीं ब्रीं क्लीं क्रीं स्वाहा (८)

'ॐ ऐं विशाले त्रां त्रीं क्लीं स्वाहा' (८) अथवा 'ॐ ऐं विशाले क्रीं ह्रीं ब्रीं क्लीं क्रीं स्वाहा' ये दोनों मन्त्र हैं।

अथ महाभयासाधनम्

नरास्थिनिर्मिता मालां गलेपाणौ च कर्णयोः ॥ १९ ॥
धारयेज्जपमालां च तादृशीं तु श्मशानतः।
लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं साधकोनिर्भयः शुचिः ॥ २० ॥
ततो महाभयायक्षी प्रयच्छति रसायनम्।
तस्य भक्षणमात्रेण सर्वरत्नानि चालयेत् ॥ २१ ॥
वलीपलित निर्मुक्तश्चिरंजीवी भवेन्नरः ॥ २२ ॥

मनुष्य की अस्थि से बनी माला गले, हाथ और कर्ण में धारण कर पवित्र हो निर्भय हृदय से अकेला श्मशान में वास करे। नरास्थि माला को हाथ में धारण कर एक लक्ष मन्त्र जपे। तब यह महाभया यक्षिणी प्रसन्न होकर साधक को सिद्धि और रसायन देती है जिसके भक्षणमात्र से साधक सब रत्नों को यथास्थान से चलायमान करने में समर्थ हो जाता है और वलीपलित से निर्मुक्त होकर वह चिरंजीवी होता है।

ॐ ह्रीं त्रां महाभये क्लीं स्वाहा ।

'ॐ ह्रीं त्रां महाभये क्लीं स्वाहा' । या 'ॐ क्रीं महाभये क्लीं स्वाहा' (९) उक्त साधन के ये दोनों मन्त्र हैं ।

चन्द्रिकासाधनम्

शुक्लपक्षे जपेत्तावद्यावत्संदृश्यते विधुः ।
प्रतिपत्पूर्वपूर्णां तं नवलक्षमिदं जपेत् ॥ २३ ॥
अमृतं चन्द्रिकादत्तं पीत्वा जीवोमरो भवेत् ॥ २४ ॥
ॐ ह्रीं चन्द्रिके हंसः क्रीं क्लीं स्वाहा (१०)

शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से जप आरम्भ करे और तब तक जप करे जब तक आकाश में चन्द्रमा दिखाई पड़ता रहे । इस प्रकार प्रतिपदा से पूर्णा तक नौ लक्ष जप करने से चन्द्रिका देवी प्रसन्न हो साधक को अमृत देती है । उसके दिये इस अमृत को पान करने से साधक अमर हो जाता है । 'ॐ ह्रीं चन्द्रिके हंसः क्रीं क्लीं स्वाहा' (१०) यह मन्त्र है ।

अथ रक्तकम्बलासाधनम्

जप्यं मासत्रयं रक्तकम्बलासा प्रसीदति ।
मृतकोत्थापनं कुर्यात्प्रतिमां चालयेत्तथा ॥ २५ ॥
ॐ ह्रीं रक्त कम्बले महादेवि मृतकमुत्थापय प्रतिमाश्चालय पर्वतान्कम्पय कम्पय नीलय नीलय विहस विहस हूँ हूँ (११)

रक्तकम्बला का मन्त्र तीन महीने जपने से लालकम्बला प्रसन्न होती है । इससे मृतक उत्थापन और प्रतिमाचालन कर सकता है । 'ॐ ह्रीं रक्तकम्बले महादेवि मृतकमुत्थापय प्रतिमां चालय पर्वतान्कम्पय कम्पय नीलय नीलय विहस विहस हूं हूं' (११) यह मन्त्र है ।

अथ विद्युज्जिह्वासाधनम्

अष्टोत्तरशतं जप्त्वा यत्किञ्चित्स्वादु भोजनम् ।
तद्बलिर्दीयते तस्यै वटाधोमासमेकतः ॥ २६ ॥
ततो देवी समागत्य हस्तादृगृह्णाति भोजनम् ।
तत्रैव सावरन्दत्ते नित्यं सांनिध्यकारकम् ॥ २७ ॥
अतीतानागतं कर्मस्वस्थास्वस्थं ब्रवीतिसा ।
प्रतिमाः पर्वतान्सर्वाश्चालयत्येव तत्क्षणात् ॥ २८ ॥
ॐकार[1]मुखेविद्युज्जिह्वे । ॐ हूं चेटके जय जय स्वाहा (१२) मन्त्र यह है ।

---

१ ॐ सुमुखेविद्युज्जिह्वे ॐ हूं चेटकेश चेटकेश स्वाहा इति वा पाठः ।

एक सौ आठ बार जप कर जो कुछ अपने निमित्त स्वादु भोजन है उसकी बलि वट के नीचे उसके निमित्त दे। ऐसा एक मास पर्यन्त करने से देवी आकर अपने हाथ से उसका भोजन ग्रहण करती है और नित्य समीप रहती है। अतीत अनागत कर्म को स्वस्थ होकर वह कह देती है जिससे साधक प्रतिमा और सब पर्वतों को भी चलायमान कर सकता है। 'ॐ कारमुखेविद्युज्जिह्वे। ॐ ह्रूं चेटके जय जय स्वाहा' (१२) यह मन्त्र है।

कर्णपिशाचिनीसाधनम्

पूर्वमेवायुतं जप्त्वा कृष्णकन्याभिमन्त्रितः।
हस्तपाद प्रलेपेन सुप्तेवक्ति शुभाशुभम्।
त्रैलोक्येयाद्दशी वार्ता तादृशं कथयेत्फलम् ॥ २९ ॥

कर्णपिशाचिनी साधन : निम्नलिखित मन्त्र का दस सहस्र जप करके कृष्णकन्या से अभिमन्त्रित कर हाथ-पाँव को लेप करके सोने से शुभ अशुभ त्रिलोक में जो वार्ता है उसका फलाफल कर्णपिशाचिनी कहती है।

ॐ ह्रीं सः नमो भगवति कर्णपिशाचिनि चण्डवेगिनि वद वद स्वाहा (१३)

अथवा ॐ क्रीं सनामशक्ति भगवति कर्णपिशाचिनि चण्ड रोषिणि वद वद स्वाहा।

ये दोनों मन्त्र हैं।

स्वप्नावतीसाधनम्

मृद्गोमयैर्लिपेद्भूमि कुशांस्तत्र समास्तरेत्।
पञ्चोपचार नैवेद्यैर्देवदेवीं प्रपूजयेत् ॥ ३० ॥
अक्षसूत्रं करे धृत्वा पूर्वमेवायुतं जपेत्।
सूर्यकोटि समां ध्यात्वा रात्रौ पाणितले जपेत्।
अर्द्धरात्रे गते देवी वार्त्तां वक्ति शुभाशुभाम् ॥ ३१ ॥
ॐ ह्रीं आगच्छ आगच्छ चामुण्डे श्रीं स्वाहा (१४)

मिट्टी और गोबर से पृथ्वी को लीपकर बहुकुश बिछावे और पञ्चोपचार नैवेद्य से देव देवी का पूजन करे। अक्षसूत्र (रुद्राक्षमाला) हाथ में रखकर पहले दस सहस्र जपे। कोटिसूर्य के समान प्रकाशमान का ध्यान करे। आधी रात के समय देवी स्वप्न में शुभ-अशुभ कहती है। मन्त्र यह है : 'ॐ ह्रीं आगच्छ आगच्छ चामुण्डे श्रीं स्वाहा (१४)

रोचनैः कुंकुमैः क्षीरैः पद्मं चाष्टदलं लिखेत् ।
नीरन्ध्रे भूर्जपत्रे च मायाबीजं दले दले ॥ ३२ ॥
लिखित्वा धारयेन्मूर्ध्नि इमं मन्त्रं ततो जपेत् ।
पूर्यमेवायुतं जप्त्वा चैवं [1]कुर्यात्प्रयत्नतः ।
अतीतानागतं सर्वं स्वप्ने वदति देवता ॥ ३३ ॥
ॐ ह्रीं चिंचि पिशाचिनि स्वाहा (१५)

गोरोचना, कुमकुम और दूध से आठ दल का कमल लिखे । छिद्ररहित भोजपत्र पर प्रत्येक दल पर मायाबीज लिखकर शिरपर धारण कर १०,००० मन्त्र जपे । सात दिन पर्यन्त यत्न से इस कार्य को करने से स्वप्न में देवी भूत, भविष्य, वर्तमान तीनों काल की बात कहती है । 'ॐ ह्री चिंचि पिशाचिनि स्वाहा (१५)

अलाबु मूलिकां पुष्ये तथा सर्पाक्षि मूलिकाम् ।
ग्राह्याभिमन्त्रिता यत्नाद्रक्तसूत्रेण वेष्टयेत् ।
मूर्ध्नि बद्धा तथा सुप्ते वदत्येव शुभाशुभम् ॥ ३४ ॥

पुष्यनक्षत्र में कडवी तूम्बी का मूल तथा सर्पाक्षी का मूल ग्रहणकर लालसूत्र से वेष्टन करे । इसे शिरपर रखने से सोते में देवता सम्पूर्ण शुभाशुभ कथन करता है ।

ॐ नमो भगवते रुद्राय कर्णपिशाचाय स्वाहा (१६)

यह कर्णपिशाच मन्त्र है ।

विचित्रासाधनम्

लक्षमेकञ्जपेन्मन्त्रं वटवृक्षतले शुचिः ।
बन्धूककुसुमैः पश्चान्मध्वाज्यैः क्षीरमिश्रितैः ॥ ३५ ॥
दत्ते धूपे दशांशेन जुहुयात्पूर्णयान्वितम् ।
ततः सिद्धा भवेद्देवी विचित्रा वांछितप्रदा ॥ ३६ ॥
ॐ विचित्रे विचित्ररूपे सिद्धि कुरु कुरु स्वाहा (१७)
जपहोमयोरयं मन्त्रः ।

पवित्र होकर वट वृक्ष के नीचे एक लक्ष मन्त्र जपे । फिर बन्धूक (दुपहरिया) के फूल, मधु, घृत, दूध मिलाकर कुण्ड में दशांश धूप दे, हवन करे तब विचित्रादेवी सिद्ध होकर विचित्र जय प्रदान करती है । 'ॐ विचित्रे विचित्ररूपे सिद्धि कुरु कुरु स्वाहा' यह जप और होम का मन्त्र है (१७)

---

१ सप्ताहं वा इति पाठः ।

अथ हंसीसाधनम्

प्रविश्य नगरस्यां तं लक्षसंख्यं जपेच्छुचिः।
पद्मपत्रैः कृतो होमो घृतोपेतैर्दशांशतः॥ ३७॥
प्रयच्छत्यं जनं हंसीयेन पश्यति भूनिधिम्।
सुखेन तं च गृह्णाति न विघ्नैः परिभूयते॥ ३८॥
ॐ हंसि हंसिने ह्रीं क्लीं स्वाहा (१८)
ॐ नमो हंसिनि हंसगते मां स्वाहा इति वा।

नगर के अन्त में जाकर एक लक्ष मन्त्र जपे तथा कमलपत्रों से युक्त घृत से दशांश हवन करे। ऐसा करने से हंसी अञ्जन देती है जिससे पृथ्वी का खजाना दिखाई पड़ता है और उसे सुखपूर्वक ग्रहण कर साधक ऐश्वर्य से पूर्ण हो जाता है। विघ्न नहीं होते। 'ॐ हंसिहंसिने ह्रीं क्लीं स्वाहा' अथवा 'ॐनमो हंसिनि हंसगते मां स्वाहा' यह मन्त्र पढ़े (१८)

मदनासाधनम्

लक्षसंख्यं जपेन्मन्त्रं राजद्वारे शुचिः स्थिरः।
सक्षीरैर्मालती पुष्पैर्घृतहोमो दशांशतः॥ ३९॥
मदना यक्षिणी सिद्धि गुटिकां सम्प्रयच्छति।
तया मुखस्थयाट्टश्यश्चिरस्थायी भवेन्नरः॥ ४०॥
ॐ ऐं मदने मदन विद्रावणे अनङ्ग सङ्गमं देहि देहि क्रीं क्रीं स्वाहा (१९)

पवित्र हो स्थिरता से राजद्वार में एक लक्ष मन्त्र जपे। दूध, मालती के फूल और घृत से दशांश हवन करे तो मदनायक्षिणी सिद्ध होकर गुटिका प्रदान करती है। उसको मुख में रखने से मनुष्य अदृश्य और चिरस्थायी होता है '[1]ॐ ऐं मदने मदनविद्रावणे अनंगसंगमं देहि देहि क्रीं क्रीं स्वाहा' (१९) यह मन्त्र है।

कालकर्णीसाधनम्

लक्ष संख्यं जपेन्मन्त्रं पलाश तरुजेन्धनैः।
मधुनाज्यैः कृते होमे कालकर्णी प्रसीदति॥ ४१॥
सैन्यधारास्त्रबन्धं च गतिस्तम्भकरी भवेत्।
सततं तां स्मरेन्मन्त्री विविधैश्वर्यकारिणीम्॥ ४२॥
ॐ ह्रीं क्लीं कालकर्णिके ठः ठः स्वाहा (२०)

---

१ ॐ ऐं मदने मदनविडम्बिनि आलिंगय आलिंगय संगमंदेहि संगमंदेहि स्वाहा वा पाठः।

निम्नलिखित मन्त्र को ढाक के पेड़ के नीचे बैठकर एक लक्ष जपने और शहद से होम करने से कालकर्णी प्रसन्न हो जाती है। प्रसन्न होकर सैन्यधारा, अस्त्रबन्ध और गति को स्तम्भन करती है। मन्त्र जानने वाला अनेक ऐश्वर्य करने वाली भगवती को निरन्तर स्मरण करे। 'ॐ ह्रीं क्लीं कालकर्णिके ठः ठः स्वाहा' यह जप का मन्त्र है (२०)।

लक्ष्मीयक्षिणीसाधनम्

स्वगृहे संस्थितो रक्तैः करवीर प्रसूनकैः।
लक्षमावर्त्तयेन्मन्त्रं होमं कुर्याद्दशांशतः ॥ ४३ ॥
होमेकृते भवेत्सिद्धिर्लक्ष्मी नाम्नी च यक्षिणी।
रसं रसायनं दिव्यं विधानं च प्रयच्छति ॥ ४४ ॥
ॐ ऐं लक्ष्मीं श्रीं कमलधारिणीं कलहंसी स्वाहा (२१)

अपने घर में स्थित लाल कनेर के फूलों से अर्चन करे और लक्ष मन्त्र जप करके उसका दशांश हवन करे। हवन करने से लक्ष्मी नामक यक्षिणी सिद्ध हो जाती है और साधक को दिव्य रसायन और विधान प्रदान करती है। 'ॐ ऐं लक्ष्मीं श्रीं कमलधारिणीं कलहंसी स्वाहा' यह मन्त्र है (२१)।

शोभनासाधनम्

रक्त माल्याम्बरो मन्त्रं चतुर्दशी दिने जपेत्।
ततः सिद्धाभवेद्देवी शोभना भोगदायिनी ॥ ४५ ॥
ॐ अशोक पल्लवाकार करतले शोभनीं श्रीं क्षः स्वाहा (२२)

लाल माला और वस्त्र धारण कर यह मन्त्र चतुर्दशी के दिन जपने से शोभना भोगदायिनी देवी प्रसन्न हो जाती है। 'ॐ अशोकपल्लवाकारां करतले शोभनीं श्रीं क्षः स्वाहा' (२२)।

नटीसाधनम्

पुण्याशोकतलं गत्वा चन्दनेन सुमण्डलम्।
कृत्वा देवीं समभ्यर्च्य धूपं दत्त्वा सहस्रकम् ॥ ४६ ॥
मन्त्रमावर्तयेन्मासं नक्तभोजी नरस्तदा।
रात्रौ पूजां शुभां कृत्वा जपेन्मन्त्रं निशाद्धके ॥ ४७ ॥
नटीदेवी समागत्य निधानं रस मञ्जनम्।
ददाति मन्त्रेण मन्त्रं दिव्ययोगं च निश्चितम् ॥ ४८ ॥
ॐ ह्रीं क्रीं नटि महानटि स्वरूपवती स्वाहा (२३)

पवित्र हो अशोकवृक्ष के नीचे जाकर चन्दन से सुन्दर मण्डलकर देवी की पूजा करे और धूप दे, सहस्र मन्त्र सदा जपे, रात्रि के समय भोजन करे, रात्रि में अच्छी प्रकार पूजाकर अर्धरात्रि के समय फिर मन्त्र जपे। तब नटी देवी प्राप्त होकर निधियुक्त रस-अञ्जन मन्त्री को देती है और दिव्य योग तथा मन्त्र भी देती है, यह निश्चय है। 'ॐ ह्रीं क्रीं नटि महानटि स्वरूपवती स्वाहा' यह मन्त्र है (२३)

पद्मिनीसाधनम्

स्रक्सुगन्धि गृहस्थाने चन्दनेन सुमण्डलम्।
कृत्वा हस्त प्रमाणेन पूजयेत्तत्र पद्मिनीम् ॥ ४९ ॥
धूपं सगुग्गुलुं दत्त्वा जपेन्मन्त्र सहस्रकम्।
मासमेकन्ततः पूजां कृत्वा रात्रौ पुनर्जपेत् ॥ ५० ॥
अर्द्धरात्रे गते देवी समागत्य प्रयच्छति।
निधानं दिव्य'योगं च तस्मान्मन्त्री सुखी भवेत् ॥ ५१ ॥
ॐ ह्रीं (वाक्रीं) पद्मिनी स्वाहा (२४)

माला, सुगन्ध द्रव्य, और चन्दन से अपने स्थान में सुन्दर मण्डल बनावे। एक हाथ के प्रमाण में मण्डल बनाकर उसमें पद्मिनी का पूजन करे। गुग्गुलु सहित धूप देकर एक सहस्र मन्त्र जपे। इस प्रकार एक महीने पूजाकर रात्रि में फिर जप करे। आधीरात बीतने पर देवी आकर निधि और दिव्य योग देती है जिससे मन्त्र जपने वाला सुखी होता है। मन्त्र यह है: 'ॐ ह्रीं पद्मिनी स्वाहा' (२४)

इति श्रीनित्यनाथविरचिते कामरत्ने यक्षिणीसाधनं
नामपञ्चदशोपदेशः ॥ १५ ॥

अथ वीर्यस्तम्भन वाजीकरणादि रसस्य प्रयोगसिद्धये रसादिशोधनम्

पलाद्यूनं न कर्तव्यं रससंस्कारमुत्तमम्।
अघोरेणैव मन्त्रेण रसराजस्य पूजनम् ॥ १ ॥
ॐ अघोरेभ्योथघोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः।
सर्वतः सर्वसर्वेभ्यो नमस्तेस्तु रुद्ररूपेभ्यः ॥ २ ॥

---

१ 'वस्त्रं च' इति वा पाठः।

एक पल से न्यून पारे का संस्कार न करे और अघोर मन्त्र से ही रसराज का पूजन करे। उपर दिया हुआ 'ॐ अघोरेत्यादि' मन्त्र है।

कुमार्याश्च निशाचूर्णैर्दिनं सूतं विमर्दयेत्।
पातयेत्पातनायन्त्रे सम्यक् शुद्धो भवेद्रसः ॥ ३ ॥

घीकुवार और हलदी के चूर्ण से एक दिन पारे को खरल करे। फिर पातनायन्त्र से उसको पातन करने से भली प्रकार से शुद्ध होता है।

अथवा हिंगुलात्सूतं ग्राह्येत्तन्निगद्यते।
पारिभद्ररसैः पेष्यं हिंगुलं यामम्मात्रकम् ॥ ४ ॥
जम्बीराणां द्रवैर्वाथ पात्यं पातालयन्त्रके।
तं सूतं योजयेद्योगे सप्तकंचुक वर्जितम् ॥ ५ ॥

अथवा हिंगुल (सिंगरफ) में से पारा निकाले। उसके निकालने की विधि कहते हैं : निम्ब के रस में एक पहर हिंगुल की डली को खरल करे। अथवा जम्बीरी नीबू के रस में खरल कर पाताल यन्त्र से पातन करके सात कैंचली से वर्जित हुए उस पारे को कार्य में प्रयुक्त करे।

सूतस्य दशमांशन्तु गन्धं दत्त्वा विमर्दयेत्।
जम्बीरोत्थ द्रवैर्यामं पात्यं पातालयन्त्रके ॥ ६ ॥

पारे से दशमांश गन्धक मिलाकर खरल करे तथा जम्बीरी के रस में एक पहर मर्दन कर पाताल यन्त्र में पातन करे।

पुनर्मर्द्यं पुनः पात्यं सप्तवारं विशुद्धये।
इत्येवं शुद्धयः ख्यातास्तासामेकां तु कारयेत् ॥ ७ ॥

इति रसशोधनम्।

इस प्रकार फिर मर्दन कर फिर पातन करे। सात बार विशुद्धि के निमित्त यह कृत्य करे—इस प्रकार पारे की शुद्धि कही है। इनमें से किसी एक विधि का प्रयोग करे।

इति रसशोधन।

अथ पातालयन्त्रम्

उपर्य्यापोह्यधो वह्निर्मध्ये च रसपिष्टिका।
क्रमादग्निं विदध्यात्तत्पातनायन्त्रमुच्यते ॥ ८ ॥

इति पातालयन्त्रम्।

ऊपर जल, नीचे अग्नि और बीच में रस की पोटली रक्खे। क्रमसे अग्नि दे, पातन करे फिर चित्र १४९ में दिये पाताल यन्त्र का प्रयोग करे।

इति पातालयन्त्र।

अथ रसमारणम्

मुक्तं सर्वस्य सूतस्य तप्तखल्वे विमर्दनम् ।
अजाशकृत्तुषाग्नि तु भूगर्तेत्रितयं क्षिपेत् ॥ ९ ॥
तस्योपरि स्थितं खल्वं तप्तखल्वमिदं भवेत् ।
खल्वं लोहमयं शस्तं पाषाणोष्णमथापि वा ॥ १० ॥
अजीर्णं चाप्यबीजं वाय: सूतं घातयेन्नरः ।
ब्रह्महासु दुराचारो मन्त्रद्रोही महेश्वरि ॥ ११ ॥

सब प्रकार पारे को तप्त खल्व में मर्दन करना श्रेष्ठ कहा है । बकरी की मसेंगन तुषाग्नि से तीन दिन पृथ्वी के गर्त में पाचित करे और उसके ऊपर लोहे का खरल रक्खे । यह तप्त खल्व कहलाता है । अच्छा खरल लोहे का होता है, वह न हो तो पाषाण का भी उत्तम है । बिना जीर्ण किये अर्थात् अबीज और अजीर्ण पारे का जो मनुष्य जारण करता है, हे महेश्वरि ! वह ब्रह्महत्या करने वाला, दुराचारी और महाद्रोही है ।

रामठं पञ्चलवणं तथा क्षारचतुष्टयम् ।
त्रिकटुं शृङ्गवेरं च मातुलुङ्गं रसाप्लुतम् ॥ १२ ॥
पिण्डमध्ये रसं दत्त्वा स्वेदयेत्सप्तवासरान् ।
सारनाले तु मृद्भाण्डेग्रासार्थी जायते ध्रुवम् ॥ १३ ॥
एतदेवरसं यत्नाज्जम्बीर द्रव संयुतम् ।
दिनैकं धारयेद्धर्मे मृत्पात्रे वा मृतो भवेत् ॥ १४ ॥
ग्रासं तत्रैव दातव्यं स्वर्णशुद्धिः शनैः शनैः ।
चतुष्षष्टय्यादि तुल्यांश देयं जीर्णञ्च चालयेत् ॥ १५ ॥
चतुष्षष्ठ्यंशकं चादौ द्वात्रिंशत्तदनन्तरम् ।
पुनर्विंशतिमंग्राह्यं द्विरष्टं द्वादशं क्रमात् ॥ १६ ॥
अष्टमांशं चतुर्थं वाप्यर्द्धं चैव समांशकम् ।
प्रतिग्रासे तप्तखल्वे दिनमम्लेन मर्दयेत् ॥ १७ ॥
तंक्षिपेच्चारणायन्त्रे जम्बीरनीर संयुतम् ।
तद्यन्त्रं धारयेद्धर्मे दिनं स्याज्जारितोरसः ॥ १८ ॥

हींग और पाँचों नमक, चारों खार, सोंठ, मिरच, पीपल, अदरख को मातुलुङ्ग (बीजपूर बिजौरे) के रस से पीस इसको एक अंगुल के गाढ़े स्वच्छ कपड़े में लेप कर उसके मध्य में पारे को रखकर सात दिन स्वेदन (औटावे) संस्कार करे और फिर मिट्टी के बरतन में रख कांजी के साथ ग्रास स्वीकार

करे। इस प्रकार से यत्नपूर्वक उस रसको बम्बीरी के रस में खरल कर एक दिन धूप में सुखाकर फिर मिट्टी के बरतन में सुवर्ण के शुद्ध ग्रास शनैः शनैः देना चाहिये और चौंसठवाँ भाग शुद्ध सुवर्ण का दे अर्थात् पहले चौंसठ मिलाकर पीछे बत्तीस मिलाकर, फिर सोलह, फिर बारह क्रम से ग्रास देकर खरल करे। फिर आठवाँ अंश, चौथा अंश, आधा अथवा बराबर दे। प्रति ग्रास को तप्त खरल में अम्ल वर्ग के साथ एक दिन खरल करे। जम्बीरी के रस के सहित उसको चारणा यन्त्र में डाले और उसको धूप में रक्खे तो एक दिन में रस बनता है।

तं छागक्षीर गोमूत्र स्नुक्क्षीराम्लैः प्रलेपिते।
दृढवस्त्रे बहिर्बद्ध्वा मृद्घटे स्वेदयेद्बुधः॥ १९॥
काञ्जिकाक्षारमूत्रैर्वा दोलायन्त्रेत्वहर्निशम्।
तमुद्धृतं रसं देविखल्वे संशोधयेत्क्षणात्॥ २०॥
संमर्द्य पूर्ववत्खल्वे यन्त्रे लिप्तपुटे पुनः।
क्रमेणानेन देवेशि त्रिभिर्ग्रासैः प्रजीर्यते॥ २१॥

फिर उसको छाग, गोमूत्र, थूहर के दूध और अम्ल वर्ग से लिप्त करके वस्त्र में दृढ़ बाँधकर मृत्तिका के घट में स्वेदन करे। कांजी, क्षार और गोमूत्र के साथ दोला यन्त्र में एक दिनरात स्थित करे फिर उसमें से रात को निकाल कर खरल में शुद्ध करे फिर पूर्ववत् खरल करे और वस्त्र आदि में लपेट कर पुट दे। हे देवि! इस क्रम से तीन ग्रासों से वह जीर्ण हो जाता है।

यावत्तोन यदा तस्मात्तावत्तोन विमर्दयेत्।
प्रतिग्रासे तप्तखल्वे यथाशक्त्या चचारयेत्॥ २२॥

जब तक ठीक न हो बराबर मर्दन करता रहे और प्रतिग्रास में तप्त खरल में यथाशक्ति जलावे।

तं जीर्णं मारयेत्सूतं मारणं कथ्यते द्रवैः।
तं हि सर्वरसोपेतं पिष्ट्वा खल्वे विमर्दयेत्॥ २३॥
सूतं गन्धकसंयुक्तं दिनान्ते तन्निरोधयेत्।
पुटयेद्भूधरेयन्त्रे दिनान्ते तत्समुद्धरेत्॥ २४॥

उस जीर्ण हुए पारे को मारे। अब द्रव द्वारा उसका मारण कहते हैं: उसको रसों के साथ खरल में डालकर घोटे, पारे और गन्धक की कजली कर पुट देकर भूधर यन्त्र में पचाने से पारा मर जायगा।

कृष्णधत्तूरतैलेन सूतो मर्द्यो द्वियामकम्।
दिनैकं तत्पचेद्यन्त्रे कच्छाख्येन संशयः॥ २५॥

मृतः सूतोभवेत्सद्यः सर्वरोगेषु योजयेत् ।
रसगन्धं समं मर्द्यं दिनं निर्गुण्डिका द्रवैः ॥ २६ ॥

अथवा एक पैसे भर सिद्ध पारे में काले धतूरे का रस डालकर एक दिन घोटे । एक दिन नियामक औषधि (बन्दाल का रस, आक का दूध, कबूतर की वीट, गीली हंसपदी का रस, इन्द्रायन के फल का रस) इनमें घोटे; पीछे गोला बनाकर कच्छप यन्त्र में रख आँच दे तो निःसन्देह पारे का मारण होगा । इससे सबीज निर्बीज पारा मरता है । इसे सब रोगों में देना चाहिये ।

चक्रमूषान्वितेध्मातैर्भस्मसूतं भवेन्मलम् ।
टङ्कणं मधुलाक्षा च [1]कुर्णा गुञ्जायुतोरसः ॥ २७ ॥
मर्दयेद्भृङ्गजद्रावैर्दिनैकं चान्धयेत्पुनः ।
ध्मातो भस्मत्वमाप्नोति शुद्धः स्फटिक सन्निभः ॥ २८ ॥

पारे और गन्धक को एक दिन निर्गुण्डी के रस में मर्दन कर मूषा में रखकर फूकने से पारे का भस्म हो जायगा । सुहागा, शहद, लाख, पीपल, चौंटली और भाँगरा इनके रस में पारे को खरल कर एक दिन अंधरा करे फिर फूक देने से शुद्ध स्फटिक के समान भस्म होता है ।

द्विपलं सूतराजस्य पलैकं गन्धकस्य च ।
मर्दयेन्मार्कवद्रावैर्दिनमेकं निरन्तरम् ॥ २९ ॥
रुद्ध्वाद्भूधरेयन्त्रे दिनैकं मारयेत्पुटात् ।
इत्येवं जारितं सूते मारणं परिकीर्तितम् ॥ ३० ॥

दो पल पारा, दो पल गन्धक इनको निरन्तर एक दिन भाँगरे के रस में मर्दन करे और भूधर यन्त्र में उसको एक दिन पुटित कर मारे । इस प्रकार जारित पारे का मारण कहा है ।

अथवा ग्रासयोग्यं तु निहन्यात्सान्वितं रसम् ।
सप्तकं घनसत्त्वंच मर्दयेत्कगुणी द्रवैः ॥ ३१ ॥
दिनैकं गोलकं तच्चशोषयेदातपे खरे ।
गर्भयन्त्रगतं पाच्यात्रिदिनं हि तुषाग्निना ॥ ३२ ॥
करीषाग्नौ दिवारात्रौ पचेत्तद्भस्म तां नयेत् ।

अथवा ग्रास योग्य बलिष्ठ रस को (पारे को) मालकांगनी के रस से निरन्तर मर्दन करे । इस प्रकार एक दिन मर्दन कर उसका गोला बनाकर तीक्ष्ण धूप में सुखावे । फिर गर्भ यन्त्र में रखकर तीन दिन तुष अग्नि से

---

१ मधुलाक्षा वा ऊर्णेति पाठे ऊर्णा (ऊन) ।

पचावे, एक दिन रात करीष (उपले सूखा गोबर) की अग्नि में पचावे तो पारे की भस्म हो जायगी।

सूतं स्वर्णं व्योमशङ्खं समं रम्भा द्रवैर्दिनम् ॥ ३३ ॥
मर्दयेद्बीजसंयुक्तंचापि चारणयन्त्रके।
सर्वकैर्मूलिका द्रावैर्दिनमेकन्तु मर्दयेत् ॥ ३४ ॥
गर्भयन्त्रगतं पाच्यं म्रियते पूर्ववद्रसः।

पारा, सुवर्ण, अभ्रक, केले का रस और बीज इनके साथ मर्दन करे तथा चारण यन्त्र में पारे को मूलिका रसों के साथ एक दिन मर्दन करे (१२५ नम्बर का चित्र देखो) और गर्भ यन्त्र में रखकर पारे को पचावे तो वह पूर्ववत् मर जाता है।

ब्रह्मदण्डी मेघनादो चित्रकं कटुतुम्बिका ॥ ३५ ॥
वज्रवल्ली बलाकन्या त्रिकुटार्कस्नुही पयः।
कन्दोरम्भा च निर्गुण्डी लज्जा जाती जयन्तिका ॥ ३६ ॥
विष्णुक्रान्ता हस्तिशुण्डी दद्रुघ्नो भृङ्गराट् पटुः।
गुडूचीलाङ्गली नीरकणाकाली महोरगा ॥ ३७ ॥
काकमाची च दन्ती च एतापारद मारकाः।
व्यस्ताः समस्ता वा सर्वादेयाह्यष्टदशाधिकाः।
उक्तस्थाने प्रयोक्तव्या रसराजस्य सिद्धये ॥ ३८ ॥

ब्रह्मदण्डी, चौलाई, चीता, कडवी तूम्बी, वज्रवल्ली, खरैंटी, घीकुवार, सोंठ, मिर्च, पीपल, आक, थूहर का दूध, रम्भाकन्द, निर्गुण्डी, लाजा (लज्जावन्ती), जाती, जयन्ती, विष्णुक्रान्ता, हाथीशुण्डी, पमाड, भाँगरा, पित्तपापड़ा, गिलोय, कलिहारी, सुगन्धवाला, नीली, कटसरैया, पीपल, सर्पाक्षी या तगर, काकमाची और दन्ती यह सब समस्त या पृथक् पृथक् पारे को मारने वाली अठारह मूलिका हैं। रसराज की सिद्धि के निमित्त निजकथित स्थान में प्रयोग करना चाहिये।

अथ गर्भयन्त्रप्रकारः

चतुरंगुल दीर्घा तु मृण्मयी दृढमूषिका।
अंगुलामध्यविस्तारे वर्तुलं कारयेन्मुखम् ॥ ३९ ॥
लोनस्य विंशतिर्भागा एकोभागस्तु गुग्गुलोः।
सुश्लक्ष्णं पेषयित्वा तु तोयं दत्त्वा पुनः पुनः ॥ ४० ॥
मुखालेपं ततः कुर्याद्रसं तत्र विनिक्षिपेत्।
अन्धयित्वा पुटं देयं गर्भयन्त्रमिदं भवेत् ॥ ४१ ॥

गर्भ यन्त्र प्रकार : चार अंगुल दीर्घ और तीन अंगुल चौड़ी मिट्टी की दृढ़ मूष बनाकर उसका गोल मुख करे। नमक बीस भाग, गूगल एक भाग महीन पीसकर मूषापर दृढ़ लेप करे। लवणादि मिट्टी में प्रथम पारे की पिठ्ठी रक्खे पीछे मुख बन्दकर लेप करे फिर जमीन में गढा खोदकर तुषाग्नि से मन्द-मन्द स्वेदन करे तो एक दिन रात्रि या तीन रात्रि में पारा भस्म होता है। यह गर्भ यन्त्र का विधान है।

इति रसमारणम्।

अथ हिंगुलशुद्धिः

मेषी क्षीराम्लवर्गाभ्यां दर्दं च घर्म भावितम्।
सप्तवारं प्रयत्नेन शुद्धिमायाति निश्चितम् ॥ ४२ ॥

हिंगुल (सिंगरफ) को भेड़ के दूध और अम्ल वर्ग की घर्म में सात भावना देने से हिंगुल शुद्ध होता है।

इति हिंगुलशुद्धिः।

अथ गन्धकशुद्धिः

शुक्लपक्षसमच्छायो नवनीत समप्रभः।
मसृणः कठिनः स्निग्धः श्रेष्ठो गन्धक उच्यते ॥ ४३ ॥

शुक्लपक्ष के समान छायावान, मक्खन के समान कान्तिमान एक-सा कठिन और चिकना गन्धक श्रेष्ठ होता है।

साज्यं भाण्डे पयःक्षिप्त्वा मुखं वस्त्रेण वेष्टयेत्।
तत्पूर्वं चूर्णितं गन्धं क्षिप्त्वा तस्योपरि न्यसेत् ॥ ४४ ॥
कपालमेकमुत्तानं गन्धकस्याधियोगितत्।
दुग्धभाण्डंन्यस्य भूमौ देयमूर्ध्वंपुटं लघु ॥ ४५ ॥
ततः क्षीरेद्रुतं गन्धं शुद्धं योगेषु योजयेत्।
गन्धं घृते विपक्तव्यं यावत्तैलनिभं भवेत् ॥ ४६ ॥
वस्त्रेणान्तरितं कृत्वा चालयेत्त्रिफलाम्भसि।
एवं गन्धक शुद्धिः स्यात्ततो योगेषु योजयेत् ॥ ४७ ॥

घी डालकर और दूध डालकर उस हाँडी का मुख वस्त्र से ढक दे। आमलासार गन्धक १६ तोले पीसकर घी में गलावे। गलने पर वस्त्रपर डाल दे। गन्धक उस वस्त्र से टपक कर दूध में जम जायगा। तब उस दूध से निकली हुई शुद्ध गन्धक को कार्य में प्रयोग करे। गन्धक को घृत में तब तक पकावे

जब तक कि वह तेल के समान न हो जाय। उसे फिर वस्त्र में छानकर त्रिफले के जल में डाल दे। इस प्रकार से गन्धक को शुद्ध कर योगों में लगाना उचित है।

इति गन्धकशुद्धिः।

अथ अभ्रकशुद्धिः

कृष्णः पीतः श्वेतरक्तो योज्यो योगरसायने।
पिनाकं दर्दुरं नागं वज्रं चेति चतुर्विधम् ॥ ४८ ॥

काला, पीला, श्वेत, लाल अभ्रक रसायन के योग्य है। पिनाक, दर्दुर, नाग और वज्र ये चार भेद काले अभ्रक के हैं।

पिनाकाद्यास्त्रयोवर्ज्या वज्रं यत्नात्समाहरेत्।
मुञ्चत्यग्नौ च निक्षिप्त पिनाको दलसंचयम् ॥ ४९ ॥
अज्ञानाद्भक्षणात्तस्य महादुःखप्रदो भवेत्।

इनमें पिनाकादि तीन का त्याग करके वज्र अभ्रक को यत्न से ग्रहण करे। पिनाक अभ्रक अग्नि में डालने से दलसंचय अर्थात् पत्तों को छोड़ता है। इसको अज्ञान से खाने से महादुखदायक कुष्ठ होता है।

दुर्दुरोऽग्नौ विनिक्षिप्तः कुरुते दर्दुर ध्वनिम् ॥ ५० ॥
तच्च भक्षणमात्रेण नानारोगं प्रयच्छति।

दर्दुर अभ्रक अग्नि में डालने से मेढक के समान ध्वनि करता है। उसके खाने से अनेक रोग होते हैं।

नागश्चाग्निस्थितः सद्यः फूत्कारं च विमुञ्चति ॥ ५१ ॥
स च देहगतो नित्यं व्याधिं कुर्याद्भगन्दरम्।

नाग अभ्रक अग्नि में डालने से सर्पवत् फूत्कार करता है। इसके खाने से भगन्दर रोग होता है।

वज्राभ्रकं तु वह्नौ च न किञ्चिद्विक्रियां व्रजेत् ॥ ५२ ॥
तस्माद्वज्राभ्रकं योज्यं वार्धक्य मृत्युजित्।
धमेद्वज्राभ्रकं वह्नौ यावदग्निनिभं भवेत् ॥ ५३ ॥
गोक्षीरे च ततः सेच्यं गोक्षीरे च पुनः पुनः।
भिन्नपात्रे च तत्कृत्वा मेघनाद द्रवाम्बुना ॥ ५४ ॥
भावयेदष्टयामं च जायते दोषवर्जितम्।

वज्राभ्रक अग्नि में रखने से कुछ भी विकार को प्राप्त नहीं होता। इस कारण व्याधि, बुढापा, मृत्यु को दूर करने वाला वज्राभ्रक प्रयुक्त करे। उसको अग्नि में फूके जब वह अग्नि के समान हो जाय तब उसपर गाय का

दूध बारम्बार छिड़के अर्थात् उसमें बुझावे फिर उसे अलग रख चौलाई के रस में आठ पहर भावना दे तो दोषवर्जित होता है।

अथवाभ्रस्य भागौ द्वौ मुस्ता चैकं जलैः सह ॥ ५५ ॥
त्रिदिनं स्थापयेत्पात्रे ततः सूक्ष्मं प्रपेषयेत् ।
एतदभ्रक चूर्णन्तु निस्तुषं व्रीहि संयुतम् ॥ ५६ ॥
वस्त्रेण बद्ध्वा सारनाले भाण्डमध्ये विमर्दयेत् ।
हस्ताभ्यां स्वयमायाति यावदम्लं तु रेणुताम् ॥ ५७ ॥
अदोषाभ्रगतं शुद्धं शुष्कं धान्याभ्रकं भवेत् ।

अथवा अभ्रक दो भाग, मोथे का और जल का १-१ भाग तीन दिन पात्र में स्थापन कर फिर सूक्ष्म पीस ले। वह अभ्रक का चूर्ण भूसी रहित जौ के सहित वस्त्र में बाँध कांजी के साथ पात्र में मर्दन करे। हाथ से तब तक मले जब तक वह सर्वथा चूर्ण न हो जाय तब वह दोषरहित शुभ्र अभ्रक होता है।

धान्याभ्रकं रविक्षीरे रविमूलद्रवैश्च वा ॥ ५८ ॥
दिनमर्धं पुटे पच्यात्सप्तधैनं मृतं भवेत् ।

धान्य अभ्रक को आक के दूध में या आक की जड़ के रस में आधे दिन पुट देकर पाचित करे। ऐसा सात बार करने से अभ्रक मरता है।

धान्याभ्रकस्य भागैकं द्वौभागौ टङ्कणस्य तु ॥ ५९ ॥
पिष्ट्वा तदन्धमूषायां रुद्ध्वा तीव्राग्निना धमेत् ।
स्वभावशीतलं चूर्णं सर्वयोगेषु योजयेत् ॥ ६० ॥

धान्याभ्रक का एक भाग, सुहागा दो भाग दोनों को पीस अन्धमूषा में रख धान्याभ्रक बन्दकर तीव्र अग्नि दे। जब स्वांग शीतल हो जाय तब निकाल कर चूर्ण कर सब योगों में दे।

इति अभ्रकशुद्धिः।

अथामृतीकरणम्

सर्वेषां धातितानान्तुह्यमृतीकरणं शृणु ।
त्रिफलोत्थ कषायस्य पलान्यादाय षोडश ॥ ६१ ॥
गोघृतस्य पलान्यष्टौ मृताभ्रस्य पलान्दश ।
एकीकृत्वा लोहपात्रे पाचयेन्मृदु वह्निना ॥ ६२ ॥
द्रवैर्जीर्णं समादाय सर्वयोगेषु योजयेत् ॥ ६३ ॥

अब सब मारी धातु का अमृती करण सुनो : त्रिफले का काढा सोलह

पल, गाय का घी आठ पल, अभ्रक दश पल यह सब एकत्र कर मृदु अग्नि से काढ़ा पकावे जब रस जल जाय और अभ्रक मात्र शेष रहे तब सब योगों में प्रयुक्त करे।

इति अमृतीकरण।

अथ अभ्रकसत्त्वपातनम्

चूर्णीकृतं गगनपत्रमथारनाले धृत्वादिनैकमथ शोष्य च सूरणस्य।
भाव्यं रसस्तदनुमूलरसे कदल्यावेदांश टंकणयुतं शफरी समेतम्॥६४॥
पिण्डीकृतं तु बहुधा महिषीमलेन संशोष्य कोष्ठगतमाश धमेद्यताग्नौ।
भस्त्री द्वयेन च ततोवमते हि सत्त्वं पाषाणधातुगतमात्रमसंशयोस्ति॥

इति अभ्रकसत्त्वपातनम्।

अभ्रक के चूर्ण को एक दिन कांजी और एक दिन जमीकन्द के रस में भिगो दे; पीछे केलाकन्द के रस में भावना दे। चतुर्थांश सुहागा और छोटी मछली मिलाकर भैंस के गोबर के साथ छोटी-छोटी गोली बनावे। फिर धूप में सुखाकर कोष्ठिका में रख बङ्कनाल धौंकनी से महाग्नि देने से जो सत्व निकलता है वह महारसायन, जारणयोग्य तथा सब रोगों को दूर करता है।

इति अभ्रकसत्त्वपातन।

अथ मनःशिलाशुद्धिः

जयन्ती भृगङ्गराजोत्थं रक्तागस्ति रसः शिलाम्॥ ६६॥
दोलायन्त्रे पचेद्यामं यामं छागोत्थ मूत्रकैः।
क्षालयेदारनालेन सर्वयोगेषु योजयेत्॥ ६७॥

हलदी, भाँगरा, अगस्तिया, इनके साथ मैनशिल को दोला यन्त्र में छागमूत्र के साथ एक पहर तक पकाने से शुद्ध होता है। पीछे कांजी से प्रक्षालन कर सब योगों में प्रयोग करे। १५२ का चित्र दोलायन्त्र है।

इति मनःशिलाशुद्धिः।

अथ हरतालशुद्धिः

तालकं पोटलीं बद्ध्वा सचूर्णं काञ्जिके क्षिपेत्।
दोलायन्त्रेण यामैकं ततः कूष्माण्डजे रसे॥ ६८॥
तिलतैले पचेद्यामं यामं चित्रफला जलैः।
एवं यन्त्रे चतुर्यामं पाच्यं शुद्ध्यति तालकम्॥ ६९॥

हरताल को चूर्णकर पोटली बाँध कांजी में डाल दे और एक पहर तक दोलायन्त्र में पचावे। फिर पेठे के रस में तिल के तेल से एक पहर तक पकावे।

फिर एक पहर त्रिफला जल से पाचित करने से चार प्रहरों में हरताल शुद्ध हो जाता है।

इति हरतालशुद्धिः।

अथ तुत्थशुद्धिः

विष्ठयांमर्दयेत्तुत्थं मार्जारककपोतयोः।
दशांशं टङ्कणं दत्त्वा पाच्यं मृदुपुटे तु यः॥ ७०॥
पुटं दध्ना पुटं क्षौद्रे देयं तुत्थविशुद्धये।

तुत्थ (तूतिया) को बिलाव और कबूतर के बीट में मर्दन करे। फिर उससे दसवाँ हिस्सा सुहागा डालकर मृदु पुट में पचावे तथा उसकी शुद्धि के निमित्त दही और शहद का पुट दे।

अथ काशीशशुद्धिः

घर्मेशुद्धयति काशीशं दिनं जम्बीर भावितम्॥ ७१॥

एक दिन जम्बीरी के रस में भावना देकर धूप में सुखाने से काशीश शुद्ध होता है।

शङ्खनाभं च सन्दग्ध्वा भाव्यमम्लेन सप्तधा।
प्रक्षाल्यं ग्राहयेत्तावच्छुद्धिमायाति नान्यथा॥ ७२॥

शङ्खनाभि (नाभिशङ्ख) को जलाकर सात बार अम्ल पदार्थ से भावना देकर प्रक्षालन करने से शुद्ध हो जाता है, इसमें सन्देह नहीं।

इति काशीशशङ्खनाभिशुद्धिः।

अथ शातकुम्भादि धातुशोधनम्

मृत्तिका मातुलुङ्गाम्लैः पञ्चवासर भाविता।
सभस्म लवणैर्हेमशोधयेत्पुटपाकतः॥ ७३॥
वल्मीक मृत्तिका धूमं गैरिकं चेष्टिका पटुः।
इत्येता मृत्तिकाः पञ्चजम्बीरैरारनालकैः॥ ७४॥
पिष्ट्वा लिप्तं स्वर्णपत्रं पुटेन परिशुद्धयति।
नागेन टंकणेनैव धूमेशुद्धयति रौप्यकम्॥ ७५॥

पाँच प्रकार की मृत्तिका भस्म के साथ जम्बीरी अम्ल से पुटपाक द्वारा सुवर्ण को शोधे। फिर बाँबी की मिट्टी, मृत्तिका, धूम्र, गेरू और ईंट, ये पाँच मृत्तिकायें जम्बीरी नींबू के रस और कांजी में खरल कर उसके द्वारा स्वर्ण के पत्तों पर लेप कर पुटपाक करने से सुवर्ण भले प्रकार से शुद्ध हो जाता है। रूपा, वंग और सुहागे के साथ लगाने से भी स्वर्ण शुद्ध होता है।

खटिकालवणं तक्रैरारनालैश्च पेषयेत् ।
तेनलिप्तं ताम्रपत्रं तप्तं तप्तं निषेचयेत् ॥ ७६ ॥

खडिया और सेंधा नमक को तक्र और कांजी में पीसकर ताँबे के पत्रों पर लेप कर बारम्बार आग में तपाकर शुद्ध करे ।

खदिरारनाल तक्रान्त निर्गुण्डी च विशुद्धये ॥ ७७ ॥
रोहणं राजवञ्चैवतृतीयं च पुटीरकम् ।
इतितीक्ष्णं त्रिधातं च शोधयेद्योगसिद्धये ॥ ७८ ॥

खैर तथा कांजी, मट्ठा, निर्गुण्डी, राजवृक्ष, रोहिण और पुटीरक का प्रयोग करना चाहिये । इस प्रकार तीक्ष्ण त्रिधात को सिद्ध कर योगों में लगावे ।

अथ तुत्थटंकणकाचलोहशोधनम्

शशरक्तेन संलिप्तं त्रिवारं चाग्निपाचितम् ।
तुत्थं टंकणकाचैर्वा धामितं शुद्धिमृच्छति ॥ ७९ ॥

तीन बार [1]रक्तवर्ग की या शशा के रक्त की भावना देकर तीन वार अग्नि में पचावे । बार-बार लेप कर अग्नि में रखने से तूतिया, सुहागा और काच ये ताप से शुद्ध होते हैं ।

अथवा लोहचूर्णन्तु गोमूत्रैः षड्गुणैः पचेत् ।
प्रक्षालयेदारनालैः शोष्यं शुद्धिमवाप्नुयात् ॥ ८० ॥

अथवा लोहचूर्ण छः गुने गाय के मूत्र में पकाकर पीछे कांजी से प्रक्षालन कर धूप में सुखाने से शुद्ध होता है ।

सर्वेषांमतेमारणम्

शुद्धसूतं समं स्वर्णं खल्वेकुर्याच्च गोलकम् ।
अर्धार्द्धं गन्धकं दत्त्वा सर्वतुल्यं निरुध्य च ॥ ८१ ॥
विंशद्वनोपलैर्देयं पुटान्येव चतुर्दश ।
निरुत्थं जायते भस्मगन्धं देयं पुनः पुनः ॥ ८२ ॥

शुद्ध पारे के समान सोना लेकर खरल करे, गोली बनावे और उससे आधा गन्धक का चूर्ण गोले के नीचे रखकर गोले को मूषा में रख बीस वनों के उपलियों के द्वारा चौदह वार पुट देने से स्वर्ण का भस्म बन जाता है । हरेक पुट में गन्धक का चूर्ण देता जाय ।

---

१ कसूम, खैर, लाख, मजीठ, लाल चन्दन, सहिजना, दुपहरिया, कपूरगन्धी, सोनामाखी यह रक्तवर्ग है ।

रौप्यं पत्रं चतुर्भागं गन्धं भागेन लेपयेत् ।
जम्बीरनीरपिष्टेन पञ्चविंशद्वनोपलैः ॥ ८३ ॥
बध्वात्रिभिः पुटेपच्याद्गंधं देयं पुनः पुनः ।
म्रियते नात्र सन्देहस्तत्तत्कर्मणि योजयेत् ॥ ८४ ॥

चार भाग चाँदी के पत्र, एक भाग गन्धक, जम्बीरी नींबू के रस में खरल कर उनपर लेप करे फिर सम्पुट में रख पच्चीस वनों के उपलों की अग्नि के द्वारा प्रत्येक पुट में गन्धक देकर तीन बार पुटपाक करे। इससे अवश्य चाँदी का भस्म हो जायगा। फिर उसे कार्य में लाना चाहिये।

ताम्रतुल्येन गन्धेन ह्यम्लपिष्टेन लेपयेत् ।
कंटवेधीकृतं पत्रमन्धयित्वा पुटे पचेत् ॥ ८५ ॥
उद्धृत्य चूर्णयेत्तस्मिन्पादांशं गन्धकं क्षिपेत् ।
जम्बीरैरारनालैर्वा पिष्ट्वाबद्धा पुटे पचेत् ॥ ८६ ॥
एवं चतुः पुटैः पाच्यं गन्धं देयं पुनः पुनः ।
मातुलुङ्ग द्रवैः पिष्ट्वा पुटमेकं प्रदापयेत् ॥ ८७ ॥

ताँबे का कंटकवेधी पत्र लेकर उसके बराबर गन्धक को कांजी में खरल कर उसको ताँबे के पत्रों पर लपेटे, फिर उन कंटकवेधी ताँबे के पत्रों को गजपुट में पचावे फिर महीन पीस चूर्ण कर ले। इसके उपरान्त चौथा भाग गन्धक मिलाकर जम्बीरी नींबू और कांजी में, पृथक् पृथक् पीसकर गन्धक मिलाकर चार पुट दे और जम्बीरी के रस में पीसकर या बिजौरे के रस में पुट दे तो पुटपाक करने से भस्म हो जाता है।

अथास्यदोषहरणम्

सितशर्करया प्येकं पुटं देयं मृतं भवेत् ।
मृतंताम्रं तु जम्बीरैर्यामं खल्वे विमर्दयेत् ॥ ८८ ॥

एक भाग ताँबा और दो भाग पारा इनको जम्बीरी के रस में खरल कर खाँड़ मिलाकर तीन बार पुटपाक करने से ताँबे का भस्म हो जाता है।

तद्गोलं सूरणे क्षिप्त्वारुध्वा सर्वं च लेपयेत् ।
शुष्कं गजपुटे पाच्यं निर्दोषं सर्वरोगहृत् ॥ ८९ ॥

मरे ताम्र को जम्बीरी के रस में एक पहर खरल कर गोला बनाकर उसको जमीकन्द के बीच में रखकर लेपकर गजपुट में पचाने से सर्व रोगों का हरने वाला भस्म हो जाता है।

नायं पचेत्पञ्चपलादर्वागूर्ध्वं त्रयोदश ।
आदौ मन्त्रस्तथाकर्म कर्तव्य मन्त्र उच्यते ॥ ९० ॥
ॐ अमृतोद्भवाय स्वाहा ।

लोह मारण : लोह मारण श्रेष्ठ कर्म है। सर्वप्रथम पाँच पल से तेरह पल पर्यन्त लोहे को लेकर मन्त्र पढ़े फिर कर्म करे। 'ॐ अमृतोद्भवाय स्वाहा' इस मन्त्र को पढ़कर मर्दन करे। इति मर्दन मन्त्र।

अनेनमन्त्रेणलोहस्य तत्साधकस्य रक्षाकर्तव्या ॐ नमश्चण्डचक्रपाणये स्वाहा यक्षसेनाधिपतये सुरगुरुमहाविद्याबलाय स्वाहा अनेन मन्त्रेण बलि दत्त्वा ततः कुर्यात् दन्तीपत्रद्रवं तस्यां लोह चूर्णं दिनोदये ।
घर्मेधार्यं दिनं कांसेद्रवं देयं पुनः पुनः ॥ ९१ ॥
रुद्ध्वा रात्रौ पुटेपाच्यं प्रातर्द्रवैश्च भावयेत् ।
एवमष्टदिनं कुर्यात्त्रिविधं म्रियते तु यः ॥ ९२ ॥

उक्त मन्त्र से लोह और साधक की रक्षा करे। फिर 'ॐ नमश्चं' इस मन्त्र से बलि दे। दन्ती के पत्तों के रस में लोहे का चूर्ण खरल कर तीन दिन धूप में रक्खे, बार-बार इसकी भावना दे। फिर रात में लोहे को शरावसम्पुट में रखकर प्रातःकाल पूर्वोक्त द्रवों से पचना चाहिये। इस प्रकार आठ दिन करने से लोहा मर जाता है।

मृतस्य लक्षणम्

मध्वाज्य मृतलोहं च रौप्यं संपुटके क्षिपेत् ।
रुद्ध्वाध्माते तु संग्राह्यं रौप्यं चेत्पूर्वमानकम् ।
तदालोहं मृतं विद्यादन्यथा साधयेत्पुः ॥ ९३ ॥

उसके मृतलक्षण : शहद, घी और मृत लोह को रूपे के सम्पुट में रखकर मुख बन्द कर अग्नि जलाने से लोह भस्म यदि पूर्ण ही रहे तो लोह को मृत जानना चाहिये। यदि न हो तो फिर पुटपाक करे।

अथ शोधनम्

गन्धकं तुल्यकं लोहं तुल्यं खल्वे विमर्दयेत् ॥ ९४ ॥
दिनैकं कन्यकाद्रावैरुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ।
इत्येवं सर्वलोहानां कर्तव्यं स्यान्निरुत्थनम् ॥ ९५ ॥

शोधन : गन्धक और मृत लोहे को खरल में डालकर एक दिन घीकुवार के रस में मर्दन करे फिर गोला बनाकर सम्पुट में रख गजपुट में पचावे। इस प्रकार सब लोह शुद्ध हो जाते हैं।

अथास्यामृतीकरणम्

घृततुल्यं मृतं लोहं लोहपात्रगतं पचेत्।
जीर्णे घृतेसमादाय योगवाहेषु योजयेत् ॥ ९६ ॥

अमृतीकरण : घृत और लोहे की भस्म को बराबर लेकर लोहे के बर्तन में पकावे। जब घी जीर्ण हो जाय तब उतार ले। इसका योगवाही योगों में प्रयोग करे।

इति लोहमारणम्।

अथ भूनागसत्वम

सद्यो भूनागमादाय क्षालयेच्छिथिलं बुधः।
अथवा कुक्कुटं वीरं कृत्वा मन्दिरमाश्रितम् ॥ ९७ ॥
मलमूत्रं गृहीतेन सदम्बुप्रथमांशकम्।
आलोड्य टंकं मध्वाज्यैर्घर्मेसर्वार्थमादरात्।
मुञ्चेत्तु ताम्रवत्सत्वमेतद्भूनाग सत्वकम् ॥ ९८ ॥

इति नागवर्गः।

प्रथम ऐसे भूनाग को लाकर जो कि वर्षाकाल में ताम्रभूमि में हुआ हो उसको क्षालित करके अथवा देवकरुड कनेर मिलाकर या मुरगे की वीट के साथ उसको मिलाकर अथवा गाय के मलमूत्र के साथ जल मिलाकर तत्काल के जल से उसके चूर्ण को शहद, घृत में मिलाकर धूप में रख दे फिर मर्दन कर पंकनाल में रखकर फूकने से ताँबे के सामन सत्व निकलता है।

इति नागवर्गः।

अथ लवणम्

सामुद्रं सेंधवं काचं चुल्लिका च सुवर्चलम्।
मूलिका नवक्षारश्च ज्ञेयं लवण पञ्चकम् ॥ ९९ ॥

समुद्रलवण, सेंधा नमक, काँच, चूलिका काला नमक, मूलिकानवक्षार यह पाँच लवण जानने चाहिये।

इति लवणम्।

अथ क्षाराः

त्रिक्षारष्टं कणक्षारो यव क्षारश्च स्वर्जिका ॥ १०० ॥

सुहागा, जवाखार और सज्जीखार ये तीन क्षार हैं।

इति क्षाराः।

अथ वृक्षक्षारः

तिलापामार्ग कदली पलाशः शिग्रुपौंड्रकौ।
मूलकार्द्रक चित्राश्च सर्वमन्तः पुटेपचेत् ॥ १०१ ॥
समालोड्य जलैर्बद्ध्वा वस्त्रे ग्राह्यमथोजलम्।
शोधयेत्पाचयेदग्नौ मृद्भाण्डेन तु तज्जलम्।
ग्राह्यं क्षारावशेषन्तु वृक्षक्षारमिदं स्मृतम् ॥ १०२ ॥

वृक्षक्षार : तिल, चिरचिटा, केला, ढाक, सहिजना, पौंड्रक, मूली, अद्रक और चीता इन्हें पृथक् पृथक् अन्तःपुट में पचावे (कहीं पौंड्रक का अर्थ इक्षु है) और जल में अच्छे प्रकार आलोडित कर वस्त्र में ग्रहण कर छान ले और उस जल को शोधन कर अग्नि में पचाकर मिट्टी के बर्तन में रक्खे। फिर जो शेष रहे वह क्षार है। इसे वृक्षक्षार कहते हैं। इति वृक्षक्षार।

अथ विडः

मूलिकार्द्रक वल्लीनां क्षारगोमूत्र योजितम्।
वस्त्रपूतं जलं ग्राह्यं गन्धकं तेनभावयेत् ॥ १०३ ॥
ससप्तवारं खरेघर्मे बीजोयं हेमजारणे।
कन्या हयारि धतूरद्रवैर्भाव्यं तु गन्धकम् ॥ १०४ ॥
शतवारं खरेघर्मे बीजोयं हेमजारणे।
गन्धकं शङ्खचूर्णं वा गोमूत्रैः शतभावितम्।
बीजोयं जारणे श्रेष्ठो बीजानां द्रावणेहित. ॥ १०५ ॥

मूली, अद्रक, चीता, इनको गोमूत्र से पीसकर वस्त्र से छान ले और उसमें गन्धक की भावना दे। इस प्रकार सात बार कर कठिन धूप में रख दे। यह सुवर्ण के जारण करने का बीज है। गन्धक और शङ्ख के चूर्ण को सौ बार गोमूत्र से भावना दे यह हेमजारण में श्रेष्ठबीज बीजों के द्रावण में हितकारक है। विरिया संचर नमक को विड नमक भी कहते हैं।

इति विडः।

अथ अम्लवर्गः

जम्बीरं नागरङ्गश्च मातुलुङ्गाम्ल वेतसम्।
चाङ्गेरी चणशुक्रश्च अम्लवर्गः प्रकीर्तितः ॥ १०६ ॥

जम्बीरी नींबू, नागरंग (नारंगी), मातुलुङ्गी, बिजौरा नीबू, अम्लवेतस, अम्ललौना, चना और चीता यह अम्लवर्ग है।

इति अम्लवर्गः।

अथ वज्रमूषा

वल्मीक मृत्तिका भागं गवास्थि तुषभस्मनोः।
भागं रसं समादाय वज्रमूषा विरच्यते॥ १०७॥

वज्रमूषा निर्माण विधि : तिनकों की राख दो भाग, बम्बई की मिट्टी एक भाग, रस अर्थात् लोहे का मैल एक भाग लेकर बकरी के दूध से पीसकर दृढ मूषा बनावे फिर धूप में सुखा ले। उपरोक्त कल्क का लेपन कर मुख बन्द करे। यह वज्रमूषा है इसमें उत्तम पारे की भस्म होती है।

इति वज्रमूषा।

अथ दीर्घायुष्यकरणम

नीम की छाल ४ माशे, नीम की जड़ ५ माशे, नीम के फूल ५ माशे, हरिद्रा ७ माशे, अपामार्ग (चिरचिटा) ५ माशे, त्रिकुटा २ माशे, बेल की जड़ १।२५ माशे, श्वेत चीता १ माशे, अजवायन १ तोला, लवण ४ माशे यह सब एकत्र कर गर्म पानी से वस्त्र में शोध ले। तीन माशे की गोली बनाकर प्रतिदिन एक गोली खाने से तीन सौ साठ वर्ष का जीवन होता है।

पहले महीने अग्नि की प्रबलता, दूसरे महीने व्याधिनाश, तीसरे में पुष्टि, चौथे में जनैकदृष्टि, पांचवे में सुन्दरता, छठे में कोकिलास्वर, सातवे में पलितनाश, आठवे में वज्रकाय, नौवे में निद्रानाश, दशवे में यशोवृद्धि, ग्यारहवे में श्रुतिधर, और बारहवे में सर्वसिद्धिः होती है।

'ॐ स्वस्तिनानन्दग्रामात् नानन्दग्रामात् नानन्दगृहात् नानन्दविराहात् नानन्दकोनामभिक्षुः ऐकाहिक द्व्याहिक त्र्याहिक चातुर्थिक नित्यज्वर मासिक वार्षिक द्विवार्षिक डाकिनी कृत्यावातिक पैत्तिक श्लैष्मिक सन्निपातादीन् सर्वज्वरान् समादिशति भवद्भिः प्रहितराजादेश श्रवणयत्रदर्शनात् श्रीअमुकस्य शरीरे मुहूर्तमपि न स्थातव्यं ज्वर रेरे फट् फट् हु स्वाहा। मारीच मारीच अमुकस्य ज्वरं हर हर स्वाहा'।

यह पत्र पर लिख कर शिर पर बांधने से सब ज्वर दूर होते हैं।

इति दीर्घायुष्यकरणम्।

इति श्रीपार्वतीपुत्रनित्यनाथविरचिते कामरत्ने रसादि-
शोधनं नाम षोडशोपदेशः॥ १०६॥

परिशिष्ट

पुरसुन्दरी, मनोहरी, कलावती, कामेश्वरी, रतिकरी, पद्मिनी, नटी, अनुरागिणी से आठ यक्षिणी हैं।

अथ पुरसुन्दरी साधनम्

'ॐ आगच्छ पुरसुन्दरी स्वाहा' इति मन्त्रः। इसे पढ़कर घर जाकर गूगल की धूप देकर तीनों संध्याओं में उपरोक्त मन्त्र सहस्र बार जपने से १ महीने में पुरसुन्दरी आती है। उस समय चन्दन और जल से अर्घ्य दे। इसके तीन भाव हैं : माता, भगिनी, पत्नी। माता का भाव करने से वस्त्र-द्रव्य, रस-रसायन देती है। भगिनी भाव में भी पूर्ववत् वस्त्र देती है। यदि भार्या हो तो महा ऐश्वर्य प्रदान करती है। इन सब का पूजन करे। इसमें दूसरे के साथ शयन तथा मैथुन न करे। यदि करे तो नाश होता है। इसे पुरसुन्दरी ध्यान कहते हैं।

अथ मनोहरी साधनम्

ॐ आगच्छ मनोहरि स्वाहा : इस मन्त्र को पढ़कर नदी तट में मण्डल-कर अगर की धूप देकर महीने भर तक पूजन और सहस्र जप करे। जब आये तब चन्दन का अर्घ्य दे। पुष्पवाटिका में एक चित्त से अर्चन करने से आधीरात में अवश्य आती है। आते ही कहे 'सौभाग्य दे' तब सौ अशर्फी प्रतिदिन देती है।

अथ कलावती साधनम्

ॐ ह्रीं कलावती मैथुनप्रिये आगच्छ स्वाहा : वटवृक्ष के नीचे मद्य-मांस देकर सुरा की प्रार्थना सहित जपने से सात दिन तक आधीरात को सर्वालङ्कार से भूषित परिवार सहित जब आती है अब भार्या होती है। बारह जनों को वस्त्रालङ्कार भोजन और दिन में आठ फल देती है।

कामेश्वरी साधनम्

ॐ ह्रीं आगच्छ कामेश्वरी स्वाहा : इसकी भोजपत्र पर गोरोचन से प्रतिमा लिखे। देवी का पूजन करे, शय्या में चढ़कर एक मास सहस्र मन्त्र प्रति दिन जपे, मासान्त में देवी की पूजा करे, घृत मधुयुक्त प्रतिरात्र दे, मौन हो जप करे तब आधीरात को अवश्य आती है। आने पर इच्छा करे तो **भार्या होती है।**

शयन में दिव्य अलङ्कारों को छोड़कर चली जाती है। इसमें परस्त्री से मैथुन नहीं करना चाहिये।

अथ रतिकरीसाधनम्

ॐ ह्रीं आगच्छ रतिकरी स्वाहा : अयःपट में चित्र रूप से लिखकर कनक वस्त्रालङ्कार से भूषित कर कमल हाथ में लिये कुमारी का पूजन करे, गूगलधूप दे, आठ सहस्र जप करे, मासान्तपर्यन्त पूजा कर घृत धूप दे, तब आधीरात को आकर प्राप्त होती है। स्त्री भाव से कामना करे तो भार्या होती है, साधक की सकुटुम्ब रक्षा करती है और दिव्य कामना वाले भोजन देती है।

अथ पद्मिनीसाधनम्

ॐ ह्रीं आगच्छ पद्मिनी स्वाहा : अपने घर में मण्डल कर शिव करे, गूगल की धूप देकर एक सहस्र जप करे, पूर्णमासी को विधिपूर्वक पूजा कर जपे तब आधीरात को आती है। कामना करने से भार्या होती है, सब कामार्थ सिद्धि करती है और रस-रसायन सिद्ध द्रव्य देती है।

अथ नटीसाधनम्

ॐ ह्रीं आगच्छं नटी स्वाहा : अशोक वृक्ष के नीचे जाकर मांस, उपहार, गन्ध, पुष्प, धूप, दीपादि बलि देकर सहस्र जप करे तो एक महीने में अवश्य आती है। आनेपर यदि माता हो तो कामिक भोजन देती है और वस्त्र-सुवर्ण देती है। भगिनी हो तो सौ योजन से लक्ष्मी ला देती है और वस्त्र, अलङ्कार, भोजन, रसायन देती है। यदि स्त्री हो तो आठ दिन स्थित हो दिव्य रसायन देती है।

अथ अनुरागिणी साधनम्

ॐ ह्रीं आगच्छ अनुरागिणी स्वाहा : कुमकुम से भोजपत्र पर यह मन्त्र लिखे और प्रतिदिन गन्धादि से पूजन कर सहस्र जप करे, तीनों काल में एक महीना पूजन कर घृत दीप दे, सम्पूर्ण रात्रि जप करे, तब एक महीने में अवश्य आती है। शेष बातें सब पूर्ववत्।

इति अदृश्यक्षिणी साधनम्।

मंत्र और यंत्र दोनों ही मिलकर तंत्र सिद्ध होता है इस कारण दोनों ही इस ग्रंथ में लिखे हैं। मंत्रों के स्थान पर यंत्रों का अंक लिख दिया गया है उस अंक के अनुसार यहां देख लेना चाहिए।

यन्त्र चित्राणि

१

यह यंत्र गोरोचन और लाल चन्दन से भूर्जपत्र पर लिख कर कंठ में बांधने से कंठमाला दूर हो जाती है।

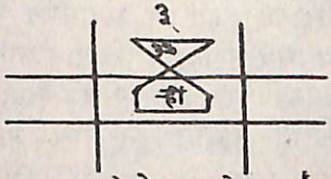

३

कुमकुम गोरोचन से भूर्जपत्र में जिसको लिख कर दें निश्चय ही उसका सौभाग्य होता है।

५

यह यन्त्र कुमकुम गोरोचन से लिख कर बांधने से बंधमोक्षण होता है।

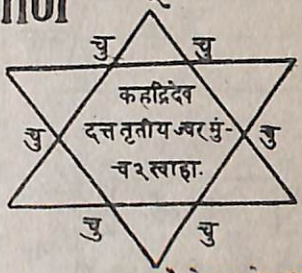

२

यह यन्त्र कुमकुम गोरोचन से भूर्ज पत्र पर लिखकर कण्ठ में बांधने से तिजारी समाप्त हो जाती है।

४

गोरोचन कुमकुम से भूर्जपत्र पर लिखकर धान्यराशि में स्थापन करने से कीटादि दोष नहीं होते हैं।

६

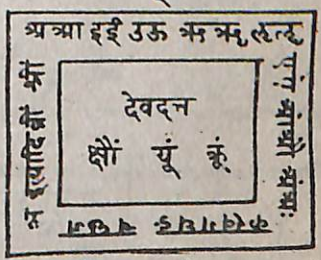

कुमकुम भूर्जपत्र पर लिखकर रखने से राजा वश में होता है।

मंत्र और यंत्र दोनों ही मिलकर तंत्र सिद्ध होता है इस कारण दोनो ही इस ग्रंथ में लिखे हैं। मंत्रों के स्थान पर यंत्रों का अंक लिख दिया गया है उस अंक के अनुसार यहां देख लेना चाहिए।

यन्त्र चित्राणि

१

यह यंत्र गोरोचन और लाल चन्दन से भूर्जपत्र पर लिख कर कंठ में बांधने से कंठमाला दूर हो जाती है।

२

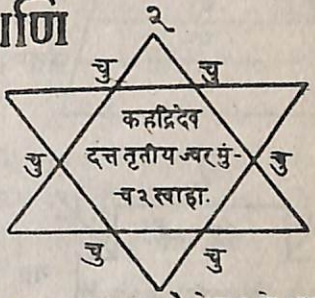

यह यन्त्र कुमकुम गोरोचन से भूर्ज पत्र पर लिखकर कण्ठ में बांधने से तिजारी समाप्त हो जाती है।

३

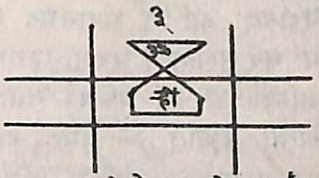

कुमकुम गोरोचन से भूर्जपत्र में जिसको लिख कर दें निश्चय ही उसका सौभाग्य होता है।

४

उलु	मुलु
चलु	णसु

गोरोचन कुमकुम से भूर्जपत्र पर लिखकर धान्यराशि में स्थापन करने से कीटादि दोष नहीं होते हैं।

५

यह यन्त्र कुमकुम गोरोचन से लिख कर बांधने से बंधमोक्षण होता है।

६

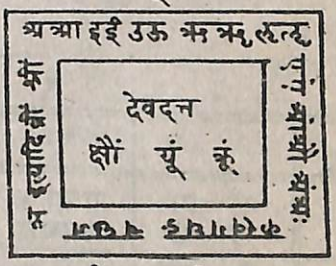

कुमकुम भूर्जपत्र पर लिखकर रखने से राजा वश में होता है।

७

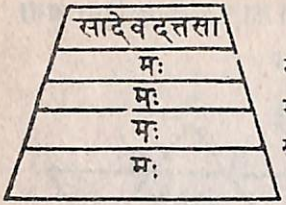

यह यन्त्र मिष्ट रस से भूर्जपत्र पर लिखकर कपोल मध्य में जब तक रक्खें तब-तक निश्चय वीर्य स्तम्भन होता है ।

८

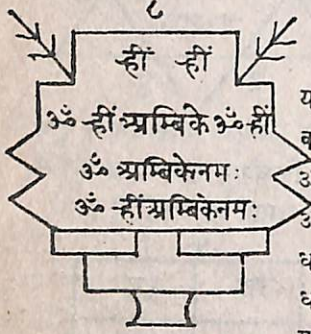

यह चंदन, कर्पूर का लेप देकर दर्भांकुर मूलनाम का यन्त्र लिखकर वलयाकार करे ॐ सिद्धोलिनमः ॐ शंसोलिनमः ॐ यंगोलिनमः ॐ ककोलिनमः ४ ॐ खिदखिदर्विदर्विद जोलिन महानमद २ महा धरण वर्णने नमः सर्व सुखदाण्य धरणामडनो रोमा धरण ॐ ह्रीं अम्बिके ॐ ह्रीं अम्बिके नमः इति यन्त्रमध्ये लिखित्वा पश्चात् ॐ अम्बे आम्बाले अम्बिके अवतारय ठः ठः स्वाहा । इस मन्त्र से ३६००० जपने से सिद्धि होती है । फिर जपकर २१ चमेली के फूल यन्त्र पर अम्बिका की मूर्ति पर रखने से दीप में प्रसन्न मुखी दीखलाई पड़ती है । कुमारी के मुख से अम्बिका देवी शुभाशुभ कहती है । फिर अम्बिके देवी ह्रूं ह्रूं ह्रीं क्षौं यूं क्लीं पढ़कर विसर्जन करें ।

९

ईशान		पूर्व		आग्नेय
	अं अः ल क्षः	अआ क खगघङ	इ ई चछजझञ	
उत्तर	ॐ औं शषसह ४		ऋ ॠ तथदधन	दक्षिण
	ए ऐ यरलव ४	ऌ ॡ पफबभम	ऋ ॠ तथदधन	
वायव्य		पश्चिम		नैऋत्य

यह यन्त्र कुमकुम भोजपत्र पर लिख कर दक्षिण भुजा में बांधने से सर्वार्थ सिद्धि होता है ।

१०

इस यन्त्र को भोजपत्र पर लिख कर चन्दन, घी और शहद में तीन रात्रि स्थापन करने से साध्य वशीभूत होता है।

१२

गोरोचन से भोजपत्र पर जिसका नाम लिखकर सदा फूलों के वृक्ष के नीचे स्थापन करे और रात को प्लावित करे तो साध्य वशमें होता है।

१४

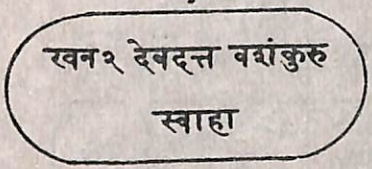

गोरोचन से भोजपत्र में लिखकर लाल सूत्र से बांधकर मुख में डाल कर जिसे देखें वह वश में होता है।

११

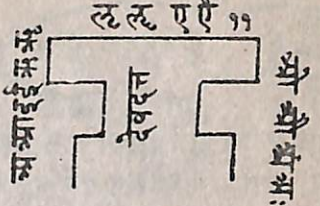

यह यन्त्र गोरोचन से भोजपत्र पर लिखकर पृथ्वी में गाड़ देने से शत्रु वश में होता है।

१३

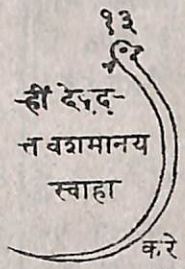

अनामिका अंगुली के रक्त और गोरोचन से जिसका नामलिख कर मधु में स्थापन करे वह वश में होता है।

१५

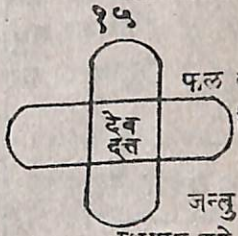

फल कण्टक द्वारा जिसका नाम लिख कर जन्तु के विवर में स्थापन करे वह त्रिभुवन को भी वशीभूत कर सकता है।

१६

गोरोचन से भोज पत्र में जिसका नाम लिख कर मधु में स्थापन करे वह वशीभूत होता है।

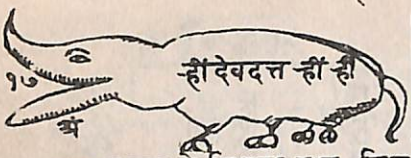

लाल चन्दन से जिसका नाम लिख कर पानी में स्थापन करें वह वश में हो जाता है।

गोरोचन से भोजपत्र में साध्यका नाम लिखकर बाहु या कण्ठ में धारण करे वह शत्रु वश में होता है।

गोरोचन से भजपत्र पर जिसका नाम लिखकर मधु में स्थापन करे वह वश में होता।

इतिसर्वजन वशी करणम्

कुमकुम गोरोचन से भोजपत्र पर जिसका नाम लिखकर भुजा में धारण करे तो सौभाग्य और स्त्री वश में होते हैं।

चमेली के फूल और आक के दूध से भोज पत्र पर लिख कर भुजा में धारण करने से साध्य वश में होता है।

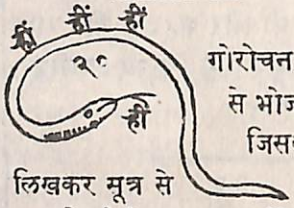

गोरोचन कुमकुम से भोजपत्र पर जिसका नाम लिखकर सूत्र से लपेट कर रक्खे तो वे सब दुष्ट वशमें होते हैं।

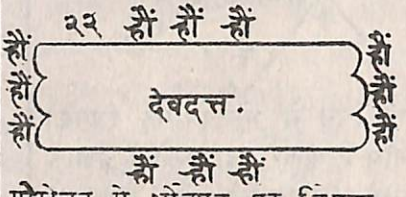

गोरोचन से भोजपत्र पर जिसका नाम लिखकर देवता स्थान में स्थापन करे वह वश में होता है।

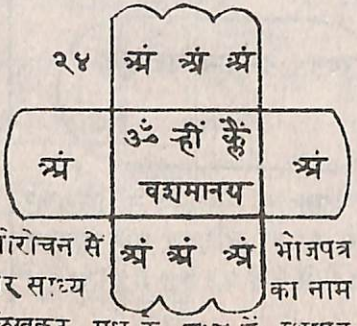

गोरोचन से भोजपत्र पर साध्य का नाम लिखकर मधु के मध्य में स्थापन करने से वह वश में होता है।

२५

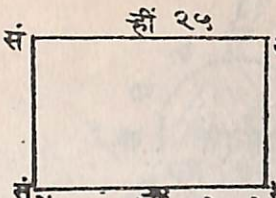

अनामिका के रक्त से भोजपत्र पर लिखकर बाहु या कण्ठ में धारण करने से वह वशीभूत होता है।

२७

ॐ तारे ॐ तारे ॐ तारेस्वाहा	ॐ तारे ॐ तारे ॐ तारेस्वाहा	ॐ तारे ॐ तारे ॐ तारेस्वाहा
ॐ तारे ॐ तारे ॐ तारेस्वाहा	ॐ तारे ॐ तारे ॐ तारेस्वाहा	ॐ तारे ॐ तारे ॐ तारेस्वाहा
ॐ तारे ॐ तारे ॐ तारेस्वाहा	ॐ तारे ॐ तारे ॐ तारेस्वाहा	ॐ तारे ॐ तारे ॐ तारेस्वाहा

गोरोचन, कुमकुम, कर्पूर से भोजपत्र पर जिसका नाम लिखकर घृत और मधु में स्थापन करे और तीन दिन लाल फूल से पूजन करे तो राजा वश में हो जाता है।

२९

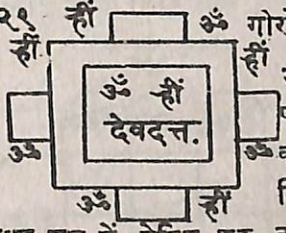

गोरोचन से भोजपत्र पर साध्य का नाम लिखकर लाल सूत्र में वेष्टित कर हाथ में बांधने से वह वशीभूत होता है।

३०

गोरोचन से यह चक्र लिखकर जिसके नाम से कण्ठ बाहु या वस्त्र के आचल में बांधे वह शत्रु के समान भी हो तो वशीभूत होता है।

२६

कुमकुम, गोरोचन से अनामिका के रक्त के साथ राजा के नाम को लिखकर खैर को अंगारे से ताप देने से वह वश में होता है।

२८

गोरोचनसे भोजपत्र पर लिखकरखैर के अंगारे से तीन संध्याओं में तपाने से उर्वशी भी बलपूर्वक आजायगी।

३१

गोरोचन तथा कुमकुम से जिसका नाम लिखकर घृत और मधु में स्थापन करे वह वश में होता है।

इति वशीकरणम्

३२

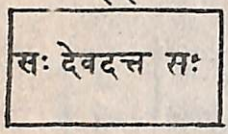

कुमकुम, रक्त गोरोचन से लिख कर धारण करने से सौभाग्य होता है। घृत में स्थापन करने से वश में होता है।

ह्रीं ३४

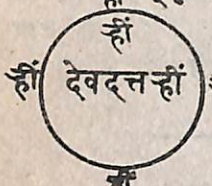

कुमकुम रक्त गोरोचन से भोजपत्र में जिसका नाम लिख कर मधु के मध्य में स्थापन करे उसका वशीकरण होता है।

३६

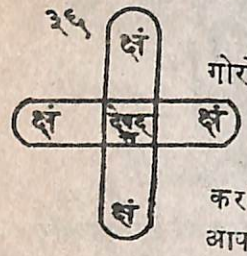

गोरोचन से भोजपत्र पर लिखकर मधु में स्थापन करने से दूर से भी आकर्षण होता है।

३८

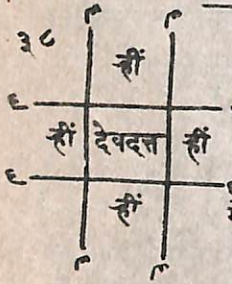

अनामिका के रक्त से भोजपत्र में लिखकर अग्नि में तपाने से आकर्षण होता है।

३३

गोरोचन कुमकुम से जिसका नाम भोजपत्र पर लिखकर घृत और मधु में स्थापन कर पृथ्वी में रक्खें उसका आकर्षण होता है।

३५

गोरोचन कुमकुम कर्पूर अर्क दूध से, साध्य का नामलिखकर घृत और मधुमें स्थापन कर तीन दिन लाल फलसे पूजन करने से वह राजा वशमें होता है।

३७

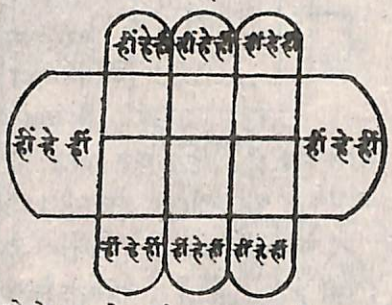

गोरोचन से भोजपत्र में जिसका नाम लिखकर मधु में स्थापन करे उसका आकर्षण होता है।

३९

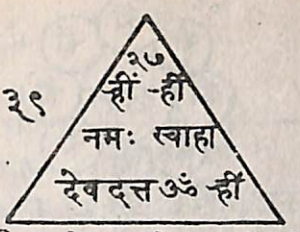

अनामिका के रक्त से हाथ में लिख कर रात्रि में जपने से संध्या में आकर्षण होता है।

४१

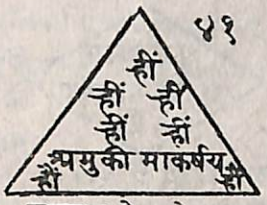

गोरोचन कुमकुम से भोजपत्र पर जिसका नाम लिखकर मोम और ६ में स्थापन कर तापवे वह स्त्री आकर्षित होती।

४३

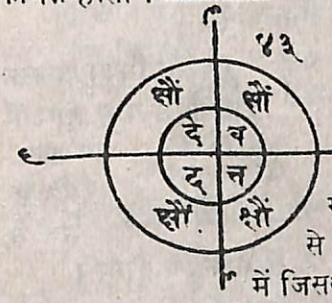

गोरोचन से भोजपत्र में जिसका नाम लिखकर मधु में स्थापन करे वह सौ योजन से आकर्षित होता है।

४५

कुमकुम गोरोचन से भोजपत्र में लिखकर मोम से लपेट खैर के अंगारे से तपाने से साध्य शीघ्र आकर्षित होता है।

५०

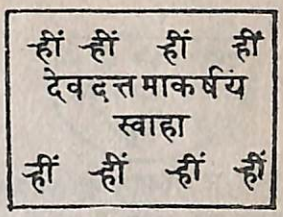

लाल चन्दन और अपने रुधिर से भोजपत्र पर जिसका नाम लिखकर घर में स्थापन करे वह आकर्षित होता है।

आकर्षणयंत्र ४२

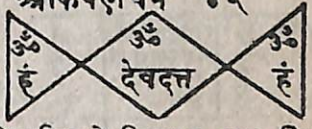

अपने रुधिर से जिसका नाम लिख कर काग में बाँध कर छोड़ दे वह शीघ्र आकर्षित होता है।

४४

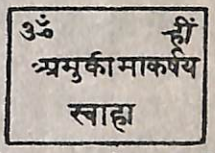

गोरोचन से भोजपत्र पर जिस का नाम लिखकर घी में स्थापन करे वह स्त्री दूर से आकिषत होती है।

४६

गोरोचन से लिखकर खैर के अंगारों पर तपा कर तीनों काल में जपने से ह्रीं क्लीं ॐ उर्वशी भी आकर्षित होती है।

४७

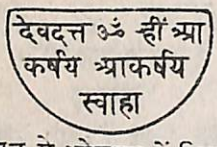

गोरोचन से भोजपत्र में जिसका नाम लिखकर घृत मध्य में स्थापन उसे सौ योजन से आकर्षित करता है।

४९

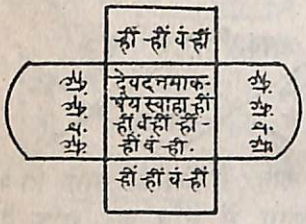

धतूरे के पत्ते के रससे और गोरोचन से भोजपत्र पर साध्य नाम लिख कर वीर की नलिका में स्थापन कर खैर के अंगारे से तपाने से सौयोजन से भी आकर्षित होता है।

५१

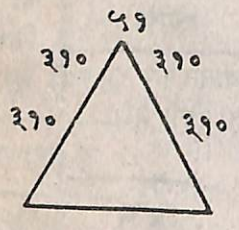

गोरोचन से भोजपत्र पर जिसका नाम लिखकर पानी में स्थापित करे वह आकर्षित होता है।

४८

गोरोचन से भोजपत्र पर जिसका नाम लिख कर घृत में स्थापन करे वह आकर्षित होता है।

५०

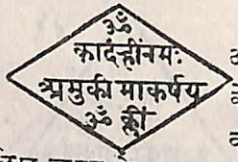

अनामिका के रक्त से वाम हाथ में लिख हृदय में रख कर रात्रि में जप करने से आकर्षण होता है।

५२

अनामिका के रक्त से वाम हाथ में लिखकर रात्रि में मन में जप करने से आकर्षण होता।

५३

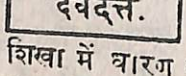

गोरोचन से भोज पत्र में साध्य का नाम लिखकर शिखा में धारण करने से सौभाग्य होता है। जय होती है।

५४

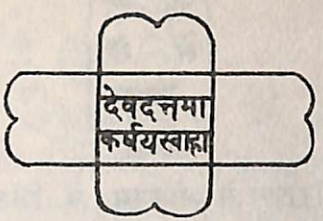

गोरोचन चन्दन से भोजपत्र पर जिसका नाम लिखकर शहद में डाल नलिका में रख कर पृथ्वी में गाढ़ दे वह स्त्री शीघ्र आकर्षित होती है।

५६

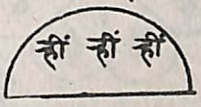

भोजपत्र पर गोरोचन से साध्यका नाम लिखकर भुजा कंठ शिखा में धारण करनेसे संग्राम में जय होती है।

५९

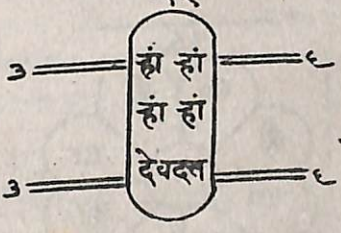

गोरोचन से भोजपत्र में लिखकर भोजपत्र में स्थापन करने से युद्ध में विजय होती है।

५५

गोरोचन से भोजपत्र पर साध्यका नाम लिखकर भुजा या कंठ में धारण करने से संग्राम में विजय होती है। यह महामहेश्वरी विद्या है।

५७

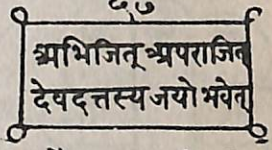

शिलापट्ठ में हरताल से लिखकर जिसका नाम लिखकर नीचे को मुख कर रख दे तो उसका जय होता है।

५८

	१	२६	१	२४
	८	२७	२०	१५
	२५			
	२९			

गोरोनच से भोजपत्र में लिखकर भुजा में बांधने में संग्राम में जय होता है।

६०

गोरोचन से भोजपत्र में लिखकर भुजा या कंठ में धारण करने से संग्राम में जय होता है।

६१

ॐ	क्षः	ॐ
क्षः	ॐ	क्षः
	देव	दत्त

गोरोचन से भोजपत्र पर साध्यका नाम लिखकर मधु के मध्य में स्थापन करने से जय होता है।

६२

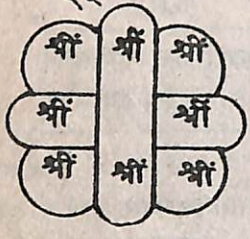

गोरोचन से भोजपत्र पर साध्यका नाम लिखकर धारणकर राजकुल में देने से व्यवहार में जय होता है।

६५

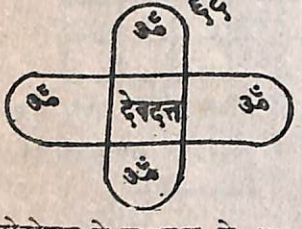

गोरोचन से कुमकुम से राजा का नाम लिखकर भुजा में धारण करने से जय होता है।

६७

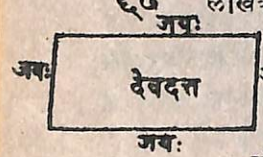

लाखके रससे साध्यका नाम लिखकर मधुके मध्य में डालने से सौभग्य होता है।

६८

गोरोचन से भोजपत्र में लिखकर भुजा में धारण करने से जय होता है।

६९

दातृशक्ति

गोरोचन और अनामिका के रक्त से भोजपत्र पर साध्यका नाम लिख कर घृत में स्थापन करने से दाता होता है, अदातापन छूट जाता है।

६६

कुमकुम, रक्त, गोरोचन से भोज पत्र पर लिखकर भुजा कंठमें धारण करने से सौभग्य होता है।

६८

गोरोचन से साध्यका नाम लिखकर मधु में स्थापन करने से सौभाग्य होता है ।

७०

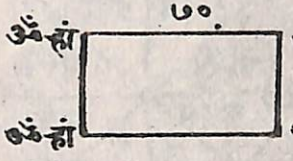

गोरोचन से भोजपत्र पर लिखकर दूध में स्थापन करने से क्रोधित हुआ भी प्रसन्न होता है ।

इति क्रुध्द प्रसाद.

७२

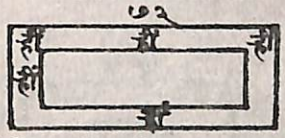

गोरोचन से भोजपत्र पर साध्यका नाम लिखकर मधु में स्थापन करने से सौभाग्य होता है।

७४

हरिताल हलदी से साध्य का नाम लिखकर दो सकोरों में स्थापन, पूजन कर नीचे को मुख करके स्थापन करने से मुख स्तंभन होता ।

६९

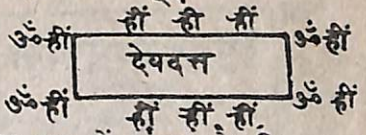

ताल पत्र में कटक से लिखकर कर्दम में स्थापन करने से क्रोधी पुरुष प्रसन्न होता है ।

७१

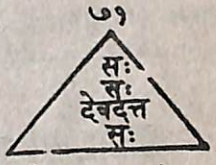

कुमकुम गोरोचन लाख से साध्यका नाम लिखकर वाजीकर शरीर में धारण करने से सौभाग्य होता है ।

इति सौभाग्य०

७३

कुमकुम गोरोचन से जिसका नाम लिखकर मधु में स्थापन करने से सौभाग्य होता है ।

७५

गोरोचन और अनामिका के रक्त से भोजपत्रपर साध्यका नाम लिखकर मधु में स्थापन करे वह अदाता दाता होता है ।

७६

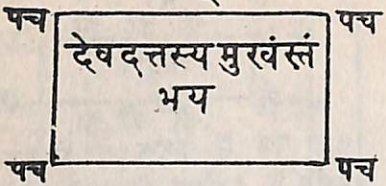

यह लिखकर उषामध्य मे ईशान कोण में स्थापन करने से साध्यका मुखस्तंम्भन होता है ।

७८

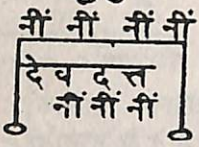

साध्या के पैरों की धूल और हरताल से दोनों में नाम लिखकर बरतन में स्थापन करके श्मशान में गाड़ देने से बन्धन होता है ।

८०

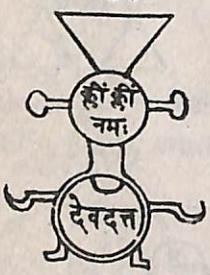

शिलापट्ट में हलदी से जिसका नाम लिखकर नीचे मुखकर स्थापन करे उसका मुख बन्धन होता है ।

७७

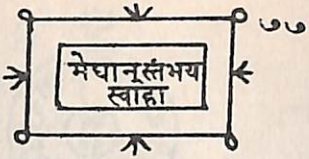

दो ईंटे संपुटकर उसपर श्मशान के अंगारे से लिखकर स्थापन करने से मेघों का स्तंम्भन होता है ।

७९

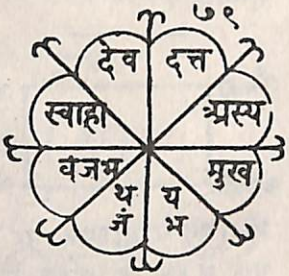

किसी भीतपर साध्यका नाम लिखने से उसका मुखवन्ध होता है ।

८१

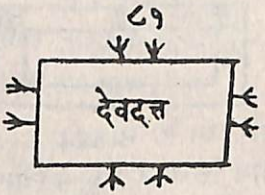

साध्य के चरण का धूल हरिताल साथ मिलाकर भोजपत्र पर लिखकर पाटल मध्य में साध्य के दोनों हाथ भांड में लिखकर उसपर मूत्रकर रख दे तो हाथ स्तंम्भन होता है अर्थात वह किसी को कुछ नहीं देता है ।

८२

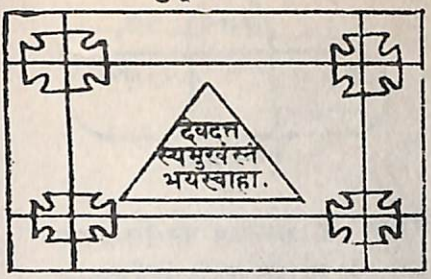

हलदी से भोजपत्र पर साध्य का नाम लिखकर द्रुम के नीचे स्थापित करने से स्तम्भित होता है।

८४

पीतसूत्र पीतद्रव्य से भोजपत्र पर लिखकर मोम से लपेटे जल से पूर्ण घट स्थापन करे अग्नि स्तम्भन करे इदं अग्नि स्तम्भनं पूर्णपात्रे पतितम्

८६

	ह्रींसः	ह्रींसः	ह्रींसः	
ह्रींसः	ह्रींसः	ह्रींसः	ह्रींसः	ह्रींसः
	ह्रींसः	ह्रींसः	ह्रींसः	

गोरोचन से कुमकुम और लाख से भोजपत्र में लिखकर तत्तीसरेया में वन्द करने से दिव्य स्तम्भन होगा।

८३

ताल पाट में हाथी को लिखकर हाथी का दांत उखाड़ मिट्टी का हाथी वनावे इससे हाथी आदि सब स्तम्भित होते हैं।

८५

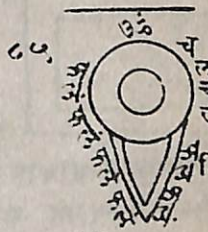

पीतद्रव्य से कर्पट पर लिखकर मोम से लपेट कर पूजा करने से जलस्तम्भन होता है।

८७

हां	हां	हां	हां	हां
हां	हां	हां	हां	हां
हां	हां	हां	हा	हां
हां	हां	हां	हां	हां

इसे पीत द्रव्य से पटपर लिखकर मोम से वेष्टितकर जल में स्थापित करने से जलस्तम्भन होता है। इतवार के दिन शिरस की जड़ लाकर माथेपर तिलक करे जल से घिसकर तिलक करे।

८८

गोरोचन कुमकुम से टेसू के फूल के रस के सहित भोजपत्र पर लिखकर दूध के घड़े में रखने से सब दिव्य स्तम्भन होते हैं।

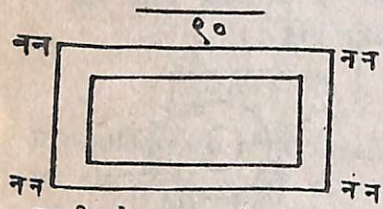

हलदी और हरताल से भोजपत्र पर लिखकर निर्जन में स्थापन करने से त्रिभुवन स्तम्भन कर सकता है।

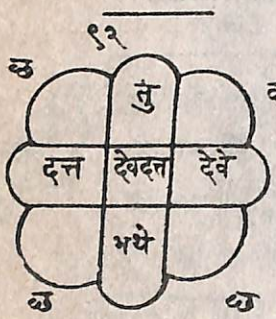

गोरोचन से साध्य का नाम लिखकर सकोरे में स्थापन करने से उसका स्तम्भन होता है।

८९

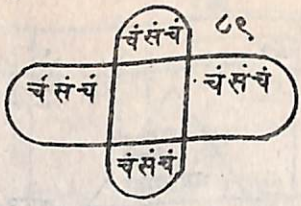

गोरोचन से भोजपत्र पर लिखकर निर्जन में स्थापन करने से त्रिभुवन स्तम्भन करता है।

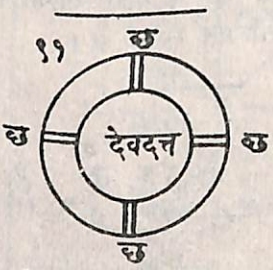

गोरोचन से भोजपत्र पर साध्य का नाम लिखकर सकोरे में स्थापन करने से उसका स्तम्भन होता है।

गोरोचन से साध्य का नाम लिख कर उसे कंपावे वह स्तम्भित होगा

कालीकंकाली अमुकं स्तम्भय स्वाहा इस मन्त्र से साध्य का नाम हृदय में रख कर छूकर या दर्शन कर जपने शीघ्र से स्तम्भन होता है।

इति मनुष्यस्तम्भनम्।

९४

अनामिका के रक्त से भोजपत्र पर लिखकर पृथ्वी में गाड़ देने से गर्भ स्तम्भन होगा।

९५

कुमकुम गोरोचन से अनामिका रक्त से साध्य का नाम लिखकर भुजा में बाँधने से उसे मोहित करता है।

९६

लाल द्रव्य से भोजपत्र पर लिखकर मधु में स्थापन करने से दुष्ट भी मोहित हो जाता है।

९७

गोरोचन से साध्य का नाम लिखकर भोजपत्र में पुष्पादि खण्ड से पूजन कर स्थापन करने से दुष्ट मोहित होता है।

९८

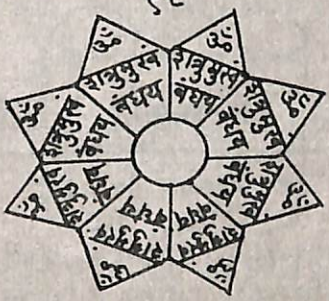

गोरोचन से भोजपत्र में साध्य का नाम लिखकर भुजा में बाँधने से उसको मोह होता है।

९९

गोरोचन से भोजपत्र में साध्य का नाम लिखकर भुजा कण्ठ में धारण करने से दुर्भगा सुभगा और उसके के गर्भ की रक्षा होगी।

१००

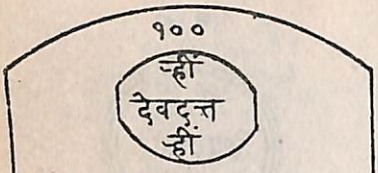

गोरोचन से भोजपत्र पर साध्य का नाम लिखकर कनेर वृक्ष के नीचे स्थापन करने से नष्टपुष्पा अपुष्पा रजोवती होती है।

१०१

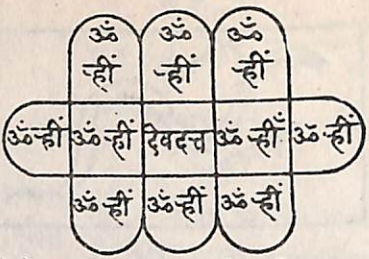

गोरोचन कुमकुम लाख से भोजपत्र पर साध्य का नाम लिखकर पञ्चामृत में स्थापन करे वंध्या गर्भिणी हो पुत्रवती होगी और गर्भरक्षा होगी यह सत्य है।

१०२

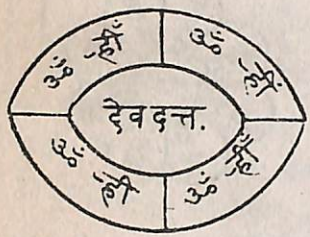

पीले रससे गोरोचन से भोजपत्र में साध्य का नाम लिखकर भुजा में धारण करने से वंध्या पुत्रिणी होगी और उसे निश्चय पुत्र होगा।

१०३

०८	०१	३४	२९
३०	३३	०४	०५
०२	०७	२८	३५
३२	३१	०९	०३

गोरोचन से भोजपत्र पर लिखकर बाहु-कण्ठ-कमर में धारण करने से वंध्या पुत्रिणी होती है।

१०४

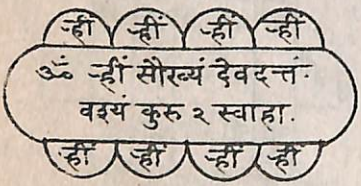

भोजपत्र में गोरोचन से साध्य का नाम लिखकर कोष में धारण करने से दुर्भगा सुभगा होती है।

१०५

गोरोचन कुमकुम लाख से साध्य का नाम लिखकर पञ्चामृत में स्थापन करने से काकवंध्या प्रसूति गर्भवती होती है।

१०६

गोरोचन से भोजपत्र में साध्य का नाम लिखकर हाथ में धारण करने से दुर्भगा सुभगा और काकवंध्या प्रसूती होती है।

१०८

गोरोचन से भोजपत्र पर लिखकर धारण करने से अपुत्रिका पुत्रवती मृत्वत्सा जीववत्सा, ऋतुवती गर्भवती और सौभाग्यवती होती है।

११०

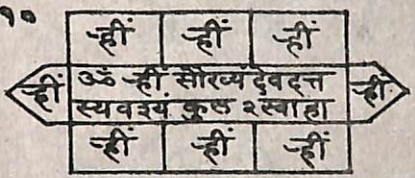

गोरोचन से भोजपत्र पर साध्य का नाम लिखकर कोख में धारण करने से दुर्भगा सुभगा होती है।

१०७

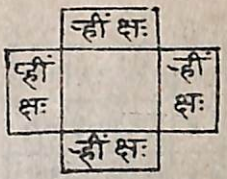

कुमकुम से भोजपत्र पर लिखकर स्त्रियों के हाथ में बांधने से जीवित पुत्रिणी होती हैं।

१०९

गोरोचन, कुमकुम लाख के रंग से साध्य का नाम लिखकर पञ्चामृत में स्थापन करे मृतवत्सा पुत्रिणी होगी

१११

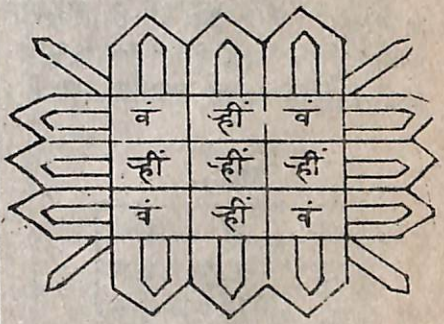

गोरोचन कुमकुम से भोजपत्र पर साध्य का नाम लिखकर कण्ठ शिरमें धारण करने से मृत अपत्या, वंध्या, अपुत्रिणी के सब अरिष्ट दूर होते हैं और ज्वरनाश होता है।

११२

०८	०१	२२	१९
१९	२२	००४	०५
०२	०७	१७	१४
२१	२०	०९	०३

यह यन्त्र गोरोचन से भोजपत्र पर लिखकर बालक के कण्ठ में बाँधने से बालक का रोना थम जाता है।

११४

गोरोचन और कुमकुम से भोजपत्र पर लिखकर धारण करने से महा-रक्षा होती है, यह गणपति विद्या है।

११६

ॐ	हूं	ॐ
हूं	ॐ हूं देवदत्त	हूं
ॐ	हूं	ॐ

गोरोचन से भोजपत्र पर लिखकर धारण करने से सब उपद्रवों से रक्षा होती है।

११३

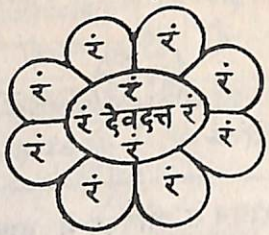

यह यन्त्र गोरोचन से लिखकर धारण करने से वैश्वानर मुखी रक्षा बालकों के सब ग्रहों का नाश होता है यह बालग्रहों से तिरस्कृत हुओं की परम रक्षा है।

११५

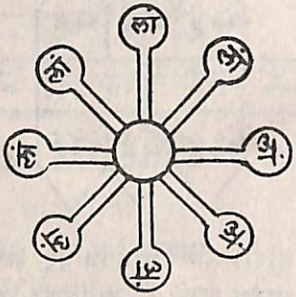

गोरोचन से भोजपत्र पर लिख धारण करने से ज्वर पिशाच डाकिनी कुग्रह अपस्मार आदि शीघ्र नष्ट हो जाते हैं। इसमें (लां) बीज है।

११८

गोरोचन कुमकुम से भोजपत्र पर लिखकर बाहु या कण्ठ में धारण करने से डाकिनी, प्रेतबाधा, ज्वरनाश होता है। यह अमृत विजया विद्या है।

११८

ह्रीं	ह्रीँ	ह्रीं
ह्रीं	देवदत्त	ह्रीं
ह्रीं	ह्रीं	ह्रीं

गोरोचन से भोजपत्र पर साध्य का नाम लिखकर धारण करने से उसके सब ज्वर नष्ट होते हैं।

१२०

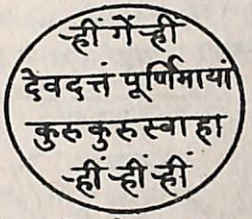

गोरोचन से भोजपत्र पर लिखकर दक्षिण भुजा में धारण करने से क्षेम और रक्षा होती है।

१२२

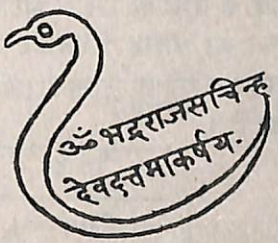

गोरोचन से भोजपत्र पर साध्य का नाम लिखकर इस विद्या से अभिमन्त्रित कर (सुखनामापिशाची अमुकं हत हत पच पच शीघ्रंवशमानय स्वाहा) संपुट में स्थापन कर जपने से बन्धन छूट जायगा।

११९

गोरोचन कुमकुम से भोजपत्र में लिखकर भुजा में धारण करने से अपमृत्यु दूर होती है। मृत्युंजयाय नमः यह सिद्धिदायक मन्त्र है।

१२१

श्मशान के अङ्गार से श्मशान के चैल वस्त्र से लिखकर उस स्थान में रख दे एक रात्रि में उच्चाटन होगा।

१२३

काक और उल्लू के रक्त से साध्य का नाम लिखकर कौए के गले में बाँधकर छोड़ दे तो देवताओं का भी उच्चाटन हो जायगा यह सत्य है।

१२४

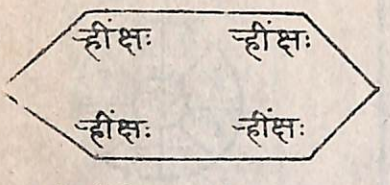

इसे गोरोचन से भोजपत्र पर लिख कर ग्रीवा या शिखा में धारण करने से निश्चय बन्धन से मुक्ति होगी।

१२६

हलदी हरताल से शिलापट्ट पर लिखकर अधोमुख रख दे बन्धन से मुक्त होगा।

१२८

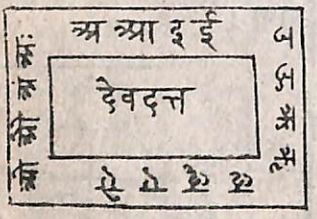

गोरोचन से भोजपत्र पर लिखकर शिखा में बांधने से बन्धनमुक्त होता है।

१२५

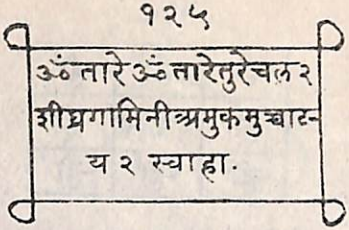

श्मशान के वस्त्र, विष, राई, धतूरा लवण और निम्ब से साध्य का नाम लिखकर श्मशान में गाडने से उसका उच्चाटन होता है। इसमें सन्देह नहीं, ॐ तारे ॐ तारे ॐ तुरे स्वाहा। यह मन्त्र है।

१२७

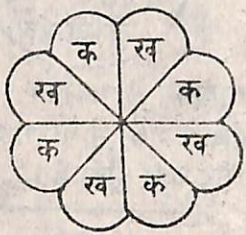

बहेड़े के पत्रों के रस से भोजपत्र पर साध्य का नाम लिखकर मूत्र में स्थापन करने से उसका उच्चाटन होता है।

१२९

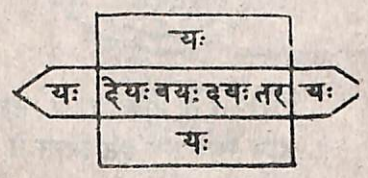

बहेड़े के पत्र के रस में भोजपत्र पे साध्य का नाम लिखकर मूत्र में डा तपाने से शीघ्र उच्चाटन होता

१३०

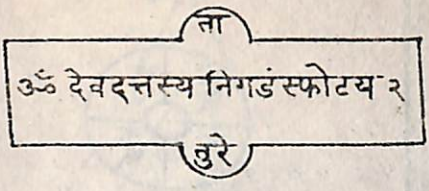

गोरोचन कुमकुम से भोजपत्र पर लिखकर शङ्ख संपुट में स्थापन कर त्रिकाल संपूज्य शिर में धारण करने से निगड-भंजन होगा।

१३२

हरताल से पीपल के पत्र पर लिखने से उसका उच्चाटन होगा।

१३४

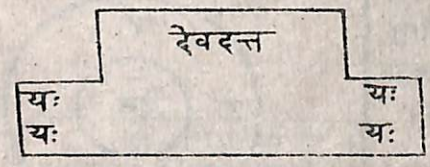

रक्त से ध्वज पीठ पर लिखकर काक के गले में बांधकर काक को छोड़ दे उसका उच्चाटन होता है।

१३१

उलूक के रुधिर से ध्वज- वस्त्र पर पक्षलेखनी से लिख काग के गले में बाँधकर छोडनेसे उच्चाटन होगा।

१३३

बतूरेके पत्र या ध्वज-वस्त्र में कौए के रक्त से साध्य का नाम लिखकर कौए के गले में बाँध पश्चिम दिशा में प्रेषण करने से उच्चाटन होगा।

१३५

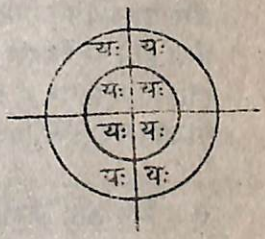

बहड़े के पत्तों के रस से भोजपत्र पर साध्य का नाम लिखकर गधे के मूत्र में डालकर तपाने से उच्चाटन होगा।

१३६

भोजपत्र पर काक उलूक के रुधिर से लाक्षा रस से जिस दो का नाम लिखकर विष में स्थापन करे उनका विद्वेषण होगा।

१३८

विष और धतूरे के जल से कौआ और उलूक लिखे इनका जैसा वैर है वैसा हो। ॐ देवदत्त यज्ञदत्त योस्तु स्वाहा। एक घर में नित्य जप कर भोजपत्र पर लिखे विद्वेषण होगा।

तथा विष और बिडाल के रुधिर से श्मशान के अङ्गार से साध्य का नाम लिखकर काकोलूकीय यादृशं वैरंतादृशं वैरं देवदत्तयज्ञदत्तयोर्भवतु स्वाहा काकउलूक भोजपत्र पर लिखे विद्वेषण होगा।

१३७

आक के पत्ते के रस में भोजपत्र पर साध्य का नाम लिखकर मधु में स्थापन करे उसका उच्चाटन होगा।

१३९

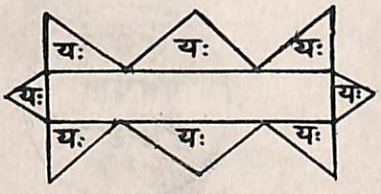

बहड़े के रस या खरमूत्र से भोजपत्र पर साध्य का नाम लिखने से उसका उच्चाटन होगा।

१४०

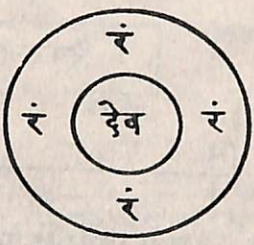

चीते के फल के रस से भोजपत्र पर साध्य का नाम लिखकर आक की नलिका में स्थापन करने से ज्वर हो।

१४१

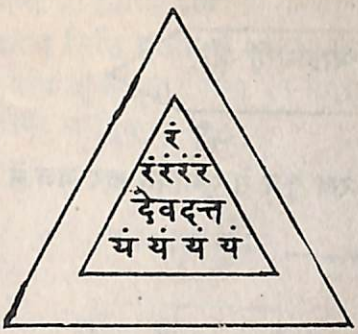

कपिला के दूध से साध्य का नाम लिखकर कहीं गुप्त स्थान में रखने से ज्वर होगा।

१४२

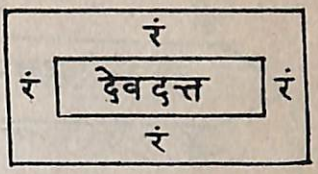

चित्रक पुष्प के रस से भोजपत्र पर लिखकर आक की नलिका में रखने से तत्काल ज्वर होता है।

१४३

नीम के रस से यन्त्र पर लिखकर गाड़ने से शत्रु का गात्र संकोच नहीं होगा।

१४४

मृतपिधान कपॅट, में अर्थात् मरे पुरुष के वस्त्र पर रक्त से लिखकर वायव्य दिशा में डालने से वैरी भ्रमित होता है।

१४५

	ह्रीं	ह्रीं	ह्रींसां ह्रीं ह्रीं	ह्रीं
सां		ॐ	ह्रींदेॐ ह्रींव ॐ ह्रींद ॐ ह्रींत ॐ ह्रीं	सां
	ह्रीं	ह्रीं	ह्रीं सां ह्रीं ह्रीं	ह्रीं

सहिजना, विष, रुधिर और राई को एकत्र कर साध्य का नाम लिखकर सहिजने की नलिका में डालकर तपाने से वह ज्वर-ग्रसित होता है। अथवा उपरोक्त वस्तुओं में राई भी मिलावे। यह अनुभव किया है।

१४६

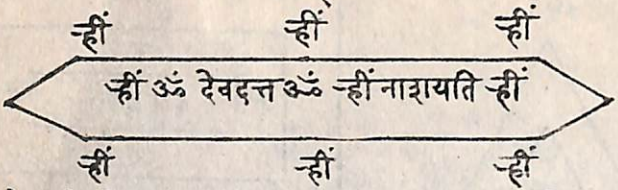

गोरोचन से भोजपत्र पर लिखकर पात्र में रख दूध से प्लावित कर जल में डाल देने से शत्रु की शान्ति होती।

१४७

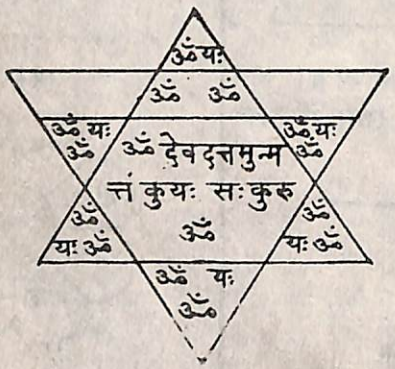

धतूरे के रस और काक के रुधिर से धतूरे के पत्र पर लिखकर नीम की शाखा में वायव्य दिशा में धारण करने से उन्मत्तीकरण होता है। यह अनुभव किया हुआ सत्य है।

१४८

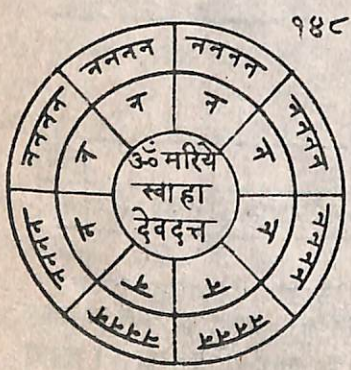

भोजपत्र से इष्टका, हरिद्रा, हरिताल से साध्य का नाम लिखकर प्रच्छन्न रूप से स्थापन करने से वह नष्ट और निकालने से स्वस्थ होगा।

मन्त्र और यन्त्र दोनों हो के करने से शीघ्र सिद्धि होती है। निजनिज विधि के अनुसार मन्त्र को समझ लेना चाहिए।

१५०

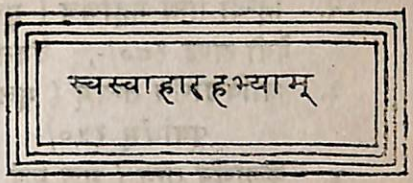

१४९

पाताल यंत्र.

साध्य के रक्त से शत्रु का नाम भोजपत्र पर लिखकर सकोरे में डाल ज्वलित अग्नि में स्थापन करने से उसी समय शत्रु नष्ट होगा।

१५१

वालुका यंत्र.

दोलायंत्र

१५२

कच्छप यंत्र १५३

१५५

मट्टीके पात्रमें

१५४

भूधरयंत्र

हमारे प्रमुख प्रकाशन

तन्त्र मन्त्र सम्बन्धी

१. मन्त्र महोदधिः (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) मूल्य १७५/-
२. हिन्दी मन्त्र महार्णव (मूल एवं हिन्दी अनुवाद)
देवी खण्ड १८०/-, देवता खण्ड १७५/-, मिश्र खण्ड १००/-
३. श्रीविद्यार्णव तन्त्रम् (मूलमात्र)
पूर्वार्धम् १५०/- उत्तरार्धस्य प्रथमो भागः - १५०/-
४. कुलार्णव तन्त्र (मूल एवं अंग्रेजी अनुवाद) ७५.००
५. नारदपञ्चरात्रम् (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) मूल्य : १००/-
६. धनदारतिप्रिया तन्त्र (मूल एवं हिन्दी अनुवा) मूल्य : ५/-
७. मातृकाभेद तन्त्र (मूल एवं संस्कृत टिप्पणी सहित) १५/-
८. त्रिपुरासार समुच्चय (नागभट्टकृत एवं गोविन्दाचार्य की संस्कृत टीका) ८/-
९. वृहत् तन्त्रसार (मूलमात्र) मूल्य : १००/-
१०. सप्तशतीसर्वस्वम् मूल्य : ६०/-
११. त्रिपुरातापिन्युपनिषद् एवं त्रिपुरोपनिषद् मूल्य : ३/-
१२. हनुमद्वाडवानल स्तोत्र, हनुमल्लांमूलास्त्र स्तोत्र एवं हनुमान साठिका मूल्य : २/-
१३. शिवस्वरोदय (मूल एवं अंग्रेजी अनुवाद सहित) १६/-
१४. शनिस्तोत्रावलि ३/-
१५. वामकेश्वरीमतम् (मूल एवं अंग्रेजी अनुवाद सहित) १५/-
१६. कौलज्ञाननिर्णय (मूल एवं अंग्रेजी अनुवाद सहित) ५०/-
१७. डामर तन्त्र (मूल एवं अंग्रेजी अनुवाद) २५/-
१८. डामर तन्त्र (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) १८/-
१९. मन्त्र रामायण (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) १५/-
२०. कामरत्न तन्त्रम् (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) मूल्य पेपर बैक ३०/- सजिल्द मूल्य ३५/-

हनुमान लहरी १.००

अद्भुत रामायण (महिष वाल्मीकि कृत) सजिल्द २५.००
पेपर बैक २०.००

धनवन्तरि ग्रन्थमाला

१. वङ्गसेन संहिता (मूल हिन्दी अनुवाद एवं परिशिष्ट सहित) मूल्य १६५.००
२. हारीत संहिता (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) मूल्य : ८०/-

कामरत्न तन्त्रम